ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

हिन्दी व्यंग्य परम्परा और उसकी दिशा

डॉ. (श्रीमती) सरोज एस. घोड़श्वर
शास. कमला नेहरू कन्या महाविद्यालय, बालाघाट

जीवन सीधी समाट सरल रेखा सा नही होता जाने कितनी वक्र रेखाए आड़े–तिरछे रूपों में आकर उसे काटती हैं और तब इन रेखाओं से जाने कितनी रेखाऐं गढ़ती कोण बनते है। एक–एक से कोई कोण समकोण होता है तो किसी दूसरी रेखा का एकल इसकी पैदा होती है। जीवन को देखने की यही दृष्टि और दृष्टिकोण व्यग्ंय की पृष्ठभूमि बनाता है। किसी की सरलता से तथाकथित चतुर कहलाने वाला यदि स्वार्थ सिद्ध कर लेता है तो इस क्रिया व्यापार को तटस्थ भाव से देखने वाले ,जो तीसरी त्रिर्यक रेखीय दृष्टि है वही व्यंग्य है। व्यंग्य हिन्दी साहित्य में जिस तेजी के साथ अपने पंख पसारता आया है, उससे यह भी प्रकट होता है कि उसे अपने पंख फैलाने के लिए उतना विस्तृत आकाश भी मिलता है।

व्यंग्यकार जब किसी बात पर व्यंग्य कसता है, तब समाज का कोई भी अंग या कोई भी मनुष्य उसके चंगुल में आ सकता है। वह व्यंग्य किसी मनुष्य के पद या उसके कार्य से सम्बन्धित हो सकता है। जब उसके कार्य की अव्यवस्था, बुराई का व्यंग्य द्वारा पर्दाफाश होता है तो व्यंग्यकार के प्रति क्रोध उत्पन्न होता है पर व्यंग्यकार समाज की गंदगी दूर करने का काम करता है। ङ

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने व्यंग्य के संदर्भ में कहा है – व्यंग्य वह है जहां कहने वाला अधरोष्ठ में हंस रहा हो सुनने वाला तिलमिला उठा हो और फिर भी कहने वाले को जवाब देना अपने को और भी उपहासास्पद बना देना हो जाता है। [4]

अमृताराय जी ने व्यंग्य के संदर्भ में कहा है कि '' व्यंग्य पाठक को क्षोभ या क्रोध जगाकर प्रकारांतर से उसे अन्याय के विरूद्ध संघर्ष करने के लिए सन्नबद्ध करता है।'' [5]

पाठक व्यंग्यकार की कृति को पढ़ाकर उस समस्या या अन्याय के विरूद्ध प्रेरित हो उठता है। उसमें अन्याय के खिलाफ मुकाबले की शक्ति जागृत हो जाती है। इस प्रकार व्यंग्य समाज–सुधार का काम करता है। [6]

हरिशंकर परसाई जी कहते है कि व्यंग्य जीवन से साक्षात्कार करता है जीवन की आलोचना करता है, विसंगतियों, मिथ्याचारों और पाखण्डों का पर्दाफाश करता है जीवन के प्रति व्यंग्यकार की उतनी ही निष्ठा होती है, जितनी गंभीर रचनाकार की बल्कि ज्यादा ही वह जीवन के प्रति दायित्व का अनुभव करता है। जिन्दगी बहुत जटिल चीज है ––– अच्छा व्यंग्य सहानुभूति का सबसे उत्कृष्ट रूप होता है। [7]

रवीन्द्रनाथ त्यागी ने कहा है कि समाज की कुरीतियों का भण्डाफोड़ करने का कार्य व्यंग्य द्वारा ही हो सकता है। यदि उसमें हास्य भी समाविष्ट हो जाय तो रंग और भी तेज हो जायेगा। [8]

निष्कर्ष : व्यंग्य परम्परा की खोज करने वाले मूर्धन्य विद्वान ऋग्वेदी साहित्य का अनुशीलन कर सकते है या वैदिक साहित्य से यात्रा प्रारम्भ कर प्राकृतिक और अपभ्रंश साहित्य में से व्यतीत होते हुए मणि मुक्ताओं की तलाश कर सकते है। हिन्दी साहित्य में व्यंग्य लेखन की अपनी एक सम्रद्ध परम्परा है। आज हिन्दी में व्यंग्य लेखन अपनी लोकप्रियता के साथ चरमोत्कर्ष पर है। वैसे तो सही अर्थों में व्यंग्य लेखन के प्रति गहरी ललक आजादी के बाद ही देखने को मिली क्योंकि आजादी के बाद देश मे पैदा हुई विसंगतियों ने व्यंग्य को पनपने के लिए उपजाऊ भूमि प्रदान की जिसके फलस्वरूप साहित्य की सभी विधाओं मे व्यंग्य की पैठ हुई तथा एक समय ऐसा भी आया जब व्यंग्य को स्वयं एक विधा के रूप में स्वीकृति मिल गई। लेकिन इसका यह अर्थ कदापि नही लगाया जा सकता है कि हिन्दी में व्यंग्य लेखन की परम्परा महज कुछ वर्षों की देन है। हमारे यहां व्यंग्य लेखन की परम्परा उतनी ही पुरानी है जितना की हमारा साहित्य।

डॉ श्यामसुन्दर दुबे ने इस संदर्भ में कहा है कि '' यद्यपि रचना में पहले व्यंग्य का वही स्थान होता था जो भोजन में चटनी का और उसे एकत्रित वैचित्र्य की तरह ही जाना जाता था किंतु व्यंग्य के भाग्य ने पलटा खाया और वह अपनी स्वतंत्र कदकाठी पाने की हिम्मत जुटाने लगा। ''

हिन्दी साहित्य में आदिकाल और बाद में भी परम्परागत अर्थों से अपने को सर्वथा मुक्त न रख सका किंतु व्यंग्य का जैसा पैनापन कबीर में है, वह अन्यत्र नहीं। प्रथमतः कबीर ने ही सामाजिक और धार्मिक विडम्बनाओं और खोखली कर्मकाण्डगत नैतिक मान्यताओं की बखिया उधेड़ी। हिन्दू हो या मुसलमान बिना भेदभाव के कबीर सबकी खबर लेते है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी और डॉ. राम कुमार वर्मा ने कबीर साहित्य पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला है। कबीर के व्यंग्य वैशिष्ट्य पर निर्ममता के आरोप का सटीक समाधान करने में डॉ नगेन्द्र का कथन उपयुक्त है। '' कबीर में घृणा के साथ दया की मात्रा कम न हो। '' एक अंग्रेजी समालोचक में व्यंग्य की विवेचना करते हुए लिखा है कि इसका उद्देश्य मूर्खताओं की हँसी उड़ाना होता है – ये मुर्खताएँ बढ़ते – बढ़ते पाप का रूप धारण कर लेती है और व्यंग्य का उद्देश्य धार्मिक समखित हो जाता है। कबीर में ऐसा ही व्यंग्य मिलता है। यथार्थ, सत्यान्वेषण, तटस्थता और बेबाकी आदि गुणों के लिए हिन्दी व्यंग्य कबीर का मुखापेक्षी है। '' यही व्यंग्य की दिशा होनी चाहिए।

संदर्भित ग्रन्थ :–

1. हिन्दी व्यंग्य उपन्यास :– डॉ. राधेश्याम वर्मा– पृष्ठ 1–2
2. हिन्दी व्यंग्य कर्म एवं समकालिन परिदृश्य :– डॉ. विनय पाठक– पृष्ठ 13
3. श्री लाल शुक्ल के उपन्यासों में व्यंग्यात्मकता :– प्रो सुषमा कोंडे– पृष्ठ 16
4. कबीर, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी पृष्ठ 164
5. मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाऐं भूमिका :– अमृत नागर – पृष्ठ 05
6. सदाचार का ताबीज :– हरिशंकर परसाई – पृष्ठ 10
7. प्रतिनिधि व्यंग्य रचनाऐं :– रवीन्द्रनाथ त्यागी – पृष्ठ 380
8. लोकमत समाचार :– श्यामसुन्दर दुबे – पृष्ठ 13

An analytical study of Digital India Programme

Anubha Chaturvedi
Research Scholar, Department of economics, University of Allahabad, Allahabad

Abstract :- It is fact that The Digital India is result of many recent development, technologies and innovation. These change the lives of people and empower the society as well. The programme 'Digital India' proposed by honorable Prime Minister Mr. Narendra Modi. The main intension behind the programme is to construct well responsive and transparent system. It is Indian government Dream project to make country more digitized and knowledgeable economy. To stand equally with other nation India must be digitalize first. Every innovation has two effects one is beneficial and another is harmful, it is nature's fact that every advantage has its disadvantage, same the Digital India project also has little limitations, till the fulfillment of target. Hence, in this paper an effort has been made to understand Digital India: its limitations and opportunities. Digital India is a act where technologies and connectivity in form of internet and Wi-Fi will combine to improve the quality of life of people and influence all phases of governance. Digital India is the Government of India's initiative to make sure that all Government services are completely available to people electronically by maintaining proper internet facilities such as well internet infrastructure and increased internet connectivity.

Key Words :- Digital India, Digital Technology, e-governance, E-Kranti, Information technology.

Introduction :- Digital India programme is one of the foundation programmes of Indian Government, and was launched by the Government of India on July 1st, 2015. This campaign focusses on digital development of the country by providing the citizens with such facilities and services so that they are all connected to each other virtually and electronically. The aim is to provide the citizens with such digitally and electronically advanced means so that the rural areas are connected to the urban areas through network devices and services. The programme is designed to ensure that the

government services are accessible even to the poor and downtrodden people, through electronic means, thereby, fastening the rendering of services and improving the quality of life of even the lowest stratum of society. To accomplish the vision, steps are being taken to improve the digital infrastructure in the country and to increase the access to network devices through increased band width and advanced digital technologies. Initiatives are also being taken to increase the digital literacy of the population so that the majority of citizens become capable of operating digital gadgets and equipment. This will boost the generation and growth of employment opportunities in the country. To connect the whole country virtually, major innovations and advancements need to be done in technological field so that the country moves towards being a digitally empowered economy.

Indian economy is growing at a fast pace. It is ranked among the top fast developing economies in the world. The Indian economy takes 7th place among the largest economies when measured through nominal GDP and 3rd place when measured on the basis of PPP (Purchasing Power Parity). Due to the growing industrialisation in the country, it is considered one among the major G-20 economies. The average growth rate of the economy has been around 7% for the last two decades. In [1] The Indian economy has piqued the interest of the world because of the increased rate of development due to industrialisation & automation, increasing customer base due to population explosion and increase in ease of trade due to reduction in regulation & entry barriers.

Digital India Programme :- The programme contains tasks that target to make sure that govt. services are available to people digitally and people get advantage of the newest information and connections technological innovation. Gandhiji felt that 'India resides in its villages,' and technology will help the villages to grow and prosper. Digital libraries, online magazines, e-books can be made available for free which will further help in knowledge sharing. PM Modi rightly said in his speech in San Jose, "I see technology as a means to empower and as a tool that bridges the distance between hope and opportunity. Social media is reducing social barriers. It connects people on the strength of human values, not identities." Technology is a bridge indeed, a bridge that connects the hope that India's villages will be educated and aware to the opportunity of internet and access to information from across the world. 'Digital India' is not just an initiative but a need for this country, where majority of population still does not have access to the world of internet. The Digital India initiative seeks to lay emphasis on e-governance and transform India into a digitally empowered society. It is to ensure that government services are available to citizens electronically. Digital India also aims to transform ease of doing business in the country. The Department of Electronics and Information Technology (deitY) anticipates that this program will have a huge impact on the Ministry of Communication and IT. The program is projected at Rs 1, 13,000 crore which will prepare the country for knowledge-based transformation. It will focus on providing high speed internet services to its citizens and make services available in real time for both online and mobile platform. Modi's government is focusing on providing broadband services in all villages of the country, tele-medicine and mobile healthcare services and making the governance more participative.

Vision Areas of Digital India :- The Digital India programme is centred on three key vision areas:

- Digital Infrastructure as a Core Utility to Every Citizen
- Governance and Services on Demand
- Digital Empowerment of Citizens

Research Methodology :- This study is based on secondary data sources. The data for the present study has been collected from e journals, websites, research articles.

Objective :-

- To study about the digital India programme and its implementation.
- To study the prospective challenges about digital India programme.

Digital technologies influence almost all aspects of the economy and society. Hence the programme covers wider areas to make India a digitally empowered country. The Government has identified nine pillars for Digital India.

1. **Broadband Highways** :- Government aims to lay national optical fibre network in all 2.5 lakh gram panchayats. Department of Telecommunications (DoT) is the nodal Department for this project. A new deadline of 2018 has been set for providing broadband internet to all panchayats.

National Information Infrastructure (NII) would integrate the network and cloud infrastructure in the country to provide high speed connectivity and cloud platform to various government departments up to the panchayat level. The infrastructure components for broadband networks includes: State Wide Area Network (SWAN), National Knowledge Network (NKN), National Optical Fibre Network (NOFN), Government User Network (GUN) and the MeghRaj Cloud. DeitY will be the nodal Department for this project.

2. **Universal Access to Phones** :- Mobile phone coverage will be provided to all the remaining 55,619 villages in the country. The Department of Telecommunications will be the nodal department and project cost will be around Rs 16,000 Cr during 2014-18.

3. **Public Internet Access Programme** :- Common Services Centres (CSCs) will be strengthened and their number will be increased so that each Panchayat gets a CSC (total 250000 CSCs). CSCs would be made viable and multi-functional end-points for delivery of government and business services. DeitY would be the nodal department to implement the scheme.

4**. e-Governance** :– Reforming Govt. through technology: Digital technology will be used for the better delivery of government services. The government aims to improve processes and delivery of services through e-Governance with UIDAI, payment gateway, EDI and mobile platforms. School certificates, voter ID cards will be provided online (digi-locker). All databases and information should be in electronic form and not manual.

5. e-Kranti -Electronic Delivery of Services :- e-Kranti is an advanced e-governance programme to deliver governance services through electronic mode. It has 44 mission projects. The programme integrates the previous National E-Governance Plan. Public services related to health, education, farmers, justice, security and financial inclusion etc will be administered electronically under e-Kranti.

6. Information to all :- information related with governance and public services to citizens will be easily provided to citizens through digital platforms including social media.

7. Electronics, Manufacturing with a target Net Zero Imports :- This pillar of Digital India aims to promote the manufacture of digital technology devices especially electronics with the country. Manufacturing of electronics within India will be promoted with a target of net zero import by 2020. For this, several steps under the National Electronic Policy will be used. Taxation incentives, eliminating cost disadvantages, promoting incubators, clusters, skill development etc are some of them.

8. IT for Jobs :- This pillar focuses on providing skill and training to the youth for availing employment opportunities in the IT/ITES sector. There are eight components with specific scope of activities under this pillar: focusing on disadvantaged regions- rural areas and North East, training one crore students in IT/ITES Sector, training three lakh service delivery agents etc.

9. Early Harvest Programmes :- under this pillar, the Government will set up Wi-Fi facilities in all

universities and in public spaces across the country, eBooks will be provided to schools, email will be made the primary mode of communication, Aadhar Enabled Biometric Attendance System will be deployed in all central government offices etc.

Challenges of Digital India Programme :- The Digital India project, no doubt is one of the grandest projects till date because it embraces all the government machinery and departments in its fold; its aim is to create a truly participatory democracy with the use of digital technology; its target is to connect more than 120 crore Indians with their Government so that they could avail services and benefits of government services in real time and also get their grievances redressed in quick time.

But to implement this scheme is a great challenge before the Government; **firstly,** connecting 250000 Gram Panchayats through National Optical Fibre Network is not an easy task; it will require a lot of efforts and dedication from BSNL, the nodal agency for laying down the cables; **secondly,** improving IT literacy is a great task ahead because for the project to become successful, it is necessary that mass of people must know how to utilize the digital services; **thirdly,** security of data is very important because digital medium is still very unsafe and data vulnerability is a big issue specially in financial transactions; thus, internet data security is a big concern ahead; **fourthly,** making Digital India scheme known and creating an awareness among common masses about its benefits is also a great challenge.

Overall this great initiative will require great efforts from the entire government machinery and people concerned to make it successful.

Conclusion :- The Digital India initiative is the beginning of a digital revolution, once properly implemented; it will create numerous new opportunities for the citizens. However, the Digital India program success will associate with the regulatory framework. The Government completely ensures that these regulations create such an environment in which private organizations come in, work together and create efficient ecosystems. The Government role should be line with administration that is Maximum role of Governance and Minimum role of Government, with these efforts India will be digitally ready within three years.

Reference :-

- https://www.mygov.in/group/digital-india/
- http://digitalindia.gov.in/content/broadband-highways
- http://www.pwc.in/press-releases/2016/digitisation-in-industrial-sector-in-india-to-grow-to-65-percent-in-next-five-years.html. Date Accessed 04/04/2017.
- https://www.rbi.org.in/scripts/AnnualReportPublications.aspx?Id=1148. Date accessed 25/03/2017.
- https://economictimes.indiatimes.com/quantum-digital-vision-india-ltd/stocks/companyid-7975.cms

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

Reviewing the literature to study the viewer ad receptivity w.r.t. electronic media

Swati Jain*
*Research Scholar, IIPS, DAVV, Indore
Dr. Anshu Bhati**
**Sr. Assistant Professor, IIPS, DAVV, Indore

Abstract : Customers are being highly selective in perception of advertisements due to the advent of technological advancement, which resulted in various ad blocking devices and program recorder facilities. The ad avoidance is increasing day by day and is a growing concern for the marketers. Viewers' receptivity towards advertisements is noticed to be rolling unfavorably, affecting their purchase decisions. The receptivity of ads defines the viewer's acceptance of the advertisements which is influenced by several factors. Consumer personality is considered to be majorly affecting their ad reception. This study investigates the past findings to explore the viewer ad receptivity (specifically in electronic media like TV and Internet) so as to help marketers and retailers to take necessary actions in order to control ad avoidance and increase their sales. Age and gender were found to be affecting the receptivity. Lower age group people are highly receptive to ads that are exposed to them on usual basis like cars, food etc. The medium of ad exposure also controls the receptivity of consumers. Ads on tablets, smart phones and desktops are more prone to viewer ad reception than that of traditional media. The purpose of using a media varies for men and women, which influences their reception as well. Besides, the type of advertisement and the attitude of customer for a particular category of ad and the consumer personality, also affects the ad receptivity.

Keywords : Ad receptivity, consumer attitude, electronic media, ad avoidance, advertising.

Introduction : The advertising industry is speedily growing and so is the competition among the firms. To sustain the cut throat competition and maintain one's position in the market, it is of

utmost important to bring oneself in notice of the customers. This ensures the customer consideration for the brand while making the purchase decision.

Advertisements are one of the best tools to promote a product or service to the mass media simultaneously. But being noticed by the customers may not necessarily influence their purchases. People nowadays have become a way smarter and have learnt to ignore the advertisements, hindering their present state of mind. They are well aware of several means and methods of avoiding advertisements and thus wasting the efforts of the marketers. Even then, the marketers take strategic steps to ensure the ad exposure in the lives of the consumers.

It is the behavior of the consumer in general to undergo purposeful viewing of the ads and ignore what is unwanted or not relevant. Ad receptivity is the willingness to focus on a particular advertisement by the consumers. The reception of ads influences one's thinking and opinion for the product. It is the inclination to receive the advertisements. The openness to a particular idea is basically the receptivity of the people. The reception of advertisements is affected by several factors such as attitude towards the advertisements in general, the consumer personality traits, demographic factors like age, gender etc. Viewers of television and online advertisements are not always willing to focus or pay attention towards them. The reception may be favorable or unfavorable which in turn affects the purchase decision of the consumers.

Research methodology : For the purpose of this study, the works of past researchers have been analyzed to generate the understanding of the receptivity of advertisements. Several experts have undergone systematic studies related to the area and explored the varied phases of the receptivity.

Studies have been conducted in terms of factors influencing the customer receptivity, understanding the customer attitude towards ad reception and how can one combat the ignorance of advertisements and ensure the ad reception.

Researchers have performed several experiments with respect to different age groups, gender, medium of ad exposure and the like.

This study is an attempt to generate the understanding of the consumer attitude with respect to their receptivity towards ads specifically in electronic media. In this study, electronic mediums like television and internet have been included for analysis. Previous studies of researchers have been analyzed and discussed to assess the viewer's ad receptivity.

Review of literature : Naylor.P, (2015) revealed that the audiences can be categorized into 4 groups as per their advertising attitude. These groups are high receptivity, medium receptivity, low and no receptivity. This study states that the demographics variables do not impact the receptivity of the consumers. Gender, age, family size, or income is less likely to influence the ad receptivity of viewers. The major characteristics found to be affecting the receptivity is the consumer's personality. It is believed that most of the viewers have the understanding of value ad content.

The 2/3rd of TV viewing audience fall in the high and medium receptivity categories. They not only enjoy the ads but are also very much likely to share them with others. Their personality traits can be judged as relaxing and agreeable in nature. For them, ads are not inconvenient and they generally like advertisements. 1/4th of the people possess low receptivity of ads & dislike the presentation of ads. Even though they accept the advertising and show favorable attitude towards advertising, they tend to dislike the ads that are irrelevant. Hence they use the ad blocking facility available nowadays thereby indulging in ad avoidance.

Only 7% of the respondents can be considered as the true avoiders of advertisements.

These people make several attempts, follow all the possible ways and means to avoid advertisements and watch the desired content. Such viewers are headstrong and have suspicious nature. This compels them to respond unfavorably towards ad appeals specially those, which contain direct sales. It focuses on understanding the consumer and their personality so as to take preventive measures rather than connecting the receptivity with that of age, gender and family.

Price.R, (2015) state that the creative approaches are needed to be practiced to ensure the ad receptivity among consumers in all the digital media. On an average 16-45yr age people globally, spent 204 minute a day in seeing video (equally splitting b/w internet & TV media). 20 minutes are spent on tablet, 37 minutes on desktop while 45 minutes on smart phones. Digital media is exposed at higher rate of 42% among 16-24yr age group. As per the study, 50% negatively reported the preference of video ads on smart phone as compared to computers (46%) and tablets (45%). Live TV had the least unfavorable response of 30%. Mobile apps have been considered most preferred media for advertising through digital modes of communication.

Tucker.E, et al (2013) focused on the individual traits that influence people and form their receptivity towards advertisements specifically for ecological ads. It was revealed that those who are favorable in their attitude for the environment protection. The positive attitude towards the environment and the people having considerable awareness towards the subject matter are more prone to generate higher receptivity for ads as compared to other consumers. The receptivity is affected by the subject matter of the advertisements.

Taylor.D, Lewin.J, and Strutton.D, (2011) discusses the effectiveness of ads on SNS (social networking sites). It is believed that such (SNA) social networking ads can create impact on the minds of the consumer if it is accepted by them. The receptivity of ads on SNS is an important factor that decides the effectiveness of such ads. Excessive exposure of such commercials is often held responsible to create the negative attitude towards SNA. Such receptivity is affected by gender and age for social networking sites. There are several factors that affect the attitude toward SNA which includes self brand congruity, peer influence, informative, entertainment, quality of life, structure time, invasiveness and privacy concerns. Men and women differ in processing the advertising in general.

It is observed that the males generally surf the internet for leisure, functional purposes and entertainment. On the contrary, females use it for communication and interaction purposes. Hence, the perceived informativeness and the value of entertainment have comparatively weaker effects on female attitude than that of male. The other factors i.e. self brand congruity and peer influence put stronger influence on men's attitude towards SNA. Analyzing as per age groups, 19-24yrs age group were found to be influenced by the informativeness of the SNAs as compared to other age groups.

Kim.H, and Kim.Y, (2008) examined the impact of receptivity towards the advertising messages (RATM). The receptivity was analyzed for the shopping values desired by the customers. Further, it also assessed the moderation of such relationship through age, income, gender. Shopping values have been analyzed using six dimensions. These are the time cost saving, monetary cost saving, post sale customer support, energy cost saving, personal leisure experience and engaging store environment.

As compared to shoppers with low RATM, the shoppers who have high RATM have high perception for the value dimensions while making purchases. Young male customers are highly influenced by the relationship between receptivity to advertising monetary cost saving and post sale customer support. The relationship from the receptivity to ads to monetary cost saving

dimension is comparatively found to be at higher rate for those having high income.

The link from receptivity to engaging the outlet environment is found to be stronger for shoppers belonging to low and middle income groups. Awareness about RATM is of utmost important for advertisers and retailers. Retailers need to be aware of shopping dimensions that provide with the value to customers. Having knowledge regarding influence of dimensions for high RATM shoppers may aid them in designing customized ad messages accordingly.

Fulgoni.G, (2007) conducted a survey to understand the consumer receptivity in several media.18-34 yr age group are more receptive to ads on UGC sites as compared to 35-54yr age group and were found to be receptive to ads on such sites. The lower age group in the study is found to have high receptivity for "high fun" categories of products like movies/ music/ entertainment, apparel, food & beverages, consumer electronics etc. on the UGC sites.

On the contrary, they are less receptive to ads of such categories on traditional media. This age group prefer"high trust" categories (such as medication, financial services etc) on traditional media. This highlights the scope of UGC sites as the receptivity of the teenagers is high on this media comparatively.

Klassen.A, (2006) reveals that keeping the customers engaged with our advertisements is not that important as that of ad receptivity. The receptivity is the key concept that influences consumer purchase decision engagement is considered as the factor of receptivity of ads. Ad receptivity has been defined using four statements that correlate each other to form the concept of ad receptivity.

These statements are: customers paying attention towards a channel; customers are more interested to purchase products that are advertised on that channel, customer gather vital information; at least partly; customers make purchase decisions on the basis of the ads viewed.

The study was conducted among 2100 adults who rated the channels as per 4 factors that are favorite, useful, enriching and motivating. Ad receptivity is a primary concern concept where engagement is considered to be the outcome of ad receptivity.

Goetzl.D, (2002) discussed the study conducted to determine the advertisement receptivity of consumers. It exhibits the consumer receptivity for certain types of ads among certain media such as print, websites and television. Through mail, respondents' preference for media usage has been generated at the initial stage. Next, they have been presented with the list of about 85 categories of ads and were asked to rate their interest for such advertisements.

This reveals the customer receptivity for a particular product category and also, the media in which such product category ads can be most effective. Ads like food, cars and consumer electronics are generally more exposed to consumers. This results in the formation of pre-emptive perception of ads as helpful, non trustable, likeable, useless or irrelevant.

A report from the study, conducted by IAB partnering with Tremor Video and Millward Brown Digital, analyzed the ad receptivity for mobile video in terms of age of respondents. 18-34yr & 35-54yr age group are found to be more receptive to ads on smart phones as compared to desktop and tablet. The overall ad receptivity is of 18-34 yr is higher than 35-54 yr age group that is 39% and 34% respectively. Though the difference is just a minor gap, the lower age group people are found to be more receptive to mobile ads in general. The ads in the experiment included CPG, automotives and quick casual restaurants. 1800 respondents were included who use desktop, tablet or smart phones and were asked to present views on ad receptivity for such ads.

References :

Fulgoni.G, (2007) Younger Consumers Receptive to Advertising on User-Generated Content Sites. comScore Inc. https://www.comscore.com/ita/Insights/Blog/Younger-Consumers-Receptive-to-Advertising-on-User-Generated-Content-Sites

Goetzl.D, (2002) ADVERTISING RESEARCH: STUDY TO DETERMINE CONSUMER RECEPTIVITY. Adage. http://adage.com/article/news/advertising-research-study-determine-consumer-receptivity/52733/

Kim.H, and Kim.Y, (2008) Receptivity to advertising messages and desired shopping values. Journal of Marketing Communication , Volume 14, 2008 - Issue 5, Pages 367-385 https://www.tandfonline.com/doi/abs/10.1080/13527260701782168

Klassen.A, (2006) STOP WITH THE ENGAGEMENT ALREADY, IT'S ABOUT RECEPTIVITY Scripps Networks Study: Industry Focused on Wrong Metric. Adage. http://adage.com/article/media/stop-engagement-receptivity/113510/

Naylor.P, (2015) When It Comes to Advertising — It's Attitude, Not Income. Hulu. https://www.hulu.com/advertising/when-it-comes-to-advertising-its-attitude-not-income/

Price.R, (2015) Growing the receptivity of digital ads. Digital content next. https://.org/blog/2015/10/21/growing-the-receptivity-of-digital-ads/

Taylor.D, Lewin.J, and Strutton.D, (2011) Friends, Fans, and Followers:Do Ads Work on Social Networks?How Gender and Age Shape Receptivity. JOURNAL OF ADVERTISING RESEARCH. DOI: 10.2501/JAR-51-1-258-275

Tucker.E, et al (2013) Consumer Receptivity to Green Ads A Test of Green Claim Types and the Role of Individual Consumer Characteristics for Green Ad Response. https://www.tandfonline.com/doi/abs/10.1080/00913367.2012.10672454

Multiscreen Video Best Practices: Understanding the next wave of video ad receptivity. Millward Brown Digital IAB Tremor Video Cross Screen Study.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

THE IMPACT OF INFORMATION TECHNOLOGY ON DIGITAL LIBRARIES BY LIBRARIAN

Mr. DEVENDRA PRASAD KUSHWAH
Govt. Arts and Commerce College Harsud Dist. Khandwa (M.P)

ABSTRACTS :- Information is an indispensable for human development as air is essential for the survival of all living organisms on earth, including human beings. The pace of change brought about by new information technologies has a key effect on the way people live, work, and play worldwide. The increasing role played by information technology in the development of library services for an active reaction to the challenges of the information service providing. Digitalization attempts to discuss the fast development of Information Technology and its application in the library services. Today Digital libraries are equipped to accomplish the newly Information Technology based services. Digital Libraries and Information Technology enabled services fulfill the information needs of the users at the right time in the right place to the right person.

Key words :- Information Technology, Libraries, Electronic Library, Digital Library, EResources

INFORMATION :- Information is the key factor of any kind of research and development. Information is a fundamental resource which is essential for survival in today's competitive and wired world. The information itself and way it is accessed have undergone changes owing to the developments in information and communication technology. It is a vital ingredient for socioeconomic and cultural development of any nation or individual. According to Kemp" Information is considered as the fifth need of man ranking after air, water, food and shelter". 1. The

value of information in every human endeavor cannot be overstressed. Quick and easy access to every required information is a supreme importance especially for libraries 2. Information technology application and the techniques are being used by the Digital libraries for information processing, storage, communication, dissemination of information, automation etc. Further, origin of internet and the development of World Wide Web revolutionized the information communication technology. Recognizing the advantages application of information technology the Digital libraries are essential to provide the facilities to their user community.

Information is universal- it is known to all men in all languages, there may or may not be precise or apt word in a language to describe the term 'information' but surely it is there. We receive the information throughout the day. According to Shannon and Weaver 'Information is any stimulus that reduces uncertainty". Another definition by Ching- Chin Chen and Peter Hernon defines information as "all knowledge, ideas, facts, data and imaginative works of mind which are communicated formally and or informally in any format".

This information that is so vital to human life, where does it come from? An in-depth study of how information is generated would be a difficult task, but is it can be safely be concluded that research is one of the better known areas where information takes root. Most of what we know today is a result of research. The work of experts in the fields of science, technology, social science and the humanities continue to give birth to information that is beneficial to the whole society. The government, understanding the major role that R&D plays, also continues to pour funds into these fields as a result of which more and more information is generated- so much so that the world is being bombarded with information leading to the phenomenon termed 'information explosion'.

DIGITAL LIBRARIES :- With the advancement of information and communication technology, the rate of information explosion increases exponentially. Library digitization is nothing but the conversion of physical media of the library, i.e. books, periodical, articles, etc., into digital format (0 and 1 bit). Bits are the fundamental units of information in a computer system. Flexibility is one of the chief assets of digital information. As a result, libraries have been constantly facing the problems of space, escalation in the cost of books and journals, budget shrinkage, inability to provide multiple copies and most important is retrieval efficiency of user being endangered for want of information. The digital library contains digital representation of the object found in it. Digital library is popularly viewed as an electronic version of a library. To some extent, it simply means computerization of traditional libraries. According to Larson, defined the digital library as global virtual library the libraries of thousands of "networked electronic libraries." Networked electronic libraries describe the collection of various library resources to the network so that any user can access the resources anytime in anywhere.

According to the American Digital Library Federation, digital libraries are organizations that provide the resources, including the specialized staff, to select, structure, offer intellectual access to, interpret, distribute, preserve the integrity of, and ensure the persistence over time of collection of digital works so that they are readily and economically available for use by a defined community or set of communities.

The definition of a digital library can be given as a set of characteristics are as follows. The digital library is a collection of services, collection of information objects, supporting users with information objects, organization and preservation of those objects, availability directly or indirectly, and electronic/digital availability. The primary objective of digital library is to improve the access as well as it also includes the cost saving,

preservation, keeping peace with technology and information sharing.

Digital library challenges :- Creating "effective" digital libraries pose serious challenges for existing and future technologies. The integration of digital media into traditional collections will not be straightforward, like previous new media (e.g., video audio tapes), because of the unique nature of digital information, which is less fixed, easily copied, and remotely accessible by multiple users simultaneously. Some specific challenges are resource discovery, digital collection development, digital library administration, copyright and licensing, etc., library of congress specified various challenges for building an effective digital library, which are grouped as broad categories as follows.

Importance of Digital Libraries :- The advent of information technology has resulted in reducing the size of libraries. In fact, these small modern academic libraries have rich potential of information. It has been possible due to the digitization of information. The digital and electronic information is based on digitized data/information, which has gradually replaced paper-based records. As the visual information system in comparison to text-based information system is getting more and more popular these days, the traditional libraries are becoming Digital libraries as they are in the process of doing digitization of their documents and moving towards to become digital libraries. Internet has become an unavoidable requirement for every educational institution of higher learning.

Digital Libraries Creations :- One of the largest issues in creating digital libraries will be the building of digital collections. Digital imaging is an inter-linked system of hardware, software, image database, and access sub-system with each having their own components. Tools used for the digital library include several core and peripherals systems like hardware (such as scanners, computers, and data storage), software (image capturing and editing), network (data transmission), and display/printing technologies. Some of the important points to be considered in developing a digital library are as follows:

1. **Digital Collection** :- There are essentially three methods of building digital collections: (i) Digitization, converting paper and other media in existing collections to digital form (ii) Acquisition of original digital works created by publishers and scholars. Example items would be electronic books, journals, and datasets. (iii) Access to external materials not held in-house by providing pointers to websites, other library collections, or publishers' servers.
2. **Access to External Digital Collection :-** The digital libraries can obtain access permission to digital collection provided by external sources like institutions, resources of the libraries, electronic journal through on-line access like Elsevier, ACM, etc., which provides their journals on-line through websites.
3. **Access to Digital Information Available on the web** :- WWW is the repositories of information and one of the important services of the internet. www.edoc.com, mel.library.mi.us, www.inflibnet.ac.in, etc., are the important portal sites or gateways that provide access to electronics resources. In this respect, we can say that digital libraries can provide access to electronic resources through library home page.
4. **Conversion of Print to Digital :-** Mainly scanning and use of OCR programs and re-keying of data are the two important methods for converting the print to digital resources. Some of the technical requirements of the digital image processing include hardware (computer, scanner, input/output devices), software (image capturing, data compression/decompression), network (for transferring information for resource sharing), and display technologies. All the above components are the important machines and tools needed for digitization.

INFORMATION TECHNOLOGY :- Information Technology (IT) is a business sector that deals with computing, including hardware, software,

telecommunications and generally anything involved in the transmittal of information or the systems that faciliate communication.

Stands for "Information Technology," and is pronounced "I.T." It refers to anything related to computing technology, such as networking, hardware, software, the Internet, or the people that work with these technologies. Many companies now have IT departments for managing the computers, networks, and other technical areas of their businesses. IT jobs include computer programming, network administration, computer engineering, Web development, technical support, and many other related occupations. Since we live in the "information age," information technology has become a part of our everyday lives. That means the term "IT," already highly overused, is here to stay.

IT is short for Information Technology and is pronounced as separate letters. IT is the broad subject concerned with all aspects of managing and processing information, especially within a large organization or company. IT is generally not used in reference to personal or home computing and networking.

APPLICATION OF INFORMATION TECHNOLOGY IN LIBRARIES :- The Digital libraries is the main information centre which can make use of the fat development IT for the benefits of mankind as a whole. The librarian's preference of IT should include all those technologies which are expected to be used in the Digital libraries activities/ operations and other library services for collection, processing, storage, retrieval and dissemination of recorded information, the fast developing information technologies have showered almost every areas of application including Digital libraries. In case of libraries, these are good use in the following environments.

1. Library Management: Library management includes the following activities which will certainly be geared up by the use of these fast IT developments: Classification, Cataloguing, Indexing, Database creation, Database Indexing.
2. Library Automation: Library automation is the concept of reducing the human intervention in all the library services so that any user can receive the desired information with the maximum comfort and at the lowest cot. Major areas of the automation can be classified into two -organization o f all library databases and all housekeeping operations of library.
3. Library Networking: Library networking means a group pf Libraries and information Centres are interconnected for some common pattern or design for information exchange and communication with a view to improve efficiency.
4. Audio-Video Technology: It includes photography, microfilms, microfiches, audio and tapes, printing, optical disk etc.
5. Technical Communication: Technical Communication consisting of technical writing, editing, publishing, DTP systems etc.

ADVANTAGES AND DISADVANTAGES OF INFORMATION TECHNOLOGY :- All computer based systems should be user friendly and should satisfy as many of the following factors as possible:

Some of the advantages of information technology include :

a. Easy to gather different library activities.
b. Collaboration and creation of library networks.
c. Avoid repetition of efforts within a library.
d. Increase the range of services offered.
e. Save the time of the users.
f. Increases efficiency.
g. Speedy and easy access of information.
h. Improves the quality of library services.
i. Enhance the knowledge and experience.
j. Integration within the organizations.
k. Improve the status of the library.
l. Improve the communication facilities.
m. More stable.
n. Helps to attract the users.

o. Remote access to users.
p. Round the clock access to users.
q. Access to unlimited information form different sources.
r. More up to date information.
s. Information flexibility to the users.
t. Reforming and combining of data from different sources.
u. Reduce the workload of the library staff.

Some disadvantages of information technology include :

a. Insufficient funds.
b. Operational costs are exceeding year by year.
c. Inadequate trained staff.
d. Unemployment.

CLASSIFICATION OF INFORMATION TECHNOLOGY BASED SERVICES :- Information technology based services can organize on the basis of three main criteria.

Apparatus and Amenities :- The equipments and facilities available in the library are illuminating in the following headings.

1. **Computers :** Computer-based technologies have become dominant forces to shape and reshape the products and services the academic library has to offer. The success of the IT enabled services in the library is based on the efficiency of the equipment provided in the library i.e. most modern technology, not on the basis of number of equipments.
2. **OPAC :** An Online Public Access Catalog (OPAC) is an online database of materials held by a library or group of libraries. Users search a library catalog principally to locate books and other material physically located at a library.
3. **Union Catalogue :** A union catalog is a combined library catalog describing the collections of a number of libraries. Union catalogs have been created in a range of media, including book format, microform, cards and more recently, networked electronic databases. Union catalogs are useful to librarians, as they assist in locating and requesting materials from other libraries through interlibrary loan service.
4. **CD-ROM :** Presents a state-of-the-art review of the applications of CD-ROMs in academic libraries, embracing all aspects of library involvement and staffing implications. Concludes that CD-ROM is having a huge impact on the way academic libraries function and the services they offer to their users.
5. **Scanner :** In computing, an image scanner—often abbreviated to just scanner is a device that optically scans images, printed text, handwriting, or an object, and converts it to a digital image.. Mechanically driven scanners that move the document are typically used for large-format documents, where a flatbed design would be impractical.
6. **RFID :** Radio frequency identification is a term used for technologies utilizing radio waves for identifying individual items automatically. The most common way is storing a serial number identifying a product and related information on a microchip attached to an antenna. RFID is used very similar to bar codes.
7. **Photocopy :** A photocopier is a machine that makes paper copies of documents and other visual images quickly and cheaply. Most current photocopiers use a technology called xerography, a dry process using heat. Photocopying is widely used in library.
8. **Printing technology :** In computing, a printer is a peripheral which produces a text and/or graphics of documents stored in electronic form, usually on physical print media such as paper or transparencies.
9. **Barcode :** A barcode reader (or barcode scanner) is an electronic device for reading printed barcodes. Like a flatbed scanner, it consists of a light source, a lens and a light sensor translating optical impulses into electrical ones. Additionally, nearly all barcode readers contain decoder circuitry analyzing the barcode's image data provided by the sensor and sending the barcode's content to the scanner's output port.

Customer Services :

1. **Document delivery services :** The Document Delivery Service (DDS) delivers copies of journal articles and book chapters from participating Libraries. Fees apply for most Document Delivery Services. To fulfill the information needs of the end user through information/document supply is a document delivery service. This service is provided on No Profit - No Loss Basis and Expected to be prompt.
2. **Interlibrary loan :** Inter library loan means a cooperative arrangement among libraries by which one library may borrow material from another library. In other words a loan of library materials by one library to another library.
3. **Indexing and abstracting services :** a method which is used to retrieve information form a table in memory or a file on a direct access store or the art of compiling an index. The preparation of abstracts, usually in a limited field, by an individual, an industrial organization of r restricted use or a commercial organization: the abstracts being published and supplied regularly to subscribers. Also the organization producing the abstracts. Such services may be either comprehensive or selective.
4. **CAS :** The purpose of a current-awareness service is to inform the users about new acquisitions in their libraries. Public libraries in particular have used display boards and shelves to draw attention to recent additions, and many libraries produce complete or selective lists for circulation to patrons. Some libraries have adopted a practice of selective dissemination of information.
5. **SDI :** Selective dissemination of information ("SDI") was originally a phrase related to library and information science. SDI refers to tools and resources used to keep a user informed of new resources on specified topics. Selective Dissemination of Information (SDI) was a concept first described by Hans Peter Luhn of IBM in the 1950's.
6. **E-Electronic services and e- resources :** The important fact is convincing many libraries to move towards digital e-resources, which are found to be less expensive and more useful for easy access. This is especially helpful to distant learners who have limited time to access the libraries from outside by internet access to commonly available electronic resources, mainly CD-ROM, OPACs, E-Journals, E-Books, ETD and Internet, which are replacing the print media.
7. **Digital library :** A digital library is a library in which collections are stored in digital formats and accessible by computers. The digital content may be stored locally, or accessed remotely via computer networks. A digital library is a type of information retrieval system.

Electronic Sources :

1. **Audiovisual materials :** The Audiovisual Collection contains a wide range of audiovisual material to support the research and study needs of staff and students.
2. **Internet :** With the advent of digital revolution, communication has become easier and faster and decision are mad instantaneously. The internet which is the latest among the superhighways has cut down the distance and made it easier to have access to information to all people at all places and at all the times.
3. **Library website :** Library website helps to recognize the facilities and information sources available in the library. In most of the library website online catalogue is included. Online catalogue helps to ascertain a client whether the information is available in the library.
4. **Database :** A database is an organized collection of data for one or more purposes, usually in digital form. The data are typically organized to model relevant aspects of reality, in a way that supports processes requiring the information.

CONCLUSION :- In the Technological era has already begun and we the Digital libraries professionals have to express our identity by acquiring the requisite knowledge and skills and providing the right information to the user at the right time, which in fact has been our motto from ever since. Utilization of Information Technology in present Digital libraries is optimistic to gain right information at the right time in the right place and at the right cost. Information Technology helps to progress the rank of the library and it condense the work stack of the Digital library professions. Information Technology has broken the worldwide boundaries, new apparatus and methods help to provide better services to our clients.

Reference :-

1. Mensah, S. O. (November, 2016). THE IMPACT OF SOCIAL MEDIA ON STUDENTS' ACADEMIC PERFORMANCE- A CASE OF MALAYSIA TERTIARY INSTITUTION. International Journal of Education, Learning and Training , 14-21.
2. MISHRA, R. K. (May 2016). DIGITAL LIBRARIES: DEFINITIONS, ISSUES, AND CHALLENGES. Innovare Journal of Education , 1-3.
3. Siddiqui, S. (2016). Social Media its Impact with Positive and Negative Aspects. International Journal of Computer Applications Technology and Research , 71-75.
4. Kumar, C. R. (Jul-Sep 2015). Social networks impact on Academic Libraries in Technology Era. International Journal of Library and Infomation Studies , 101-108.
5. Kenchakkanavar, A. Y. (Mar 2015). Facebook and Twitter for Academic Libraries in the Twenty First Century. International Research: Journal of Library & Information Science , 162-173.
6. Owusu-Acheaw, M. (2015). Use of Social Media and its Impact on Academic Performance of Tertiary Institution Students: A Study of Students of Koforidua Polytechnic, Ghana. Journal of Education and Practice , 94-101.
7. Paul, Kumarjit. (2014). E-Learning and E-Publishing: Major Issues and Challenges to the Library Professionals in Digital Era. In: Current Trends of Libraries in the ICT era. (Eds: Vijay Parasar and Mohan Lal Vishwakarma), Research India Publications, New Delhi, pp 133-141. (ISBN 978-93-84144-08-1)
8. Saxena, A. (Dec.2013). IMPACT OF MOBILE TECHNOLOGY ON LIBRARIES: A DESCRIPTIVE STUDY. International Journal of Digital Library Services , 1-58.
9. Rubhina Bhatti(2012). Internet Use among Faculty members in the Changing Higher Education Environment at the Islamia University of Bahawalpur, Pakistan. , Library Philosophy and Practice (e-journal), Paper 383.
10. Paul, Kumarjit. (2012). Application of ICT in college libraries of Karimganj district, South Assam: A survey. (Doctoral dissertation). Assam University, Silchar.
11. Thaskodi S(2012) Use of E-Resources by the students and Researchrs of Faculty of Arts, Annamalai University, International Journal of Library Science, Vol.1. No.1. P.1-7.
12. Vijayakumar, A. (Dec. 2011). APPLICATION OF INFORMATION TECHNOLOGY IN LIBRARIES: AN OVERVIEW. INTERNATIONAL JOURNAL OF DIGITAL LIBRARY SERVICES , 144-152.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

Managing your portfolio

Dr. Sanjay Kumar Dhanwani
Assistant Professor (Commerce), Govt.TCL PG College Janjgir Dist. Janjgir Champa (C.G.)

Abstract :- A portfolio can be defined as different investments tools namely stocks, shares, mutual funds, bonds, real estate, cash all combined together depending specifically on the investor's income, budget, risk appetite and the holding period. It is formed in such a way that it stabilizes the risk of non performance of different pools of investments. Portfolio Management is defined as the art and science of taking decisions about the investment mix and policy, matching investments to objectives, asset allocation for individuals and institutions, and balancing risk against performance. In the current scenario where there is quality money in the markets, portfolio management is indeed a preferred method of making investments. With the range of products available across different schemes there is something to offer for every individual as per the different criterions defined. This is one of the highly researched, tracked and appropriate methods of investment giving exposure across different options available. In these days of computers and the internet, monitoring your portfolio has never been easier. Even if you don't have an internet dealing account, you can still see how your shares are performing..

Keyword :- Portfolio, investments, monitoring, valuations, organiser.

Introduction :- Smart, disciplined, regular investment in a portfolio of diverse holdings, can yield good long-term returns for retirement and provide additional income throughout an investor's working life. An often stated reason for

not investing is a lack of knowledge and understanding of the stock market. This objection can be overcome through self-education and step-by-step through the years, as an investor learns by investing. The best results are achieved through concentration, by putting your stocks in a few baskets that you know well and watching them very carefully. This only serves to underline the fact that saving for retirement is a challenging process that requires careful planning and follow-through. Many people don't invest because it seems overly complicated. But if you want to build wealth, investing now is the easiest way to do so—and anyone can do it. Here are some basic steps to set up a simple, beginner investment portfolio that will make you money while you sleep.

Diversification :- Select stocks across a broad spectrum of market categories. This is best achieved in an index fund. Invest in conservative stocks with regular dividends, stocks with long-term growth potential, and a small percentage of stocks with better returns, along with higher risk potential. If you're investing in individual stocks, don't put more than 4% of your total portfolio into one stock. That way, if a stock or two suffers a downturn, your portfolio won't be too adversely effected. Certain AAA rated bonds are also good investments for the long term, either corporate or government.

Keep Costs to a Minimum :- Invest with a discount brokerage firm. Another reason to consider index funds when beginning to invest is that they have low fees. Because you'll be investing for the long-term, don't buy and sell regularly in response to market ups and downs. This saves you commission expenses and management fees, and may prevent cash losses when the price of your stock declines.

Discipline and Regular Investing. Make sure that you put money into your investments on a regular, disciplined basis. This may not be possible if you lose your job, but once you find new employment, continue to put money into your portfolio.

Asset Allocation and Re-Balance :- Assign a certain percentage of your portfolio to growth stocks, dividend paying stocks, index funds and stocks with a higher risk, but better returns. When your asset allocation changes (i.e., market fluctuations change the percentage of your portfolio allocated to each category), re-balance your portfolio by adjusting your monetary stake in each category to reflect your original percentage.

Reassess Your Expenses and Make Changes Where Possible :- If your lifestyle, income or fiscal responsibilities have changed, it may be a good idea to reassess your financial profile and make adjustments where possible, so as to change the amounts you add to your retirement nest egg. For instance, you may have finished paying off your mortgage or the loan for your car, or the number of individuals for which you are financially responsible may have changed. A reassessment of your income, expenses and financial obligations will help to determine if you need to increase or decrease the amount you save on a regular basis.

Risk factor should always be considered :- If you are a new investor, you need to know that there are several types of mutual funds available in India based on catering one's risk appetite. One should select the scheme as per their risk-taking capacity.Remember, higher return expectation means associated risk. Mutual Funds possibly have an answer to all investment needs. Choose wisely, it is your money and your future,You should think about your exposure to equities in a simple way. If you're not comfortable with the value of your equity investments falling, then you shouldn't be in equities at all.

Consider Your Spouse :- If you are married, consider whether your spouse is also saving and whether certain expenses can be shared during your retirement years. If your spouse hasn't been saving, you need to determine whether your retirement savings can cover not only your expenses, but those of your spouse as well.

Work with an Experienced Financial Planner :- Unless you are experienced in the field of financial planning and portfolio management, engaging the services of an experienced and qualified financial planner will be necessary. Choosing the one who is right for you will be one of the most important decisions you make. It is always advisable to plan for long-term financial goals. One should take the help of a qualified mutual fund advisor. They can list down schemes (Liquid, Debt, Hybrid or Equity), option (growth, Dividend Payout or reinvestment), strategy (SIP, Lumpsum, STP, SWP, etc.) as per your preferences.

Have a balanced portfolio as per your age :- One needs to check the time horizon of their financial goal and invest accordingly. However, there is no hard-and-fast rule, but in general, as you get older and closer to retirement, you should reduce your exposure to stocks in order to preserve your capital. "As a rule of thumb, subtract your age from 100 to find the percentage of your portfolio that should be in stocks, and adjust this up or down based on your individual willingness to take risks.

Conclusion :- The purpose of doing an investment should be well defined – buying a car, buying a home, child education planning, wedding planning, retirement planning, etc. Even if you don't have any goal, you should be clear on how much wealth you are targeting to create and in what time frame.Disciplined, regular, diversified investment in a tax deferred or a potentially tax-free and smart portfolio management can build a significant nest egg for retirement. A portfolio with tax liability, dividends and the sale of profitable stock can provide cash to supplement employment or business income. Managing your assets by re-allocation and keeping costs, such as commissions and management fees, low, can produce maximum returns. If you start investing as early as possible, your stocks will have more time to build value. Finally, keep learning about investments throughout your life, both before and after retirement. The more you know, the more your potential portfolio return, with proper management, of course.

References :-

1.Hansen M and Nohria N, "What's your Strategy for Managing Knowledge?" Harvard Business Review, MarchApril, 1999,

2.Raja J, Ganesha (2000), "Mutual Funds, the Millennium Strategy", The Journal of The All India Management Association, Vol. 39(10), pp.42-47.

3..Rajan , Mehta (2003), "Indian Mutual Fund Industry: Challenging Issues", Chartered Financial Analyst, Vol. IX, pp. 32-33.
4.Singh, Chander, 2004, "Performance of mutual funds in India – an empirical evidence", ICFAI journal of applied finance December, pp. 81-98

5.Subbash C. Jain, "Marketing Planning and Strategy", South Western College Publishing, Sixth Edition, 2000.

6.Singh, B. K. and Jha, A.K. 2009, "An empirical study on awareness & acceptability of mutual fund", Regional Students Conference, ICWAI, pp. 49-55.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

सीकर जनपद में विपणन केन्द्रों का संगठन एवम् क्षेत्रीय विकास

अंजना कुमारी
शोधार्थी, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर
डॉ. धमेन्द्र सिंह चौहान
निर्देशक, विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

प्रस्तावना :– विनिमयजन्य आवश्यकता मानव समाजों को विनियम स्थलों के गठन हेतु प्रेरित करते है। सामान्यतः विभिन्न प्रदेशों के सीमावर्ती क्षेत्रों में या संसाधन सम्पर्क बिन्दुओं पर विनियम केन्द्रों की स्थापना होती है। जिस स्थल पर विनिमय की क्रिया सम्पन्न होती है उसे विपणन केन्द्र कहते है। प्रारम्भिक अवस्था में उत्पादक स्वयं आपस में वस्तुओं का आदान–प्रदान करते है और वे ही स्वयं उपभोक्ता भी होते है किन्तु जनसंख्या की वृद्धि एवम् उत्पादन की बढ़ती मात्रा से प्रत्येक उत्पादक के लिए यह सम्भव नहीं हो पाता कि वह स्वयं विपणन स्थल पर जाकर विनिमय की क्रिया सम्पन्न करे। अतः उत्पादन के क्षेत्र में ऐसी संस्थाएँ गठित होती है जो क्षेत्रीय उत्पादन का संकलन करे और उन्हें विपणन स्थल तक पहुँचायें। ये संस्थाएँ एक व्यक्ति या अनेक व्यक्तियों के सहयोग से बन जाती है। यह प्रक्रिया सभी उत्पादन क्षेत्रों में प्रारम्भ होती है। इसके अलावा विपणन स्थल पर वस्तुओं के हस्तान्तरण हेतु भी संस्थाओं का गठन आवश्यक हो जाता है। विनिमय स्थल पर मनुष्य क्रमशः स्थाई रूप से रहना प्रारम्भ करते है और इस तरह विपणन केन्द्र की स्थापना होती है। इस तरह वस्तुओं के उत्पादन, अधिशेष उत्पादन का संकलन, विनिमय स्थलों तक उनका स्थानान्तरण और विपणन स्थल पर वस्तुओं का हस्तान्तरण जैसी प्रक्रियाएँ भौगोलिक कारकों से प्रभावित होती है। विपणन कार्य एक शृंखलाबद्ध रूप में उत्पादन से उपभोग तक की प्रक्रियाओं को संगठित करता है।

संसाधन सम्पर्क बिन्दु किसी क्षेत्र के संदर्भ में परिधीय अवस्थिति को इंगित करता है। इन बिन्दुओं पर

जब विपणन क्रिया सम्पादित होने लगती है तो सम्बन्ध क्षेत्र के आन्तरिक भाग अर्थात् उत्पादक क्षेत्रों में व्यापक का उद्दीपन होता है अर्थात् परिधि पर स्थिति विपणन केन्द्रों की वस्तुओं की आपूर्ति हेतु आंतरिक क्षेत्रों में उत्पादन का संकलन होने लगता है। इस संकलन प्रक्रिया का लक्ष्य वस्तुओं का निर्यात होता है। खेतों के उत्पाद, दैनिक बाजार और कस्बे तथा नगरों के उर्ध्वाधर हस्तान्तरण के माध्यम के द्वारा परिधीय क्षेत्रों में से विपणन केन्द्रों तक पहुँचती है। वस्तु संकलन की इस प्रक्रिया में विक्रय एवम् क्रम की प्रक्रिया परस्पर समाहित हो जाती है। अर्थात् खरीदने वाला वस्तु का विक्रेता होता है क्योंकि वह वस्तु को अन्यत्र भेजने के लिए खरीदता है। इसे 'व्यापार के लिए व्यापार' कह सकते है। अतः आन्तरिक क्षेत्रों में विनिमय स्थलों का गठन होता है। दूसरी ओर इतर क्षेत्रों से कोई प्रदेश जब अपनी आवश्यकता की वस्तुएँ परिधीय क्षेत्रों में स्थित विपणन केन्द्र के माध्यम से खरीदता है तो उस वस्तु के आन्तरिक क्षेत्र में वितरण का प्रश्न उठता है। इस वितरण प्रक्रिया का लक्ष्य वस्तुओं को अन्तिम उपभोक्ता तक पहुँचाना होता है। ये वस्तुएँ सामान्यतः उर्ध्वाधर वितरण प्रक्रिया द्वारा वृहत् केन्द्रों एवं नगरों से हॉट–बाजार तक पहुँचती है। इससे आन्तरिक क्षेत्रों में स्थित विपणन केन्द्रों का विकास होता है। इस तरह विभिन्न प्राकृतिक संसाधन युक्त प्रदेशों का वैशिष्ट्य तथा विनिमय की आवश्यकता विपणन केन्द्रों के गठन को प्रोत्साहन देती है।

आन्तरिक क्षेत्रों में विपणन क्रिया का जन्म इसी प्रक्रिया से होता है। आन्तरिक क्षेत्रों के निवासी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु नवगठित विपणन केन्द्रों का चयन अपनी सुविधा, लगाव एवं वस्तु उपलब्धता आदि से करते हैं। कालान्तर में कुछ विपणन केन्द्र संकलन प्रधान हो जाते है एवं उत्पादों का उर्ध्वाधर वितरण करते है। अन्य विपणन केन्द्र मूलतः आन्तरिक वितरण के लिए वस्तुओं का क्रय करते है अर्थात् उर्ध्वाधर व्यापार से सम्बन्धित विपणन केन्द्र अधिक मात्रा में वसतुओं का संकलन करते है और इनका लक्ष्य वस्तुओं का इन क्षेत्रों को हस्तान्तरण होता है। इसे 'व्यापार के लिए व्यापार' कहते है। सामान्य भाषा में इसे थोक व्यापार कहा जा सकता है। इसकी दिशा इतर क्षेत्रों से आये पदार्थों का आन्तरिक भागों में स्थित विपणन केन्द्रों की ओर भी हो सकता है या आन्तरिक भागों में स्थित विपणन केन्द्रों द्वारा संकलित क्षेत्रीय उत्पादन के इतर क्षेत्रों के निर्यात की ओर भी हो सकता है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि क्षेत्रीय वैभिन्य विपणन क्रिया का महत्त्वपूर्ण कारक है। जनसंख्या की वृद्धि एवं मनुष्य की बढ़ती एवं बदलती आवश्यकताएँ विपणन क्रिया के संगठन एवं विकास का कारक होती है।

उद्देश्य :–

- ग्रामीण एवं नगरीय विपणन केन्द्रों में विविध परिवर्तन एवं विविध अर्थ–व्यवस्थाओं में फुटकर व्यापार का अध्ययन।
- नित्यप्रति अथवा आवर्ती विपणन केन्द्रों में व्यापार दशा का अध्ययन एवं ग्रामीण तथा नगरीय क्षेत्रों में सामाजिक जीवन पर व्यापार। क्रय–विक्रय द्वारा पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन।
- विविध व्यापार स्वरूपों एवं राष्ट्रीय, प्रादेशिक एवं नगरीय क्षेत्रों से संबंधित नियोजन एवं विधि–विधान के प्रभावों की तुलना।
- क्रेताओं के क्रय कार्य सम्बन्धी व्यवहार में परिवर्तनों एवं क्रय कार्य सम्बन्धी विविध कार्य–कलापों के प्रत्यक्षीकरण का अध्ययन।
- विविध ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों के निर्माण पर विविध वाणिज्यिक क्रिया–कलापों के प्रभाव का अध्ययन एवं विविध सामाजिक सम्प्रदायों के निवासियों के प्रत्यक्षीकरण एवं प्रभावों का अध्ययन।
- ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों एवं नगर–तन्त्रों के मध्य होने वाले पारस्परिक कार्यों एवं प्रभावों के विकास का अध्ययन।

शोध प्रश्न :–

1. विपणन केन्द्रों की क्षेत्रीय विकास में क्या भूमिका है ?
2. क्या विपणन केन्द्र के बढ़ते आकार के साथ–साथ उनका प्रभाव क्षेत्र भी बढ़ता है ?
3. क्षेत्र में जनसंख्या घनत्व व विपणन केन्द्रों के वितरण प्रारूप में क्या सम्बन्ध है ?

परिकल्पना :–

- जनसंख्या घनत्व व विपणन केन्द्रों की सघनता में घनात्मक सम्बन्ध है।
- दो बाजार कालिक रूप से अधिक अंतराल पर लगते है तो उनके बीच की भौगोलिक दूरी कम होती है।

- जहाँ वस्तु विविधता की कमी वहां बाजार क्षेत्र संकुचित है।
- विपणन केन्द्र के बढ़ते आकार के साथ–साथ सेवा क्षेत्र में लगी जनसंख्या का आकार भी बढ़ा है।

भौगोलिक अवस्थिति :– सीकर जिला राजस्थान के उत्तर–पूर्वी भाग में $27^0 21'$ से $28^0 12'$ उत्तरी अक्षांश तथा $74^0 44'$ से $75^0 25'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। समुद्र तल से इसकी ऊँचाई 432.31 मीटर है। जिले के उत्तर–पूर्व में झुन्झुनूं जिला, उत्तर–पश्चिम में चूरू जिला, दक्षिण–पश्चिम में नागौर एवं दक्षिण–पूर्व में जयपुर जिले की सीमाएँ लगती है। जिले का उत्तरी–पूर्वी कोना हरियाणा राज्य की प्रादेशिक सीमा को भी स्पर्श करता है।

सीकर जिले की सामान्य आकृति चन्द्राकार है। यह एक उष्ण मरूस्थली प्रदेश है, जिस कारण से गर्मियों में अधिक गर्मी और सर्दियों में अधिक सर्दी पड़ती है। जिले का अधिकतम तापमान 46 डिग्री सेल्सियस और न्यूनतम तापमान 0 डिग्री सेल्सियस रहता है। जिले की औसत वर्षा 46.6 सेमी. है। जिसमें रेगिस्तानी क्षेत्रों में वर्षा कम होती है जबकि पहाड़ी व मैदानी क्षेत्रों में वर्षा कुछ अधिक मात्रा में होती है।

अरावली पर्वतमाला जिले को दो भागों में विभक्त करती है। अरावली पहाड़ियाँ उत्तर–पूर्व से दक्षिण–पश्चिम की ओर स्थित है। जिले में अरावली पर्वतमाला की उच्चतम चोटी रघुनाथगढ़ है, जिसकी समुद्र तल से ऊँचाई 3459 फीट है।

जिले का कुल क्षेत्रफल 7742.44 वर्ग किलोमीटर है जिसमें से ग्रामीण भाग का क्षेत्रफल 7548.23 वर्ग किमी.स है तथा नगरीय भू–भाग का क्षेत्रफल 194.21 वर्ग किमी. है, क्षेत्रफल की दृष्टि से सीकर तहसील सबसे बड़ी है। सीकर जिले में क्षेत्रफल की दृष्टि से ग्रामीण क्षेत्रफल भी सीकर तहसील का ही सर्वाधिक है तथा नगरीय क्षेत्रफल में दातारामगढ़ तहसील सर्वोच्च स्थान रखता है। जिले में आठ विधानसभा क्षेत्र फतेहपुर, लक्ष्मणगढ़, सीकर, दातारामगढ़, धौंद, श्रीमाधोपुर, खण्डेला एवं नीम का थाना है। यहाँ 6 उपखण्ड व 6 तहसील है जो फतेहपुर, लक्ष्मणगढ़, सीकर, नीम का थाना, श्रीमाधोपुर एवं दातारामगढ़ हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

हरी ओम श्रीवास्तव	(1975)	सरयूपार मैदान (उ.प्र.) के विपणन केन्द्र, गोरखपुर विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत शोध प्रबन्ध, (प्रकाशनाधीन)।
विश्वनाथ	(1982)	अवध मैदान में विपणन एवं सामाजिक संरचना, गोरखपुर विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत शोध प्रबन्ध (अप्रकाशित)।
कुमकुम रानी श्रीवास्तव	(1982)	बघेलखण्ड प्रदेश (म.प्र.) में आवर्ती विपणन केन्द्र एवं केन्द्र स्थल, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर द्वारा स्वीकृत शोध प्रबन्ध (अप्रकाशित)।
उधव राम	(1983)	आवर्ती विपणन केन्द्र एवं ग्रामीण विकास : निचला गंगा–घाघरा दोआब, गोरखपुर विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत शोध प्रबन्ध (प्रकाशनाधीन)।
त्रियुगीननाथ	(1986)	ठलाहाबाद नगर उपांत का विपणन भूगोल, गोरखपुर विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत शोध प्रबन्ध (अप्रकाशित)।
राम सूरत	(1986)	थोक व्यापार का भूगोल–पूर्वी उत्तर प्रदेश की मण्डियों का अध्ययन, गोरखपुर विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत शोध प्रबन्ध (अप्रकाशित)।
कैलाशनाथ तिवारी	(1987)	विपणन केन्द्र एवं परिवहन मार्ग : गाजीपुर जिले (उ.प्र.) का प्रतीक अध्ययन, गोरखपुर विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत शोध प्रबन्ध (अप्रकाशित)।
निरंकार लाल	(1992)	मिर्जापुर पठार में विपणन एवं सामाजिक संरचना, गोरखपुर विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत शोध प्रबन्ध, (अप्रकाशित)।
चन्द्रशेखर सिंह	(1993)	जबलपुर नगर का अंतरानगरीय विपणन भूगोल, गोरखपुर

विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत शोध प्रबन्ध, (प्रकाशनाधीन)।

अल्पना चंद्रा (1994) पारिस्थैतिक संश्लिष्ट एवं विपणन केन्द्र : मध्य नेपाल प्रदेश का प्रतीक अध्ययन, गोरखपुर विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत शोध प्रबन्ध (अप्रकाशित)।

मध्य प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रो में महिला सशक्तिकरण का प्रभाव

SHIVANI SHUKLA
M.Phil (Commerce) APSU University Rewa

सारांश :__भारत में महिला सशक्तिकरण के बारे में नरेन्द्र मोदी जी द्वारा बताया गया है, कि ''देश की तरक्की के लिए पहले हमें भारत के महिलाओं को सशक्त बनाना होगा'' एक बार महिला जब अपना कदम उठा लेती है, तो परिवार आगे बढ़ता है। गॉव आगे बढता है और राष्ट्र विकास की ओर बढ़ता है।

भारत में महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए सबसे पहले समाज में उनके अधिकार और मूल्यों को मारने वाले उन सभी राक्षसी सोच को मारना जरुरी है, जैसे दहेज प्रथा, भ्रूण हत्या, असामनता महिलाओं के प्रति घरेलू हिंसा, कार्य स्थल पर यौन शोषण, बाल मजदूरी और ऐसे ही दूसरे विषय जो देश को पीछे की ओर ढ़केलता है।

महिला सशक्तिकरण के सपने को सच करने के लिए लडकियों के महत्व और उनकी शिक्षा को प्रचारित करने की जरुरत हैं इसके साथ ही हमें महिलाओ के प्रति हमारी सोच को भी विकसित करना होगा।

महिलायें देश की आधी आबादी मानी जाती है। ऐसे में उनके समुचित विकास के बिना, हम देश के विकास की कल्पना नहीं कर सकते।

महिलाओं का समुचित विकास किए बिना हम अपने देश को प्रगति की ओर अग्रसर नही कर सकते।

प्रस्तावना : महिला सशक्तिकरण क्या है? हमें सबसे पहले यह जानना अति आवश्यक है, निःसंदेह सहजता से हर एक दिन भिन्न–भिन्न भूमिकाये जीते हुए, महिलाये किसी भी समाज का स्तंभ है।

हमारे आस–पास महिलाये सहद्य बेटियां संवेदनशील मातायें सक्षम सहयोगी और अन्य कई भूमिकाओं को बडी कुशलता, सौम्यता से निभा रही है।

इसका आशय यह होता है, कि आज के इस युग में महिलाओं को अपने से संबधित स्वयं के निर्णय लेनें में किस प्रकार से सशक्त रहना चाहिए।

हमारे भारत में अतंर्राष्ट्रीय महिला दिवस सदैव 8 मार्च को मनाया जाता है।

महिलाओं का आर्थिक एवं सामाजिक रुप से सशक्तिकरण– उनको समाज में उचित एवं सम्मान जनक स्थिति पर पहुंचाने के लिए Art of living में महिला सशक्तिकरण कार्यक्रम आरंभ किये है। और अलग अलग पृष्ठभूमि की महिलाओं के आत्मसम्मान, आंतरिक शक्ति को पोषण करने के लिए ठोस आधार प्रदान करते है, और अपने परिवार में अन्य महिलाओं और समाज के लिये शांति और सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन के अग्रदूत कें रुप में स्थापित कर रही है।

आर्ट आफ लिविंग द्वारा लिये गये छः महिला सशक्तिकरण कार्यकमः–

1. आर्थिक स्वतंत्रता
2. कन्या शिक्षा
3. एच आई वी/एड्स
4. जेल कार्यक्रम
5. नेतृत्व संवर्धन
6. सामाजिक सशक्तिकरण

भारत में महिला सशक्तिकरण कार्यकम :– भारत और अन्य कई देशो में महिलाओं को वित्तीय स्वतंत्रता प्राप्त है और वे सामाजिक अन्याय के खिलाफ खड़ी हुई है।

इन महिलाओ को सकारात्मक परिवर्तन का सूत्रधार बनते हुये अन्य महिलाओं को भी शिक्षित सशक्त बनाकर उनको अपनी आवाज उठाने पर पूरा जोर दिया गया है

शोध प्रविधि :– शोध कार्य को करने के लिए शोध विधियों का प्रयोग किया गया है, आंकाडो का संग्रहण द्वितीय विधि से किया गया, महिला सशक्तिकरण विभाग, वाणिज्य कर विभाग से प्राप्त आंकडे एवं समाचार पत्रों में प्रकाशित सूचनाओ का आधार बनाया गया है। वर्गीकरण, सारणीयन एवं विश्लेषाण विधि द्वारा निष्कर्ष निकालने का प्रयास किया गया है।

परिकल्पना :

1. मध्य प्रदेश का महिला विकास कार्यक्रम पर्याप्त नही हुआ है।
2. महिला सशक्तिकरण में निराशा का वातावरण उत्पन्न हुआ है।

समस्याये एवं कठिनाईयॉ :

1. सामाजिक सास्कृतिक मान्यतायें छोडकर पाश्चात्य समाज जैसे आचरण करना।
2. समाज का उपहास करना।
3. सम्मान, समाज और श्रेष्ठ जीवनशैली के सिद्धांत का अलग होना।
4. नियंत्रणकारी शक्तियों पर अंकुश लगाकर विनाश की प्रक्रिया आरम्भ करना।

सुझाव :

1. महिला सशक्तिकरण हेतु आपको शिक्षा, संस्कार उन्हे जन्म की अनुमति अवश्य दी जानी चाहिए।
2. मन की चेतना शक्ति सबसे प्रबल है।
3. जीवन में पथ– प्रदर्शन अतिआवश्यक है, और जीवन के हर पल आप गुरु, मां – पिता के परामर्शो के स्वरुप ग्रहण कर लेते है।
4. नारी सशक्तिकरण के बिना मनावता का विकास अधूरा है।
5. रोजगार में महिलाओं को अवसर मिलें, कार्यस्थल पर उनके लिये उचित माहौल हों।

निष्कर्ष : महिलाओं को सशक्त बनानें की सुझाव देते हुये स्वामी विवेकानंद कहते है, महिलाओं को बस शिक्षा दो, इसके बाद वो खुद बतायेगी कि उनके लिए किस प्रकार की सुधार की जरुरत है। मामूली दिक्कतें भी उन्हे अब तक असहाय बने रहने और दूसरो पर निर्भर बने रहने का ही प्रशिक्षण दिया गया है।

1. सदियो से महिलाओं की आवाज दबी हुई है अगर वो आर्थिक रुप से सशक्त होगी, तो समाज में भी उनकी आवाज सुनी जायेगी।
2. आर्थिक रुप से सशक्त होने पर महिलाओं की निर्भरता पुरुषों से खत्म हो जायेगी।

3. महिलायें कमाएँ हुये पैसे या परिवार के किसी अन्य स्त्रोत से मिले पैसों को बच्चो के भरण–पोषण, स्वास्थ्य और शिक्षा पर खर्च करते है
4. आर्थिक रुप से सशक्त महिलाये आत्मविश्वास से लबरेज होती है।

''महिला वो शक्ति है, सशक्त हैं, वो भारत की नारी है, न ज्यादा में, न कम में, वो सबमें बराबर की अधिकारी हैं।

संदर्भ– ग्रंथ :

1. जसटाहिररामः आधुनिक भारत में शैक्षणिक चिंतन, 2011 इन्दौर, पृष्ठ.21
2. पाण्डे मनोज कुमार विश्व भारत, 2010 (25 मार्च) पृष्ठ 10
3. हिरभूक्ति– नारी साम्राज्य, 2008,पृष्ठ 120 समाचार पत्र पत्रिकायें।

वर्तमान समय में पुस्तकालय में कम्प्यूटरीकरण की उपयोगिता

श्रीमती अचला खरे
सहायक ग्रंथपाल, गो.से.अर्थ–वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर(म.प्र.)
डॉ. राकेश कुमार खरे
पुस्तकालयाध्यक्ष, पुस्तकालय एंव सूचना विभाग, आइसेक्ट विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

प्रस्तावना : आज के युग में सभी जगहों का कम्प्यूटरीकरण किया जा रहा हैं। हर कार्य कम्प्यूटर के द्वारा किया जाने लगा हैं। इसको देखते हुये ग्रंथालय में कम्प्यूटरीकरण का कार्य निरंतर किया जा रहा हैं। कम्प्यूटर का अनुप्रयोग बढ़ने से सूचना संग्रहण और प्रसार के क्रिया कलापों तथा इनकी विधियों में परिवर्तन हुआ हैं। पुस्तकालय में कम्प्यूटर के उपयोग से पुस्तकालय में कार्य करना काफी सरल हो जाता हैं तथा समय की भी बहुत बचत होती हैं। आज जब हम पुस्तकालय स्वचालन की बात करते हैं तो हमारा तात्पर्य मैग्नेटिक टेप डिस्क ऑपटिकल मीडिया तथा कम्प्यूटर आधारित उत्पादों एंव सेवाओं के उपयोग से होता हैं। पुस्तकालय स्वचालन द्वारा पुस्तकालय में स्थान की कमी को काफी हद तक दूर किया जा सकता हैं क्योकि प्रसूची केबिनेट के लाखों रिकार्डो को कम्प्यूटर में संग्रहित किया जा सकता हैं। आज पाठक सिर्फ कागज पर प्रकाशित सूचना पर निर्भर नहीं हैं वह कम्प्यूटर की मदद से ऑन–लाईन सूचना प्राप्ति की ओर आकर्षित हो रहा हैं।

आजकल न केवल ग्रंथालयों के आन्तरिक व्यवस्था के लिये कम्प्यूटरीकरण का उपयोग किया जा रहा हैं। बल्कि संदर्भ सेवाओं और उन्नत एंव जटिल प्रलेखन सूचना सेवाओं की व्यवस्था तथा सूचना के संग्रहण, प्रचार तथा प्रसार हेतु अतयन्त उन्नत और सूक्ष्म यंत्रों का उपयोग किया जा रहा हैं। कम्प्यूटर जो वास्तविक यंत्रीकरण का आधार माना जाता हैं। कम्प्यूटर के उपयोग करने का मुख्य उद्देश्य उपयोगकर्ताओं की आवश्यकता की पूर्ति जितनी कुशलतापूर्वक सम्भव हो सके

करना होता हैं। ओर सीमित श्रम को अधिकाधिक उपयोग कर कार्य को सिद्ध करना होता हैं। कम्प्यूटर के आगमन के साथ ही पुस्तकालयों की परम्परागत संकल्पना नव रुप में परिवर्तित हो रही है। कम्प्यूटर के बढ़ते प्रयोग, फैक्स, ई–मेल एंव इंटरनेट की सुविधाओं के कारण ग्रंथालय सेवाऐं भी प्रभावित हो रही हैं। उच्च शिक्षा में शैक्षणिक पुस्तकालयों के अर्न्तगत विश्वविद्यालय व महाविद्यालयीन ग्रंथालय आते हैं। इन ग्रंथालयों का कार्य शिक्षा में सहायता करना, शोध कार्य को बढ़ावा देना, शिक्षा विस्तार, ज्ञान परीक्षण, ज्ञान के प्रसार व संचार सेवा आदि कार्यों द्वारा पाठकों को सेवाऐं प्रदान करना ही शैक्षणिक ग्रंथालयों के उद्देश्य हैं आज पुस्तकालय के विशालतम डाटा को पुस्तकालय सॉफ्टवेयर पैकेज के द्वारा ही नियंत्रित तथा संचालित किया जा रहा हैं।

ग्रंथालय स्वचालन :– (Library Automation) ग्रंथालय स्वचालन से तात्पर्य हैं ग्रंथालय की पंरपरागत गतिविधियों जैसे अधिग्रहण, प्रसूचीकरण, सर्कुलेशन, सीरियल, नियंत्रण आदि का मशीनीकरण करना हैं। आटोमेशन पुस्तकालय के आधुनिकरण करने का एक विशाल प्रोग्राम हैं। आज आटोमेशन और नेटवर्किंग की सहायता में पुस्तकालय, हाउसकिपिंग वर्क तथा पुस्तकालय सर्विस में जैसे केटलागिंग,डाटाबेस सर्विस, डाक्यूमेन्टेशन, सरक्यूलेशन, इंडेक्सिंग, रिर्सोस शेयरिंग, बजट नियंत्रण, पुस्तक चयन, पुस्तक क्रय, संदर्भ सेवा, ग्रंथावली सेवा, पुस्तकालय रिपोर्ट आदि कार्यो को शीघ्रता तथा बहुआयामी स्वरुप में सम्पांदित करने की सुविधा प्रदान कराता हैं। आज पाठक सिर्फ कागज पर प्रकाशित सूचना पर निर्भर नहीं हैं। वह कम्प्यूटर मदद से आन–लाइन तथा सॉट पब्लिकेशन सूचना प्राप्ति की ओर ज्यादा जागरुक तथा आकर्षित हो रहा हैं। आज पुस्तकालयाध्यक्ष ज्यादा आत्मनिर्भर तथा पाठकों को व्यक्तिगत रुप से सेवा प्रदान करा पा रहा हैं इसका मुख्य श्रेय कम्प्यूटर का पुस्तकालयाध्यक्ष तथा सूचना विज्ञान के क्षेत्र में पदार्पण करना हैं। अतः पाठकों को सूक्ष्म त्वरित एंव नवीनतम सूचना को पाठकों तक पहँचाना आज सिर्फ कम्प्यूटर की मदद से ही संभव हो सकता हैं। क्योंकि विश्व व्यापी साहित्य के ग्रंथपरक नियंत्रण करने के लिए कम्प्यूटर अहम भूमिका निभा रहा हैं। जब तक की एक सुव्यवस्थित मस्तिष्क यानी कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर पैकेज न डाला जाय जैसे की वगैर मस्तिष्क के शरीर की भूमिका नगण्य हैं। उसी तरह कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर के बिना कम्प्यूटर की भूमिका भी नगण्य हैं। आज पुस्तकालय के विशालतम डाटा को पुस्तकालय सॉफ्टवेयर पैकेज के द्वारा ही नियंत्रित तथा सुचालित किया जा रहा हैं।

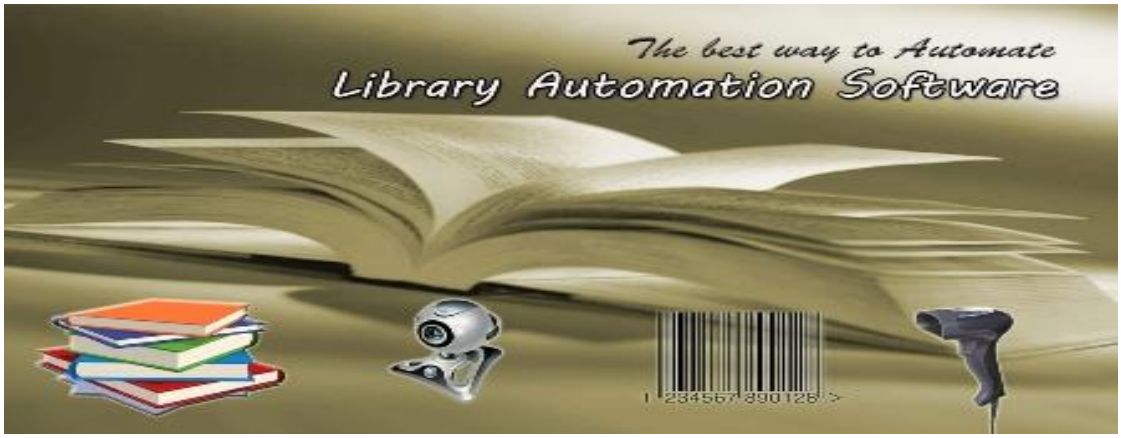

ग्रंथालय स्वचालन की परिभाषा : "ग्रंथालय की परंपरागत नित्य प्रतिदिन की संक्रियाओं जैसे अधिग्रहण, प्रसूचीकरण, परिचालन सीरियल नियंत्रण में कम्प्यूटर का अनुप्रयोग। पुस्तकालय आटोमेशन तथा नेटवर्किंग की सहायता से शीघ्रता से अधिक क्षमता के साथ आदान प्रदान तथा सम्प्रेषण किया जा सकता हैं। अतः पुस्तकालय के दैनिक कार्यो तथा सेवाओं को कम्प्यूटरीकृत करना आवश्यक हैं। कम्प्यूटर आटोमेशन नेटवर्क की सहायता से रिसोर्स शेयरिंग,इंटर लाइब्रेरी लोन को ऑपरेट आसानी से किया जा सकता हैं।आज आटोमेशन और नेटवर्किंग की सहायता में पुस्तकालय सर्विस में जैसे केट लॉगिंग, डाटा बेस सर्विस, डाक्यूमेन्टेशन सरक्यूलेशन, इंडेक्सिंग, रिसोर्स शेयरिंग, बजट नियंत्रण, पुस्तक चयन, पुस्तक क्रय,संदर्भ

सेवा,ग्रंथावली सेवा, पुस्तकालय रिर्पोट आदि कार्यो को शीघ्रता से सुविधा प्रदान कराता हैं।

ग्रंथालय स्वचालन के अनुप्रयोग के क्षेत्र : हस्तचलित ग्रंथालय के कार्य जैसे अधिग्रहण तकनीकी प्रक्रिया, सर्कुलेशन, सीरियल्स नियंत्रण, देय आदेय ;प्नम.त्मजनतदद्ध और संदर्भ सेवाऐं काफी समय लेती हैं। ये सभी प्रकार की गतिविधियाँ ग्रंथालय के कार्य करने के लिये जरुरी होती हैं। ये कर्मचारियों का काफी समय नष्ट करती हैं। यदि ग्रंथालय कर्मचारियों के समय की बचत हो तो अन्य सेवाओं और ग्रंथालय के विकास के कार्यों में उपयोग किया जा सकता हैं। कई बार हाथ से किये कार्य में विभिन्न प्रकार की गलतियाँ एंव पुनरावृत्ति हो जाती हैं। इस प्रकार कम्प्यूटरीकरण का उद्देश्य इन गतिविधियों को एकीकृत करके कार्य की पुनरावृत्ति को कम करता हैं। एकीकृत ग्रंथालय प्रबंधन सॉफ्टवेयर ;प्स्डैद्ध पैकेज में उपलब्ध हैं जो ग्रंथालय स्वचालन में प्रयोग किये जा सकते हैं। प्स्डै पैकेज ग्रंथालय की सभी गतिविधियों एंव दिन–प्रतिदिन के कार्यों को एकीकृत करता हैं।

ग्रंथालय स्वचालन की आधारभूत गतिविधियाँ इस प्रकार हैं :–

1. अधिग्रहण

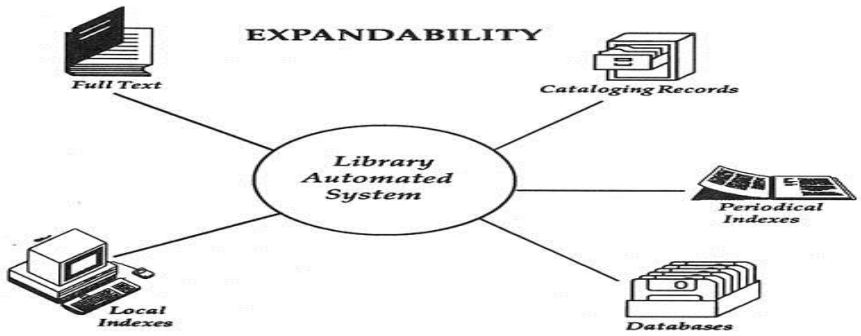

2. प्रसूचीकरण (कैटालॉगिंग)
   (i) ऑन–लाइन सार्वजनिक अभिगम सूची (ओपेक)
   (ii) वेब ओपेक
3. परिचालन (सर्कुलेशन)
4. पत्रिका (सीरियल) नियंत्रण
5. प्रतिवेदन

एकीकृत ग्रंथालय प्रबन्ध प्रणाली (ILMS)

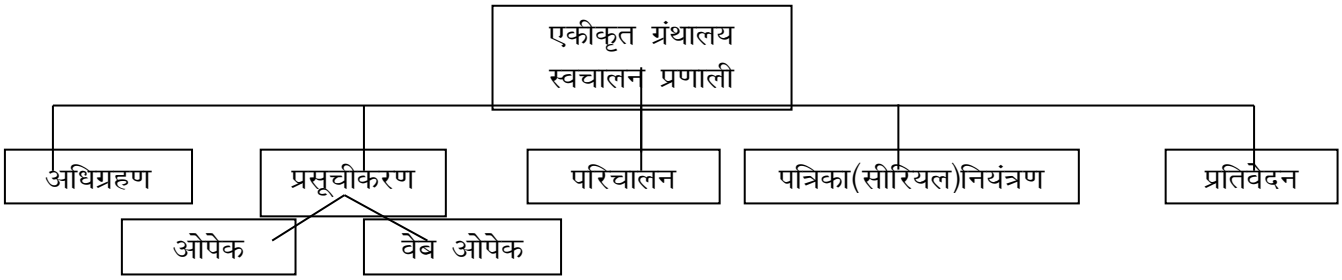

1- अधिग्रहण (Acquisition)

ग्रंथालय के अधिग्रहण प्रभाग में अन्य पाठ्य सामग्री जिसमें शामिल है पत्र–पत्रिकाएं, समाचार पत्र, डेटाबेस, ई–किताबे आदि, पत्र–पत्रिका प्रभाग/सीरियल प्रभाग द्वारा अर्जित की जाती हैं । हस्तचालित अधिग्रहण प्रणाली में विशाल मात्रा में आंकड़ो, असंख्य फाईलो, अभिलेखों आदि का रख रखाव शामिल होता है जिसमें दिन प्रतिदिन के थकाऊ और पुनरावृत्ति वाले कार्य होते हैं। कंप्यूटर के द्वारा इन नित्यप्रतिदिन के कार्यो को शीघ्रता व सटीकता के साथ पूरा किया जा सकता है।

2- प्रसूचीकरण (Cataloguing)

ग्रंथालय में ग्रंथ प्राप्ति के बाद में,उसे अधिग्रहण संख्या प्रदान करने के पश्चात् उनका वर्गीकरण एवं प्रसूचीकरण करके उन्हें तैयार किया जाता है। पुनः वृति प्रविष्टियों की जांच की प्रकिया थकाऊ व समय नष्ट करने वाली होती है। स्वचालित प्रणाली में, एक बार प्रासंगिक आंकड़ो को तैयार करके कंप्यूटर में उपलब्ध करा दिया जाता है जिससे मानक प्रारूप में प्रसूची तैयार की जा सकती है। पुनःवृत्ति की जांच कंप्यूटर द्वारा निपूणता से हो जाती है और ग्रंथालय सामग्रियों तक खोज विभिन्न तरह की अभिगमें द्वारा उपयोक्ताओं को आसानी से प्राप्त हो जाती है । कम्प्यूटरीकृत प्रसूची के द्वारा नए आगमन की सूची,सूची पत्रक मुद्रित करना व वाड्मयी ; बिबिल्योग्राफी द्ध को तैयार किया जा सकता है।

(i) ऑनलाइन सार्वजनिक अभिगम सूची ओपेक

आईएलएमएस **(ILMS)** का उपयोग करके प्रसूचीकरण की गतिविधियों की इलेक्ट्रॉनिक प्रसूची तैयार करना,जो कि उपयोक्ताओं के लिए प्रसूची तक अभिगम उपलब्ध कराता है और जो केवल खोज एवं प्रदर्शन तक ही सीमित होती है उसे ऑनलाइन पब्लिक एक्सेस कैटालॉग (ओपेक) कहते हैं।

(ii) वेब ओपेक

आज ग्रंथालयों का स्वभाविक व अपरिहार्य ध्येय है कि वे अपनी ऑनलाइन सूची को बेव के साथ जोड़ें इसे हम वेब ओपेक कहते हैं। वेब ओपेक एक ओपेक है जिसे वेब पर उपलब्ध कराया गया है एवं इंटरनेट की सहायता से कोई भी उपयोक्ता कहीं से भी इसका अभिगम कर सकता है। खोज और ब्राउजिंग में वेब ओपेक और ओपेक समान ही हैं।

ओपेक और वेब ओपेक के बीच मुख्य अंतर यह हैं कि वेब ओपेक इंटरनेट के माध्यम से दुनिया के किसी भी कोने से खोजा जा सकता हैं। जबकि ओपेक में केवल एक संस्था के ग्रंथालय के परिसर में लोकल एरिया नेटवर्क द्वारा सूचनाँए प्राप्त की जा सकती हैं। सरल शब्दों में कहें तो उपयोक्ता दुनिया के किसी भी कोने से वेब ओपेक के माध्यम से ग्रंथालय सूची को खोज सकते हैं।

परिचालन (सर्कुलेशन)

परिचालन अनुभाग में उपयोक्ताओं और कर्मचारियों के बीच सीधा संपर्क होता हैं और इसलिए कुशल और त्वरित सेवाओं की आवश्यकता होती हैं। परिचालन डेस्क में लेनदेन विवरण जैसे चार्जिग (निर्गम), आदेय (वापसी), पुनः देय (निर्गम), आरक्षित, आरक्षण ओवर ड्यू, अनुस्मारक और सॉख्यिकीय आदि समय नष्ट करने वाले, थकाऊ और त्रुटि की संभावना से भरे होते हैं। परिचालन की गतिविधियों में स्वचालन से ग्रंथालय को लाभ होता हैं।

बारकोड सुविधाओं से परिचालन की गतिविधियों में गति, दक्षता व सुधार आता हैं। आजकल ग्रंथालय की परिचालन नियंत्रण प्रणाली को ग्रंथालय के अन्य कार्यों सहित एकीकृत करने की प्रवृत्ति, जैसे ऑनलाइन सार्वजनिक अभिगम प्रणाली, अंतर ग्रंथालय ऋण, इलेक्ट्रॉनिक मेल अनुस्मारक, पुस्तक आरक्षण, पुस्तक की स्थिति आदि से उपयोक्ताओं के समय की बचत हो जाती हैं। आजकल परिचालन में रेडियो फ्रीक्वेंसी पहचान (आरएफआईडी) को स्वचालन के लिए प्रारंभ किया गया हैं जिसने पुस्तकों की चोरी को भी बचाया हैं।

पत्रिका (सीरियल) नियंत्रण

पत्रिकाओं का नियंत्रण एक जटिल प्रक्रिया हैं जिसमें बड़ी संख्या में प्रकाशनों व उनके खर्चों का रखरखाव किया जाता हैं। स्वचालन के आने से अधिकांश कार्य सरल व कुशलता से पूरे किये जा सकते हैं व कई प्रकार के आंकडों में अधिक परिश्रम और समय व्यर्थ होता हैं व कई बार तो कंप्यूटर की सुविधा से ही आसानी से तैयार की जा सकती हैं।

प्रतिवेदन

उपरोक्त प्रक्रियाओं के अतिरिक्त, एकीकृत ग्रंथालय प्रबंधन प्रणाली (आई.एल.एम.एस.) का इस प्रकार प्रबंधन किया जाना चाहिए कि जिससे उपयोक्ताओं को अत्यधिक लाभ हो, सुरक्षा के समुचित उपाय हो एंव समय पर ग्रंथालय सामग्री प्राप्त हो सकें।

स्वचालित ग्रंथालय की विशेषताऐं :–

ग्रंथालय की पुस्तकों और उपयोगकर्ताओं के विवरण को बार कोडिंग करके पुस्तकों को सरलता से आदान–प्रदान (Issue-Return) किया जा सकता हैं। Automation के द्वारा ही यह सभी सेवाऐं दी जाती हैं। स्वचलित ग्रंथालय की मुख्य विशेषताऐं हैं।

1. उपयोक्ताओं को समय पर ग्रंथालय सामग्रियाँ प्रदान करना।
2. पाठकों के कम्प्यूटीकरण के द्वारा समय की बचत होती हैं।
3. जब भी आवश्यकता हो तब प्रलेखों की पुनः प्राप्ति की जा सकती हैं।
4. आटोमेशन का उपयोग कम्प्यूटर द्वारा प्रतिदिन कार्यो में गति शुद्धता, स्वचालन तथा संग्रहण आदि गुणों के कारण ही इसका महत्व और बढ़ जाता हैं।
5. बहुत विशाल सूचना की व्यवस्था लाइब्रेरी सॉफ्टवेयर द्वारा सरलता पूर्वक निष्पादित की जा सकती हैं।
6. कार्य करने की क्षमता में कम्प्यूटर मानव से अत्याधिक तीव्र होता हैं ओर बड़ी तीव्रता के साथ कार्यो का निष्पादन करता हैं।
7. आटोमेशन के द्वारा कम्प्यूटर शीघ्रता, तीव्रता तथा शुद्धता के साथ कार्य करने की अपार क्षमता रखता हैं।

प्रणालियों के नेटवर्क के समूह को डिजिटल लाइब्रेरी के रुप में समझा जा सकता हैं जो कि किसी एक सर्वर पर सग्रंहित होकर अनेक कम्प्यूटर टर्मिनलों से संयुक्त होती हैं एंव समस्त सूचनायें डिजिटल स्वरुप में उपस्थित रहती हैं। अतः विश्व में अनेक डिजिटल लाइब्रेरी (लाइब्रेरी आटोमेशन) आरम्भ हो चुके हैं।

कम्प्यूटरीकरण एंव कम्प्यूटर के इस युग में ग्रंथालय सेवाऐं भी यंत्रचालित हो गई हैं। ग्रंथालयों का विकास सूचना केन्द्रों के रुप में हो गया हैं। इनका मुख्य उद्देश्य विश्व के सभी देशों तथा देश के सभी भागों के मध्य सूचना का स्वतंत्र प्रवाह करना हैं। इनका उद्देश्य हैं कि योग्य व्यक्ति को यथा समय वैज्ञानिक तकनीकी, व्यापारिक अथवा कम्प्यूटराइज्ड पुस्तकालय एंव वर्चुअल पुस्तकालयों के स्वरुप से भी परिचित हो रहे हैं इन सभी के पीछे सूचनाओं को सग्रंहित कर डिजिटल रुप में डिस्क पर सुरक्षित रखने का व्यापक आधार हैं।

ग्रंथालय स्वचालन की आवश्यकता

ग्रंथालयों में कम्प्यूटर का प्रयोग करना एक प्रकार से अनिवार्यता बन चुकी हैं ग्रंथालय के अच्छे प्रबन्ध के लिए कम्प्यूटर का प्रयोग सभी स्तर के कार्य करने वालों द्वारा किया जाता हैं।

1. उपयोगकर्ताओं की संख्या में वृद्धि।
2. सूचना की अधिकता।
3. सूचना–व्यवस्थापन में आसानी।
4. सूचना के अद्यतन में सहायक।
5. आर्थिक साध्यता।
6. शुद्धता।
7. संग्रहण–क्षमता।

ग्रंथालय–स्वचालन का उद्देश्य

ग्रंथालय स्वचालन के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं :–

1. शीघ्र सेवा।
2. कुशल सेवा एंव शीघ्रता से सूचना प्राप्त करना।
3. श्रम,धन एंव समय में बचत।
4. ग्रंथालय प्रबंधन में सरलता।
5. शुद्धता।

ग्रंथालय स्वचालन को प्रभावित करने वाले कारक

स्वचालन को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारण हैं :–

1. ज्यादा संग्रह।
2. वित्त।
3. हार्डवेयर एंव सॉफ्टवेयर।
4. प्रशिक्षित कर्मी।

ग्रंथालय स्वचालन से लाभ

1. सूचना का अद्यतन।
2. समय की बचत।
3. सूचना व्यवस्थापन में सहायक।
4. शुद्धता।
5. उपयोगकर्ता में वृद्धि।
6. राष्ट्रीय–अंतरराष्ट्रीय सूचना में सहायक।

ग्रंथालय स्वचालन से हानि

1. यह एक लम्बी प्रक्रिया हैं तथा इसमें समय भी बहुत लगता हैं।
2. इस कार्य के लिए वित की उपलब्धता पर ज्यादा ध्यान देना होता हैं।
3. इस कार्य के लिये निरंतर प्रशिक्षित कर्मियों की आवश्यकता होती हैं।
4. इसका व्यवस्थापन काफी उच्च स्तर का रखना होता हैं जिससे यह पुरानी पद्धति की तुलना में बहुत मंहगी पड़ती हैं।
5. स्वचालन के लिए नियंत्रण बहुत आवश्यक हो जाता हैं विशेषकर जब उपयोगकर्ता अप्रशिक्षित होता हैं। इससे कर्मियों को समस्याओं का सामना करना पड़ सकता हैं।

डिजिटल लाइब्रेरी के आधार

- Electronic Publication.
- Electronic Communication.
- Electronic Collection.
- Electronic Process.
- Multimedia.
- Internet.

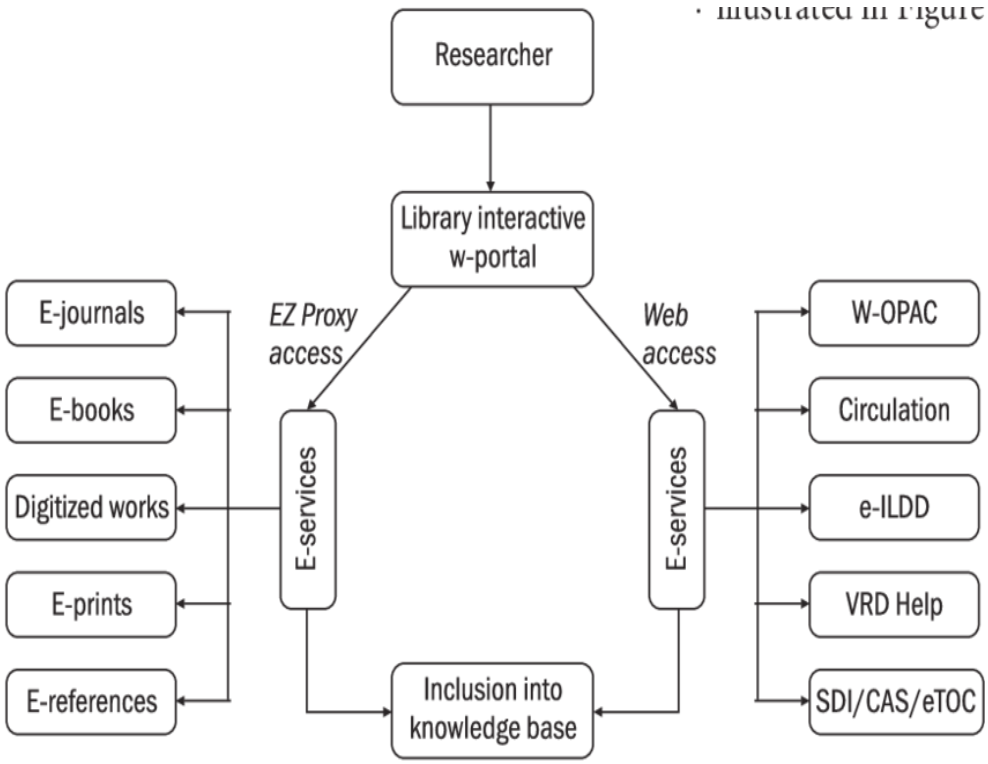

निष्कर्ष : उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट होता हैं कि नवीन से नवीन क्षेत्रीय,राष्ट्रीय ओर अंर्तराष्ट्रीय सूचना किस प्रकार शीघ्र प्रभावी रुप से उपयोगकर्ताओं को पहुँचाई जाये, यही पुस्तकालयों का प्रमुख उद्देश्य हैं। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए पुस्तकालयों में कम्प्यूटरीकरण का विस्तार किया जाये क्योंकि ग्रंथालय वास्तव में ज्ञान का असीम भंडार हैं। देश की जनता के लिए यह उन्नति का सर्वोत्तम साधन हैं। आटोमेशन का महत्व पुस्तकालय तथा सूचना केन्द्रों के प्रतिदिन के कार्यो में इसकी महत्ता को देखते हुऐ करीब करीब सभी कार्यो में इसका हस्तक्षेप बढ़ गया हैं।

अतः पुस्तकालय में आने वाले सभी उपयोगकर्ताओं को सूचना स्त्रोतों एंव डिजिटल लाइब्रेरी के बारे में जानकारी होना आवश्यक हैं क्योंकि लाइब्रेरी में कम्प्यूटर सेवाऐं आटोमेशन और नेटवर्किग की सहायता में लाइब्रेरी सर्विस में जैसे केटलॉगिंग, डाटा बेस सर्विस, डॉक्यूमेन्टेशन, सरक्यूलेशन, इन्डेक्सिंग,रिसोर्स शेयरिंग, बजट नियंत्रण,पुस्तक चयन,पुस्तक क्रय,संदर्भ सेवा,ग्रंथावली सेवा,पुस्तकालय रिर्पोट आदि कार्यो को शीघ्रता से पूर्ण करने की सुविधा प्रदान कराता हैं।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

महिला उत्थान में डॉ. अम्बेडकर का योगदान

शोधार्थी, रूपा साकेत
इतिहास विभाग, रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर

शिक्षा व्यक्ति के सर्वांगीण विकास, सामाजिक और राष्ट्रीय प्रगति तथा सभ्यता और संस्कृति के उत्थान के लिये अनिवार्य है। ज्ञान मनुष्य का तीसरा नेत्र है जो उसे समस्त तत्वों के मूल को समझने की क्षमता प्रदान करता है एवं उसे उचित व्यवहार करने में प्रवृत्त करता है। परन्तु परपंरागत समाजों में बहुधा इसे परंपरागत समाजिक सुरक्षा एवं शासकीय वर्ग के हितों के संरक्षण हेतु उपयोग किया जाता है। इस प्रकार के समाजों में शिक्षा का स्वरूप रूढ़िवादी सामाजिक सस्था का हो जाता है। अतः ऐसी अवस्था में शिक्षा का उद्देश्य अनायास ही लोकतंत्र व समाज के विकास का विरोध करना हो जाता है। परपंरागत भारतीय समाज में शिक्षा का आधार धर्मशास्त्र था। इससे उच्च जातियों के स्वार्थ सिद्ध हुए और समाज विभाजित हुआ, साथ ही सामाजिक विकास एवं समानता के सिद्धांत भी अवरुद्ध हुए। परंपरागत सामाजिक विचारधारा में किसी विषय के चयन का आधार योग्यता एवं रूचि न होकर जाति थी। महिलाएँ एवं दलित शिक्षा और सपंत्ति के अधिकारों से वंचित थे।

डॉ. अम्बेडकर के हृदय में अपने बंधुओं अर्थात् दलितों हेतु अत्यंत अनुराग भाव था तथा वे सदैव ही उनकी सेवा एवं उत्थान करना चाहते थे। उन्होंने पूर्ण समर्पण भाव से सभी उपेक्षितों के कल्याण हेतु कार्य किया। हालांकि प्रत्यक्ष कारणों से दलित सदैव उनके केंद्रीय भाव में रहे, परंतु वे महिलाओं की दशा में सुधार हेतु भी सक्रिय रहे जिनके विषय में उनका मानना था कि वे भी समाज में अत्यंत उपेक्षित रही हैं। डॉ. अम्बेडकर ने भारतीय महिलाओं की अनेक समस्याओं को प्रकट किया और उनके समाधान हेतु बम्बई विधान परिषद में वायसराय की कार्यकारी परिषद के अंतर्गत श्रमिक सदस्य के रूप में तथा संविधान सभा में ड्राफ्टिंग समिति के अध्यक्ष के तौर पर एवं संसद में स्वतंत्र भारत के प्रथम विधि मंत्री के रूप में सदैव प्रयासरत रहे।

डॉ. अम्बेडकर ने हिन्दू समाज में महिलाओं की दयनीय स्थिति का सदैव विरोध किया। सम्पत्ति, विवाह, तलाक, गुजारा भत्ता आदि के सम्बंध में महिलाओं को न्यायसंगत अधिकार दिलाने हेतु सामाजिक इतिहास एवं शास्त्रों के नियमों का अध्ययन करते हुए उन्होंने संसद में 'हिन्दू कोड बिल' प्रस्तुत किया। हालांकि इस बिल को अपेक्षित प्रतिसाद प्राप्त नहीं हुआ, फिर भी संसद द्वारा इसके अधिकांश उपनियमों को पास किया गया। इस प्रकार डॉ. अम्बेडकर ने हिन्दू समाज में महिलाओं को समान अधिकार प्रदान किये जाने हेतु संघर्ष किया।

डॉ. अम्बेडकर द्वारा भारत के सामाजिक एवं राजनैतिक परिदृश्य में पदार्पण का महिला उद्धार के अभियान में उल्लेखनीय योगदान रहा। वे महिलाओं की मां एवं पत्नी के रूप में भूमिका की उपेक्षा न करते हुए सदैव ही उनकी गरिमा का आदर करते थे। उन्होंने परिवार में समानता तथा समाज में महिलाओं के व्यक्तित्व की गरिमा का प्रसार किया। संविधान समिति की ड्राफ्टिंग समिति के अध्यक्ष के रूप में उन्होंने महिलाओं पर हिन्दू समाज द्वारा शताब्दियों से थोपी गयी परतंत्रता एवं दासता से मुक्ति हेतु अनेक उपायों का समर्थन किया। डॉ. अम्बेडकर इस विचारधारा के प्रबल समर्थक थे कि जब तक महिलाएं स्वयं सामाजिक कुप्रथाओं के उन्मूलन हेतु आगे नहीं आयेंगी, तब तक समाज में उनकी स्थिति में सुधार नहीं हो सकता।

डॉ. अम्बेडकर के अनुसार उनके आन्दोलन की सफलता तब तक अनिश्चित थी, जब तक कि दलित महिलाओं का भी इसमें सक्रिय योगदान न हो। प्रत्येक सामाजिक संघर्ष के दौरान डॉ. अम्बेडकर महिलाओं को आमंत्रित करते थे। महाड़ सत्याग्रह में महिलाओं ने बड़ी संख्या में भाग लिया। 'मूक नायक' एवं 'बहिष्कृत भारत' पत्रों के माध्यम से डॉ. अम्बेडकर सदैव महिला उत्पीड़न के मुद्दे को प्रमुख रूप से रेखांकित करते रहे। वे महिलाओं को सदैव ही आगे बढ़ने हेतु प्रेरित करते रहे। दलित महिला वर्ग को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा था, 'आप दुगुर्णों से दूर रहें, अपनी बेटियों को अधिक से अधिक पढ़ायें, उनके मन में महत्वाकांक्षाएँ पैदा करें और उनका विवाह करने में जल्दी न करें।'

डॉ. अम्बेडकर का स्पष्ट रूप से मानना था कि दलितों के अलावा महिलाएँ ही सर्वाधिक उपेक्षित हैं। उन्होंने महिलाओं के उत्थान एवं प्रगति हेतु हिन्दू कोड विधेयक बनाया। यह अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है कि यह विधेयक उस समय पारित नहीं हो सका परन्तु आने वाले वर्षों में इसे अलग–अलग चरणों में पारित किया गया। इस विधेयक का उद्देश्य महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार प्रदान करना था।

डॉ. अम्बेडकर को भली भांति ज्ञान था कि यदि सामाजिक न्याय की शक्तियाँ निर्बल होंगी तो दलित, महिला और अल्पसंख्यक वर्ग; समानता, स्वतंत्रता, बन्धुत्व और

सामाजिक न्याय के उच्च राजनैतिक दर्शन से वंचित हो जाएगा और उनके लिए संघर्ष करना कठिन हो जायेगा। आम जनमानस लोकतांत्रिक अधिकारों से भी वंचित किये जा सकते हैं। यह अक्सर आरोप लगाया जाता है कि दलित चिंतक, दलित नेतृत्व ही दलित महिलाओं की उपेक्षा करते हैं। वे ही उन्हें आगे नहीं आने देना चाहते हैं। डॉ. अम्बेडकर ने अपने आंदोलन के जरिए यह प्रयास किया कि दलित महिलाएं आगे आएं। वे दलित महिलाओं के साथ हिंदू महिलाओं को भी आगे लाने की बात कर रहे थे। इसलिए 1951 में वह हिंदू कोड बिल लेकर आए। हिंदू कोड बिल, सवर्ण महिलाओं को पिता की संपत्ति में अधिकार देने और दहेज प्रथा आदि जैसी कुरीतियों के खिलाफ लाया गया।

डॉ. अम्बेडकर ने महिलाओं के उत्थान को केंद्र में रखते हुए उनकी शिक्षा को प्रोत्साहित करना प्रारम्भ किया था, उसी के परिणामस्वरूप भारतीय महिलाएँ भी पुरुषों से प्रतिस्पर्धा कर रही हैं, साथ ही अनेक महिलाएँ उच्च पदों पर भी नियुक्त हैं। इस हेतु उन्हें डॉ. अम्बेडकर का आभार व्यक्त करना चाहिये।

स्वतंत्रता पश्चात् के दशकों में भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति एवं स्तर में अभूतपूर्व परिवर्तन हुआ है। वस्तुतः इतिहास के किसी भी कालखण्ड ने इस प्रकार का क्रांतिकारी परिवर्तन दृष्टिगोचर नहीं हुआ था, जैसा आज हो रहा है। परंतु 19वीं शताब्दी के दौरान सम्पूर्ण दुर्दशा की परिस्थिति से 20वीं शताब्दी के मध्य तक समानता का पद प्राप्त करना वर्तमान युग में महिलाओं की उन्नति एक साधारण घटना नहीं है। इसके पार्श्व में डॉ. अम्बेडकर का संघर्ष है। अतः महिला उत्थान के क्षेत्र में डॉ. अम्बेडकर का योगदान अविस्मरणीय है।

संदर्भ

1. सिंह तारकेश्वरनाथ ''इस्पातपुरूष अम्बेडकर'' जनचेतना प्रकाशन दिल्ली, 2008।
2. अग्निहोत्री रमाशंकर ''भारत रत्न डॉ अम्बेडकर'' दिव्य ज्योति प्रकाशन दिल्ली, 1994।
3. मून बसन्त ''बाबा साहब अम्बेडकर'' नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया दिल्ली, 1991।
4. बाली एल आर ''डॉ अम्बेडकर जीवन और मिशन'' भीम पत्रिका पब्लिकेशन्स, 1987।
5. वर्मा ब्रजलाल ''सामाजिक न्याय के पुजारी डॉ भीमराव अम्बेडकर'' समता प्रकाशन दिल्ली, 1992।
6. कुबैर डब्ल्यू. एन. ''आधुनिक भारत के निर्माता भीमराव अम्बेडकर'' सूचना प्रसारण मन्त्रालय दिल्ली, 1992।
7. मूकनायक मार्च, 1920।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

तबला वादन में 'गत'

कंचन सिंह
(एम0ए0 संगीत तबला, प्रवीण, यूजीसी नेट)
शोध छात्रा, संगीत एवं प्रदर्शन कला विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

शोध सारांश : तबला वादन में अविस्तारशील बन्दिश के रूप में 'गत' का विशिष्ट स्थान है। यह मूलतः तबले की बन्दिश है, इसका विस्तार नहीं होता। अपवाद स्वरूप कुछ तबलावादक इसका विस्तार भी करते हैं। यह तबले पर बजने वाले क़ायदा, टुकड़ा, परन और पेशकार आदि से भिन्न होतीहै। तबले के पूरब बाज में 'गत' का सोलो वादन में खूब प्रयोग होता है।

मुख्य शब्द – बन्दिश, दुपल्ली, मंझेदार, बढ़इया की गत, गोपुच्छा

शोध पत्र : तबला वादन में अविस्तार शील बन्दिश के रूप में 'गत' का विशिष्ट स्थान है। यह मूलतः तबले की बन्दिश है। तबले पर बजने वाले मुलायम बोलों की ऐसी निश्चित रचना जिसे आसानी से ठाह, दून या चौगुन में बजाया जा सके, जिसके पल्टे न किया जा सके और जो क़ायदा, टुकड़ा, परन और पेशकार आदि से भिन्न हों, उसे 'गत' कहते है। इसका विस्तार नहीं होता। इसके अंत में कभी–कभी तिहाई भी लगायी जाती है परंतु यह अधिकतर तिहाई रहित होती है। अपवाद स्वरूप कुछ तबलावादक इसका विस्तार भी करते हैं। यह स्वतंत्र तबले की वादन सामग्री है। इसके बोल परन से हल्के होते है। पूरब बाज में खासकर फरूर्ख़ाबाद घराने के तबला वादक गत का प्रयोग सोलो वादन में खूब करते हैं। फरूर्खाबाद घराने के हाजी उस्ताद विलायत अली खाँ एवं उस्ताद मियाँ सल्लारी खाँ की गतें तबले के क्षेत्र में एक विशेष सम्मान और आदर का दर्जा रखती है।

गत के प्रकार (किस्में)

गत के कई प्रकार (किस्में) हैं, जिसका उस्तादों ने तरह–तरह से उसका नामकरण किया है जैसे सरल गत, तिहाई गत, लय की जातियों पर आधारित गत, सम, विषम, अनागत या अतीत ग्रह पर आधारित गतें, दुपल्ली, तिपल्ली, फरद की गत, मंझेदार गत, गोपुच्छा गत आदि। उनमें से कुछ गतों का वर्णन निम्नलिखित है –

1 दुपल्ली गत

जब किसी गत या परन में क्रमशः दो लय के पल्लो का प्रयोग हो तो ऐसी गत को 'दुपल्ली' कहते हैं। इसके बोल और लय के विषय में दो मत हैं–एक मत के अनुसार–दोनों पल्लों के बोल में कोई परिवर्तन न हों, केवल लय क्रमशः बदली जाय। जबकि दूसरे मतानुसार–लय तो क्रमशः बदली जाय, परंतु बोल में कोई प्रतिबंध न हो। उदाहरणार्थ –

3 गुन) कऽत धिकिट कतग दिगन धात्रक धिकिट कतग दिगन धा ऽ

6 गुन) कऽतधिकिट कतगदिगन धात्रकधिकिट कतगदिगन [1]

2 तिपल्ली गत

एक विशेष प्रकार की ऐसी रचना, जो तीन विभिन्न प्रकार की लयकारियों के पल्लों, भागों या खंडों के समूह से निर्मित होती हैं, उस 'तिपल्ली' या 'त्रिपल्ली' गत कहते हैं। इसमें लय वैचित्रय का अच्छा प्रद" र्न होता है। पहली विधि में तीन खण्डों का प्रयोग, तीन विभिन्न लयकारियों में होती है। दूसरी विधि से निर्मित तिपल्ली में एक ही बोल समूह तीन विभिन्न लयकारियों में आबद्ध होता है।''[2] उदाहरणार्थ – फरूर्खाबाद घराने की प्रसिद्ध गत (त्रिताल)

3 गुन) धाऽन धिकिट धातिरकिट धिकिट कतेटे टेतेटे कतग दिगन

4 गुन) धातिरकिटधा तेटेकता घेननड़ा ऽनकत

6 गुन) धाऽनधिकिट धातिरकिटधाकिट कतेटेतेटे कतगदिगन [2]

3 चौपल्ली गत

जिस प्रकार तिपल्ली तीन विभिन्न प्रकार की लयकारियों के भागों को जोड़कर बनाई जाती है। उसी प्रकार चार विभिन्न लयकारियों के पल्लों को जोड़कर चौपल्ली बनाई जाती है। इसमें लयकारी ही इन गतों की मुख्य विशेषता होती है। चौपल्ली के बोलों को इस प्रकार से बजाया जाये कि मात्राओं की गति ठाह, दुगुन, तिगुन और चौगुन हो जाय। उसे चौपल्ली गत या चार दर्जे वाली गत कहा जाती है।

4 पाँच पल्ली गत

जिस प्रकार चौपल्ली गत में चार विभिन्न लयकारियों को जोड़कर चौपल्ली बनाई जाती है। उसी प्रकार पाँच विभिन्न लयकारियों के पल्ले को जोड़कर पाँच पल्ली बनाई जाती है जिसे 'पाँच पल्ली' गत कहते हैं।

5 जोड़े की गत

पहले के गुणिजन एक बंदिश बनाने के बाद उसका जोड़ा भी बनाया करते थे। यदि जोड़ा न बन पाया तो उसे फर्द, फरद या एक्कड़ कह देते थे और यदि उस रचना से छंद, जाति और आकार तथा लय में मेल खाता जोड़ा बन जाता था, तो उसे जोड़े की बंदिश कहा करते थे। इसी प्रकार यदि दो गतों की रचनायें छंद, जाति, आकार व लय में मिलती जुलती होती थीं, तो उसे जोड़े की गत कहते थे।

6 बीच से उठने वाली गत

ऐसी गते, जो सम से न उठकर किसी और स्थान से उठे, बीच से उठने वाली गत कहते है। तबला वादक जिस मात्रा से चाहे, अपनी गतों को प्रारंभ कर वादन कर सकते है।

7 लोम–विलोम की गत

जिस तरह गायकी में रागों के अलंकार (सरगम) का आरोह व अवरोह होता है। उसी प्रकार तबले में भी इन गतों का प्रयोग होता है। अर्थात् इसके बोल आगे पीछे या सीधा उल्टा एक समान होते हैं।

8 जुगल बंदी गत

जुगल बंद' उर्दू भाषा का 'जुगल' शब्द से बना है। जिसका अर्थ है–जोड़ा या दो। यह फ़ारसी का एक शब्द है 'जुफ्त' जिसका अर्थ है–जोड़ा या दो। और हिन्दी भाषा में युगलबंद है।[3]

तबला पखावज के बोलों की रचना, जिसमें एक बोल समूह दो–दो बार दुहराते हुए चलते है उसे ''जुगलबंद'' कहते हैं। ऐसी रचना गत, टुकड़ा या परन के रूप में अधिक मिलती हैं।

9 मंझेदार गत

'मंझा' शब्द प्रायः पतंग से सम्बन्धित है। तबले में मंझेदार गत की व्याख्या करते हुए प्रसिद्ध विद्वान आचार्य लालजी श्रीवास्तव के अनुसार–'मंझेदार गत पतंगबाजी की कला पर आधारित है। जिस प्रकार पंतग उड़ाते समय कभी ढील, कभी तेजी तो कभी झटका होता है, उसी प्रकार मंझेदार गत में गत की सभी विशेषतायें तो रहती हैं साथ–साथ बंदिश के बीच–बीच में लय के झटके आते रहते हैं। उसे ही पुराने गुणिजन मंझा लगाना कहते हैं।' उदाहरणार्थ –

3 गुन) धाऽन धिकिट धात्रक धिकिट
3 गुन) कतटि टतिट कताग दिगन
4 गुन) धात्रकधि किटकत गद्दी गनधा
6 गुन) धाऽनधिकिट धात्रकधिकिट कततिटतिट कतगदिगन [4]

10 गोपुच्छा गत

ऐसी रचनायें, जो गाय की पूँछ के सदृश आकार की होती है उन्हें हम गोपुच्छा गत के अर्न्तगत रख सकते हैं। अर्थात् गत की विशेषताओं सहित रचना में प्रारंभ में अधिक बोल समूह तथा अंत होते–होते बोल कम होते जाना या प्रारंभ में द्रुत फिर मध्य तथा अंत में विलंबित लय होना गोपुच्छा गत है। उदाहरणार्थ –

6 गुन) धड़धिधिनग धड़धिधिनग धातिरकिटधेतेट धातिरकिटधेतेट
6 गुन) धागेन्तकिट धागेन्तकिट धागेदिगनग धागेदिगनम
4 गुन) तकधिन धिनधागे नधातिरकिट
3 गुन) धागेन धातिरकिट धिनक धिनक [5]

11 लाल क़िले की गत

उत्तर भारत के अनेक मुस्लिम शासक स्थापत्य कला के पोषक थे और उन्होंने अपने शासन काल में अनेक क़िले, भवन और ऐतिहासिक महत्व की इमारतें बनवाई। मुगल शासन काल में लालकिले या किलों में प्रायः नौबत, नगाड़े और शहनाई बजा करती थीं इस वातावरण को ध्यान में रखकर कुछ उस्तादों ने ऐसे विशेष बोलों की रचना की, जिनके वादन से लाल किले का सा वातावरण निर्मित हो सके इसलिए इस प्रकार के बोल समूह का नाम भी 'लालकिला' रख दिया गया।[6]

12 चारबाग़ की गत

इस शब्दावली का उद्भव मुग़ल युग की देन है। उत्तर भारत में मुस्लिम शासनकाल मे कतिमय नगरों में 'चारबाग' नाम कुछ स्थानों को दिया गया है। आज भी उत्तर प्रदेश की राजधानी लखनऊ में चारबाग प्रसिद्ध है, जहाँ रेलवे और बस के स्टेशन स्थित है। संभव है, कभी ये स्थान चारों ओर से घिरा रहा हो। कुछ कलाकार 'चारबाग नाम लेकर कुछ बंदिशे बजाते हैं, जो कलाकारों की अपनी व्यक्तिगत रूचि होती है और उनके पास कोई तर्कपूर्ण शास्त्रीय आधार नहीं होता है।[7]

13 बढइये की गत

काठ को गढ़कर अनेक प्रकार के सामान बनाने वाले शिल्पी को बढ़ई कहते हैं और उसी का एक रूप 'बढ़इया' है। बढ़इया के बोल के विषय में निम्नजन श्रुति जान लेना आवश्यक है, जो वर्तमान मध्य प्रदेश में दतिया नामक स्थान से संबंधित है।

उन दिनों महाराज कुदऊसिंह (जंम 1825, मृत्यु 1910 ई0 के लगभग) के पखावज वादन की संगीत में धूम थी। उनके वादन पर एक बढ़ई आसक्त था और स्वयं उनसे पखावज वादन सीखना चाहता था। महाराज कुदऊसिंह ने उसे टालना चाहा और यह कहकर वापस कर दिया कि 'लकड़ी का काम करते–करते तुम्हारे पंजे कठोर हो गये हैं और गट्टे पड़ गये

हैं। अतः तुम वादन सीखने के योग्य नहीं रहे। आगे उन्होने उससे कहा कि यदि फिर भी तुम सीखना ही चाहते हो, तो पहले रंदे (तेज़ औज़ार) से अपने गट्टों को छील डालो तब सीखने आओ।' गुरू के आदेशानुसार अपने गट्टों को छील डाला और पुनः गुरू के संमुख याचना के भाव से उपस्थित हो गया। अपनी परीक्षा में बढ़ई उत्तीर्ण हुआ और कुदऊसिंह जी ने शिक्षा देना प्रारंभ कर दिया। आगे चलकर उस बढ़ई ने कुछ रचनायें की जिसे आज भी हम 'बढ़इया की गत', परन या बोल कहकर याद करते हैं। बढ़इया गतों के जोड़े नहीं होते। यह गतों से अलग होता है।[8]

14 फर्शबंदी गत

तबला पर स्वतंत्र वादन प्रस्तुत करते समय सर्वप्रथम कलाकार अपनी पसंद या रूचि की लय को ढूँढ़ता है, तब वादन की भूमिका बनाकर अपनी प्रस्तुति का क्रम आगे बढ़ाता है। इसके लिए वह कुछ बोल समूह को चाला या चलन की भाँति ही लेकर लहरे के साथ बजाता है। इसी क्रिया को पारंपरिक तबला वादक फ" बिंदी कहते है।[9]

15 झूलने की गत

झूलना एक प्रकार का खेलने या मनोविनोद का साधन है किसी लटकी हुई वस्तु के सहारे नीचे की ओर लटककर बार–बार आगे पीछे या इधर–उधर होना ही झूलना है। इसमें व्यक्ति दो छोरों से शक्ति लगाकर गति उत्पन्न करता है, जिससे झूले में गति आ जाती है। इस गति को दर्शाते हुए जिस बंदिश की रचना की जाती है, उसे झूलने या 'झूलन की गत' या 'बोल' कहते हैं। पौने दो गुन की लय या चांचर ताल का छंद दर्शाते हुए रचना इसके अंतर्गत आती है। इसे 'बिआड़ लय की गत' तथा 'गितांगी गत' भी कहते है। तीनताल में झूलने की गत का उदाहरण प्रस्तुत है–

धाऽऽघे नाऽतेटे तेटेघेऽ नाऽतिरकिट
धेतेघे नाऽधिड़नग दींगदि नाऽकिड़नग
कऽत तिरकिट तिरकिटतक तागेतेटे
घेघेन नानाना तिरकिटतक तातातिरकिट [10]

निष्कर्ष : उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि तबला वादन में 'गत' का विशेष महत्व है। पूरबबाज विशेषकर फरूर्खाबाद घराने के तबला वादन में गतों का विशेष वादन में किया जाता है। वर्तमान में गतों का वादन किसी विशेष घराने तक सीमित न हो कर तबले के सभी घरानों में किया जाने लगा है।

सन्दर्भ सूची :

1. श्रीवास्तव गिरीशचन्द्र/तालकोश/रूबी प्रकाशन, इलाहाबाद/प्र0सं0 1996/पृ0 122
2. गुरूवर लालजी श्रीवास्तव से प्राप्त
3. चिश्ती डॉ0 एस0 आर0/तबला संचयन/कनिश्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली/प्र0सं0 2012/पृ0 226
4. राम डॉ0 सुदर्शन/तबले के घराने, वादन शैलियॉ एवं बन्दिशें/कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली/प्र0सं0 2008/पृ0 100
5. मिश्र डॉ0 लालमणि/भारतीय संगीत वाद्य/भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली/चौ0सं0 2011/पृ0 346
6. श्रीवास्तव गिरीशचन्द्र/तालकोश/रूबी प्रकाशन, इलाहाबाद/प्र0सं0 1996/पृ0 211
7. तत्रैव/पृ0 68
8. चिश्ती डॉ0 एस0 आर0/तबला संचयन/कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली/प्र0सं0 2012/पृ0 233
9. श्रीवास्तव गिरीशचन्द्र/तालकोश/रूबी प्रकाशन, इलाहाबाद/प्र0सं0 1996/पृ0 149
10. गुरूवर लालजी श्रीवास्तव से प्राप्त

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

LIFE AND CAREER OF THILLAIAADI VALLIAMMAI- A STUDY

S.CHIDAMBARA KASI
Assistant Professor, Department of History, Kamaraj College (Self-Finance), Thoothukudi, 628 008,
***(This College Affiliated Manonmaniam Sundarar University, Tirunelveli)* Tamil Nadu.**

Thillaiyadi valliammai was born to Munuswamy and Mangalam, a young immigrant couple from a small village called Thillaiyadi in Thanjavur in the year 1898. Valliammai grew in an environment that was rather hostile to Indians. Indians were treated as slaves in South Africa. Gandhi who was appalled by pathetic conditions of coloured people and discrimination against the Indians and South Africans,[1] adapted a new method of light against the British rulers. The young Indian lawyer Mohandas Gandhi began his protest march against the discrimination of Indians and other South Africans. Kasturba, Valliammai and her mother joined this march of women from Transvaal to Natal, which was prohibited by the Government of South Africa.

Valliammai, 16 years of age was arrested by the South African police while she was in the protest march and spent three months in jail. She suffered a fatal fever in jail, when she was released in 11.2.1914 she was very weak and could barely walk. She breathed her last in 22.2.1914, within 10 days after released from jail. Her short span of life did not deter this courageous Tamil girl from learning an impressive imprint in India's history of freedom struggle.

Thillaiyadi Valliammai Ninaivu Mandapam was constructed at a cost of Rs.12 lakh in Thillaiyadi Village.[2] Tharangampadi Taluk Nagapattinam district and inaugurated in 13.8.1971. As ordered by the Hon'ble Chief Minister Selvi J Jayalalithaa Thillaiyadi Valliammai Ninaivu Mandapam in Nagapattinam District has been renovated at a cost of Rs.5 lakhs.

The heroine who opposed English domination

Thillaiyadi Valliammai's birthday today (February 22), who died in the fight against the English domination and died at the age of 16. Ten pearls about him are ten. Manusamy, a weaver worker from the next Dilayyadi. He was doing business in South Africa. His daughter was born in South Africa (1898). The colony of the girls in the school attended the school.[3]

Carefully observed the social tendencies that surround him. In 1913, Gandhians fought against the taxes and various atrocities imposed by the Britishers for Indians in South Africa. The speeches of Gandhiji deeply embraced this young mind and set the liberation. He started participating in struggles. Once an English officer extended his gun to Gandhi, he said, 'First you can shoot me first.' The law was passed to 'only the Christian ceremonial marriages in the churches'.[4] The women's satyagraha team rallied in Johannesburg. He has done as much as possible to the participants. Started the march from the Transvaal to Nadal Nagar. Everyone entering the city limits was arrested and sentenced to 3 months imprisonment. When he was released, he boldly denied that it would be pulled into Satyagraha. "A wage for the wages of the country that does not even own a native?" A British official said. Immediately Valliammai threw her sari and threw her on the face of the officer saying, 'This is our national flag.' He was suffering from a health less prison life and a small child, and hard work in prison. The government decided to release him. Vallaliyam, who refused to be released, came out after the demands were passed. He then fought for 10 days and died on February 22, 1914 at his birthday. 'We have lost a holy daughter of India. And why he did not ask for what he was doing. Being fortunate, self-respecting. His sacrifice will definitely benefit the Indian community, "said Gandhiji in his condolence message. Years later, Gandhiji came to the Thillaiyai and saw the soil in the eye. "Dilayati Valliyyam, who has won the victory over the sacrifice of the sacrifice, was the first to embrace the emotion of liberation." The Dillaiyadi Memorial Hall is built to honor the sacrifice of Valliyamiyam. The public library is also functioning.[5]

Valliamma, and her mother Mangalam, joined the second batch of Transvaal women who went to Natal in October 1913 to explain the inequity of the three pound tax to the

workers and persuade them to strike. (Valliamma's father, R. Munuswamy Mudaliar, owner of a fruit and vegetable shop in Johannesburg and a satyagrahi in the Transvaal, was recovering from an operation). They visited different centres and addressed meetings. They were sentenced in December to three months with hard labour, and sent to the Maritzburg prison. Valliamma fell ill soon after her conviction, but refused an offer of early release by the prison authorities. She died
shortly after release, on 22 February 1914.[6]

Gandhi wrote in Satyagraha in South Africa :

"Valliamma R. Munuswami Mudaliar was a young girl of Johannesburg only sixteen years of age. She was confined to bed when I saw her. As she was a tall girl, her emaciated body was a terrible thing to behold. 'Valliamma, you do not repent of your having gone to jail?' I asked. 'Repent? I am even now ready to go to jail again if I am arrested,' said aVlliamma. [7]"But what if it results in your death?' I pursued. 'I do not mind it. *Who would not love to die for ones' motherland*?' was the reply. "Within a few days after this conversation Valliamma was no more with us in the flesh, but she left us the heritage of an immortal name…. And the name of Valliamma will live in the history of South African Satyagraha as long as India lives." On 15 July 1914, three days before he left South Africa, Gandhi attended the unveiling of the gravestones of Nagappan and Valliamma in the Braamfontein cemetery in Johanesburg.[8]

Honors

- Thillaiyadi Valliammai Memorial Hall, including a public library, was instituted in 1971 on 2452 square meters of land by the Indian Government in the village of Thillaiyadi, now in Tharangambadi Taulk, Nagapattinam, India.
- The Library is functioning regularly in this memorial. Other buildings in her name include Thillaiyadia Vlliammai Nagar and the Thillaiyadi Valliammai High School in Vennanthur.
- India released a commemorative stamp for her on 31 December 2008.
- American-Tamil Hip-Hop artist Professor A.L.I. releases the song "Herstory" about Thillaiyadi Valliammai.

Notes and References

1. Thillaiyadi Valliammai - First day cover (http://fdc4all.blogspot.com/2009/01/thillaiyadi-valliammai-fdc-from-india.html)
2. http://www.muthalnaidoo.co.za/indian-south-african-history-enuga-reddy/340-gandhi-tamils-and-the-satyagraha-insouth-africa
3. The Hindu - August 2009 (http://www.hindu.com/mp/2009/08/31/stories/2009083150120200.htm)
4. http://www.jhbcityparks.com/index.php/cemeteries-contents-61
5. http://www.muthalnaidoo.co.za/indian-south-african-history-enuga-reddy/340-gandhi-tamils-and-the-satyagraha-insouth-africa
6. Tamilnadu govt. - memorials - in Tamil (http://www.tn.gov.in/tamiltngov/memorial/thillai.htm)
7. India post - stamps 2008 (http://www.indiapost.gov.in/netscape/Stamps2008.html)
8. Valliamma and Her Story (http://professorali.com/2016/02/21/herstory/)

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

HISTORICAL BACKGROUND OF DALITS IN TAMIL NADU-A STUDY

K.DEIVENDRAN
Ph.D Research Scholar PG & Research Department of History,
V.O.C. College, Thoothukudi – 628 008,
***(This college Affiliated to Manonmaniam Sundaranar University Tirunelveli),* Tamil Nadu,**

Indian society is characterized by a high degree of structural inequality, stratification and hierarchy associated with caste, ethnicity, religion, class, other group identities and institutions of social exclusion. The inherent structure and functioning of these institutions leads to exclusion, which in turn leads to deprivation, poverty and discrimination of a substantial section of the Indian population in multiple spheres. The caste system is one of the most confusing mysteries of India. The caste system, which has existed more than 3,000 years, was developed by the Brahmin (priest) caste in order to maintain their superiority. Eventually, the caste system became formalized into four distinct classes (Varna).[1] The Brahmins are the highest Varna and are the priests and arbiters of what is right and wrong in matters of religion and society. Below them are the Kshatriyas, who served traditionally as solders and administrators. The Vaisyas are the artisan and commercial class, while the Sudras are the farmers and the peasants. It is said that the Brahmins come from Brahma's mouth, the Kshatriyas from his arms, the Vaisyas from his thighs, and the Sudras from his feet. Beneath the four main castes is a fifth group, the Scheduled Castes. The people of the Scheduled Castes are not part of the Varna system. Dalits have been exploited and tortured for centuries. They are now considered socially degraded members of the society. This is evident from items in daily newspapers about the atrocities committed on them. Many efforts have been to raise their status and position in Indian society. But the efforts made are generally directed towards alienating them from society rather than towards bringing them into the mainstream of the society![2]

Dalits do not belong to the pyramid of castes and are therefore known as outcastes. They are the untouchables. A Dalit is not considered part of human society, but, instead, is considered something less than human. The Dalits generally perform the most menial and degrading jobs. Caste rules hold that the Dalits pollute higher caste people with their presence. If higher caste Hindus touch an untouchable or even come within a Dalit's shadow, they must undergo a rigorous series of cleansing rituals. Approximately 250 million Indians (a full 25% of the population), are Dalit. In a country where everybody is supposed to have equal rights and opportunities, one out of four people is condemned to be untouchable. In fact, Dalits are a mass of powerless people.[3] It is accepted by everyone that the reality of their oppression proceeds not merely from the material deprivation they suffer in the absence of economic, educational and political power resources.

Meaning of Dalits

Dalit, a term that has become synonymous with untouchable, is the name that many untouchables, specie politically aware individuals, have chosen for themselves. The root of the word *Dalit* is found both in Hebrew and in Sanskrit. It refers to people who are socially, religiously, economically and politically oppressed, deprived and exploited. In India, the word *Dalit* is often used to describe a person who comes from any lower caste, even though technically authentic Dalits are kept outside the caste system as unworthy to enter the social and religious life of society. They are generally considered to be polluted socially, poor economically and powerless politically. They are not allowed to touch caste Hindus and are therefore treated as "untouchables".[4]

The term *Dalit* is inclusive of all the oppressed and exploited sections of society. Etymologically the term *Dalit* is inclusive of meanings such as: downtrodden, disadvantaged, underprivileged, dispossessed, deprived, handicapped, abused, humble, prostrate etc. (Das and Massey, 1995). The term *Scheduled Caste* was first used by the British government in the Government of India Act, 1935. Prior to this, some of these castes were included

within the depressed classes, a category which was used for the first time in the beginning of this century (Gupta, 1985: 7-35).

Dalits in India

The name *Dalit* means "oppressed" and highlights the persecution and discrimination India's 250 million untouchables face regularly. First used in the context of caste oppression in the 19th century, it was popularized in the 1970s by untouchable writers and members of the revolutionary Dalit Panthers (the name was inspired by the Black Panthers of the United States). *Dalit* has largely come to replace *Harijan,* the name given to untouchables by Gandhi, much like

the Black Power movement in the United States led to the replacement of the labels *colored* and *Negro* with *black.* For some activists, *Dalit* is used to refer to all of India's oppressed peoples whether Hindus, Muslims, Christians, tribal minorities, or women. Dalits are found spread throughout the India, South Asia, and among the Indian Diaspora around the world.[5]

Although the Indian Constitution guarantees fundamental rights and freedom to all Indians, Dalits are systematically abused. Dalits are poor, deprived and socially backward. Their most basic needs of food, shelter, and safety are not fulfilled. They also cannot access decent education and employment. The systematic denial of their basic human rights results in a lack of education, food, healthcare, and economic opportunity, thereby keeping Dalits in perpetual bondage to the upper castes. Untouchables are outcasts people considered too impure, too polluted, to rank as worthy beings. Prejudice defines their lives, particularly in the rural areas, where nearly three-quarters of India's people Eve. Daets are shunned, insulted, banned from temples and higher caste homes, made to eat and drink from separate utensils in public places, and, in extreme but not uncommon cases, are raped, burned, lynched, and gunned down.

Scheduled Castes and Scheduled Tribes are communities that are accorded special status by the Constitution of India. These castes and tribes have traditionally been relegated to the most menial labour with no possibility of upward moiety, and are subject to extensive social disadvantage and discrimination, in comparison to the wider community. The Scheduled Caste people are also known as Dalits; Scheduled Tribe people are also referred to as Adivasis. SC/ST make up upwards of 25% of India's population, over 250 million people. Untouchables (Dalits) are considered so unworthy by the upper caste echelon that they are not part of the caste system. Untouchables are forbidden from physician touching any member of any caste. Doing so would render the latter *unclean* by Hindu scriptural law. So, Dalits are commonly known as *untouchables.* Other varieties of untouchabiEty include *unseeables and unapproachables.*

Among the many changes that have occurred in India during the last two decades, the social dynamics of self-assertion of the so-caused lower castes is one of the most significant. There are several profound social changes taking place that affect the very core of Indian society.

Its most fundamental and specific character, the caste system, is under tremendous pressure, which can be ascertained in two different ways. Firstly,[6] the caste system of regulated hierarchized relationships has been virtually destroyed by a series of far-reaching developments: of the widespread market relations and the political maneuvering nurtured by fifty years of universal franchise. Secondly, the decline of caste boundaries as a system governing and ordering the patterns of relationsbetween patrons and clients has not necessarily weakened the caste *perse,* revealing a specifically Indian social paradox. To a large extent the struggle against the ideological and material hierarchies of the caste system attacks the system, not caste.

Dalits in Tamil Nadu

Dalits constitute almost 11 million people in Tamil Nadu, that is, 19 percent to the total state's population. In several districts, these castes account for as much as 25 percent, higher than the all-India average of 16.5 percent. While some change is noticeable is this regard, traditional patterns of contempt and submission have not disappeared. In Tamil Nadu, the old *paraceri* where the Paraiyars have to live has always been built away from the *ur}* the main quarter of the village where high castes as well as "backward castes" reside. Worse, even the new "colonies" built by the government for Scheduled Castes are still generally erected apart. Temple entry is still prohibited in the *nr* for the *ceri* dwellers, and the age-old compulsions concerning funerals and rituals calling for the *paraimelam* are still expected to be fulfilled. Tea stalls and ark shops do serve Dalit patrons, but usually keep two sets of glasses so that untouchables may not "pollute" the

glasses used by others. Despite recent changes,[7] the usual perception of Dalits amongst high castes and even backward classes remains derogatory. Village Paraiyars continue to be stereotyped as ritually impure, uncivilized, uncultured, unsophisticated and quarrelsome. Mixed marriages of Dalits with other castes are rare in town. They would not be accepted in villages.

The socio-economic status of most Dalits in Tamil Nadu is still very depressed. Most of them (72 percent) are landless agricultural labourers. Dalits account for 23 percent of the rural population in Tamil Nadu, but own only seven percent of the land, and even those who do own land have, for the most part, very small plots. In terms of access to amenities, they are well below the state average. Ninety percent of rural Dalits are still illiterate, whereas for non-Dalits is 10 percent. With the diffusion of capitalism in rural India, agricultural labourers are progressively less attached to the landlord families as *adimai*, and try to make a living as day wage labourers or on contract for a specific operation such as the peanut harvest, paddy transplantation, cutting sugarcane and so on. That does not necessarily signify a total break with landlord families. Dalits are not only experiencing poverty, they are also victims of violence. The official registries of violence do not tell the whole story, for all acts of violence are not reported to the courts. Besides raw brutality and open murders, one must not forget the silent violence of everyday life,[8] the violence of poverty, debt and bondage, the violence of discrimination, the humiliation Dalit men, women, and children experience. Even if practices associated with untouchability recede to some extent, the. "Change of heart" that Gandhi called for is still largely unrealized.

From the 19th century onwards, a number of social reforms emerged in Tamil Nadu, as in other parts of India, with a discourse against caste prejudices. Different trends can be noted in this connection. They are the *siddhar* mystic ascetic tradition as rejuvenated by Ramalingaswami (1823 - 1874), the nationalist humanism represented by Subramania Bharati (1882 — 1921), and the Marxist approaches of novelists such as Jayakanthan or Pavannan. Journals and magazines multiplied, including *Tamilan,* in 1907, whose editor, Ayoti Das, converted to Buddhism in 1898 and founded the Indian Buddhist Association in Madras two years later. But much larger moves against the impact of a rigid caste system were brewing at that time. They were launched not by the Panchamas, but by thosewho would call themselves the non-Brahmins, a designation which could well have been complemented by an additional attribute: non- Dalits.[9] The Non-Brahmin Movement, founded in 1916, fought against the disproportionate Brahmin hegemony in administrative services and professional circles. Soon after, its political arm, the Justice Party, gained provincial power in the Madras Presidency under British rule. But this awakening of the well-off non-Brahmins was mainly the surge of a bourgeois group of rich entrepreneurs, lawyers, bankers and *^amindars,* most of them from castes of "fair" status, for the expansion of their economic interests, better social recognition and a due share in political power. The fate of the "depressed classes" in general and of the "untouchables" in particular, was not their concern. On the other hand, the Self-Respect Movement, founded in 1925 by E.V.Ramaswami Naicker, had a much stronger impact. Periyar explicitly combined his struggle for the Dravidians with a frontal attack against Hinduism and its ideological justification for the caste systemand gender inequality. To a large extent, the Self-Respect Movement was an immediate consequence of the 1924 Vaikom agitation in Travancore that Naicker had been drawn into. Naicker was by then a prominent Congress leader, but had become utterly disappointed by the response of the Congress to the Vaikom agitation. Naicker left the Congress party, presaging a radicalization of his sociopolitical views, which discarded the viability of a democratic electoral process in fighting either untouchability or, more generally, "the evil of caste."[10]

The 1920s and the 1930s saw three distinct trends in the ideological attack on untouchability: the first embodied in Gandhi, a Hindu not opposed to caste, but actively condemning untouchability as a shameful perversion of Hinduism; the second in Ambedkar, a Dalit struggling for the political rights of the untouchables through reservation and already thinking about taking the Dalits away from the clutches of Hinduism through conversion to Buddhism; and the third in Periyar, who simultaneously attacked caste and religion, linking the liberation of man and woman with a militant atheism.

The Dravidian parties have consistently implemented a strong reservation policy in favour of the Scheduled Castes. In addition to opposing positive discrimination, they have strongly contributed to the dissemination of an anti-caste discourse calling for equality down to the remotest village. One must not

underestimate the impact of what some might discard as .mere rhetoric: words, even if not always followed by acts, are not innocuous, and help to change the mindset, particularly of the young generations' born under the DMK or the Anna DMK rules.

But this rhetoric was neither adequate for improving dramatically the socio-economic status of most of the Dalits, nor did it prevent the Dravidian parties from using the caste labels for gaining electoral constituencies. Despite Periyar and the atheist Dravida Kazhagam, religion is as alive in Tamil Nadu as it is in the rest of India. This does not mean, however, that nothing has changed in the life of the Dalits since the 1940s. As in other states, a set of policies has slightly improved the fate of the Scheduled Castes, especially through the distribution of housing sites, street water taps and electricity, access to schools, specific subsidies or benefits in the implementation of rural development programmes. However, land reforms and poverty alleviation programs have not made a breakthrough, which perhaps explains why there was no radical change in the status of most of the rural Scheduled Caste landless agricultural labourers who constitute most of the Tamil Dalits.

Dalits today are certainly more aware of their rights than before. But the weight of the Dravidian parties whose resilience was founded on a large socio-political base encompassing the Scheduled Castes and the Backward Classes did not leave much space for an autonomous Dalit political party until recently. The emancipation of Dalits of course requires much more than their material progress. The social and developmental policies of the central or state governments, despite their limitations and shortcomings, have brought about changes in the Dalit "colonies and quite a number of higher caste people are apprehensive about the implications. Such resentful villagers can be both high caste landlords who think that decidedly too much is being given to the Dalits as well as people of modest means and status who feel aggrieved that the Dalits can receive government loans at better rates than themselves or stipends for going to college. Rural Dalits now also have access to symbolic and practical sites, although village temples where other castes go are still barred to them. They can, however, enter the village school, a decisive change, notwithstanding the continuing prejudice of some teachers and a high dropout rate. To enjoy the rights of justice and equality which is embodied in the preamble of the Indian Constitution is of paramount importance. But the question remains for the Dalits related to whether they are ideally free to do as others do. Or do they have other ways open to them for charting the route to emancipation? There is now an assertive trend among the Dalits which refuses to incorporate the dominant cultural values as a modus operandi of emancipation.[11]

Whatever interpretation is given to the interaction between castes of different status in the old relationship, caste culture is hierarchical and divisive. With the weakening of the caste *system,* the interplay of unequal but regulated relations between castes is bound to collapse, except on the new level of political alliances. But neither political tools nor the new National Human Rights Commission and its state counterparts that help to implement the existing legislation are enough. Many Dalit groups and intellectuals believe that an alternative culture has to emerge as well, culture being understood broadly. In most cases, the goal is to free the Dalits from the dominant Hindu paradigm.

Notes and References

1. Rajkumar (ed.,) *Essays on Dalits*, New Delhi: Discovery Publishing Company, 2003, P.75.
2. lbidP.No.115
3. Palanithurai G., Ragupathy.V., *Functional Efficiency of Gram Sabha in Tamil Nadu*, New Delhi: Concept Publishing Company, 2006. pp.6 - 9.
4. Government of India, *Population Census of India,* 2001.
5. Goel.S.L and Shalini Rajneesh., *Panchayati Raj in India:Theory and Practice*, New Delhi: Deep and Deep Publications Pvt. Ltd., 2003, P.3.
6. Dindigul District Collectorate, *District Statistical HandBook,* 2006.
7. Government of India, *Population Census of India,* 2001.
8. Government of Tamil Nadu, *G' Return,* 2004-05.
9. Assistant Director of Statistics, *District Statistical HandBook,* Tamil Nadu, 2004-05.
10.Celine Rani A., *Op.cit,* P.83.
11. Government of India, *Population Census of India,* 2001.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

बुंदेलखंड की रियासतों में उत्तरदायी शासन

डॉ. रूपल असाटी

20 वीं शताब्दी के प्रथम दशक में भारत में राष्ट्रवादियों के एक ऐसे वर्ग का उदय हुआ जिसका विश्वास था कि अहिंसक आंदोलनों के माध्यम से स्वाधीनता प्राप्त की जा सकती है। ब्रिटिश भारत काल के आंदोलनकारी एवं क्रांतिकारी रियासतों में शरण ले रहे थे और उन्हीं स्थानों से अपनी गतिविधियों का संचालन कर रहे थे। इस प्रकार से रियासती अवाम का पहला संपर्क राष्ट्रीय आंदोलन से हुआ।

प्रथम विश्वयुद्ध काल के दौरान भारतीय रियासतों के सिपाही भी युद्धरत थे। इसी समय विदेशों से उनका संपर्क हुआ और इसके परिणामस्वरूप अगस्त 1917 में ब्रिटिश सरकार ने भारत में स्वायत्तता शासन के विकास का आश्वासन देते हुए यह घोषणा की, कि भारतीय जनता को अपने स्वयं के लिए अपनी राजनीतिक व्यवस्था तथा प्रशासकीय तंत्र की स्थापना का अधिकार है। इस घोषणा का प्रभाव रियासतों की जनता पर तो पड़ना ही था जो स्वयं को अलग महसूस कर रही थी। इस घोषणा से उनमें नई शक्ति का संचार हुआ। 1920 में कांग्रेस ने पहली बार राजा–महाराजाओं से अपील की कि वे अपनी रियासतों में उत्तरदायी शासन की स्थापना करें।

रियासती जनता को कुशल नेतृत्व प्रदान करने के उद्देश्य से 1927 में बम्बई में जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में अखिल भारतीय स्टेट्स पीपुल्स कांफ्रेंस (प्रजामण्डल) का गठन हुआ। 16 दिसम्बर 1927 को ब्रिटिश सरकार ने ब्रिटिश भारत तथा रियासतों के बीच संबंधों की समीक्षा करने हेतु 1927 में सर बटलर की अध्यक्षता में एक इंडियन स्टेट्स कमेटी का गठन किया। कमेटी के गठन की घोषणा के तुरंत बाद बलवंत राय मेहता, मनीलाल कोठारी, जी.आर. भण्डारकर इत्यादि नेताओं ने अखिल भारतीय स्टेट्स पीपुल्स कांफ्रेंस को अधिक क्रियाशील बनाने हेतु प्रयास प्रारंभ किए। यह नवगठित राजनीतिक संस्था कांग्रेस से ही संबद्ध थी एवं रियासतों में उत्तरदायी शासन की स्थापना हेतु राजनीतिक आंदोलन का संचालन करने के लिए रूपरेखा तैयार करने लगी। कांग्रेस ने यह तो स्पष्ट कर ही दिया था कि वह रियासतों में हस्तक्षेप नहीं करेगी, साथ ही साथ रियासती जनता से कांग्रेस ने यह आह्वान भी किया कि वह अपना संघर्ष स्वयं संचालित कर पृथक दल बनाए जिससे उत्तरदायी शासन हेतु आंदोलन प्रारंभ हो सकें।

प्रजामण्डल के सम्मेलन में यह भी विचार व्यक्त किया गया कि स्वराज की शीघ्र प्राप्ति हेतु भारत की सभी रियासतों का संयुक्त रूप से ब्रिटिश भारत के साथ संवैधानिक रूप से संबंध किया जाना चाहिए तथा भारतीय जनता को नए संविधान की रचना में भागीदारी मिलना चाहिए। प्रजामण्डल का दबाव था कि जनप्रतिनिधि द्वारा गठित प्रतिनिधि सरकार को नियम बनाने और शासन पर नियंत्रण रखने के साथ ही वित्तीय व्यवस्था के संचालन का अधिकार भी होना चाहिए और रियासतों की जनता को सरकार के स्वरूप के निर्धारण का अधिकार होना चाहिए, साथ ही साथ इसे जनता के प्रतिनिधियों द्वारा संचालित किया जाना चाहिए। प्रजामण्डल का भी यह मत था कि रियासतों के राजकीय कोष को पृथक रखते हुए शासक के व्यक्तिगत खर्च की अलग व्यवस्था होनी चाहिए। इसके अलावा एक ऐसी न्याय व्यवस्था की स्थापना की जानी चाहिए जो कि कार्यपालिका से खुद को पृथक रखकर स्वतंत्र इकाई के रूप में कार्य कर सके।

भारतीय स्टेट कमेटी ने प्रजामण्डल को रियासतों की जनता के प्रतिनिधि के रूप में स्वीकार करने से इंकार कर दिया। कमेटी का मत था कि केवल राजा महाराजा ही रियासतों की जनता का प्रतिनिधित्व करते हैं। कमेटी ने यह भी कहा कि उसे जिन मुद्दों पर विचार–विमर्श करना है, उनमें भारतीय रियासतों के राजा व जनता के संबंधों का विषय सम्मिलित नहीं है। कमेटी ने यह भी घोषणा की कि सार्वजनिक संस्थाओं तथा निजी व्यक्तियों के द्वारा व्यक्त साक्ष्यों को स्वीकार करने का भी अधिकार कमेटी के पास नहीं है, अतः कमेटी ने प्रजामण्डल को प्रश्नावली भी देने से इंकार कर दिया। प्रजामण्डल ने मत व्यक्त किया कि वह रियासत में निवास कर रही जनता द्वारा गठित संगठनों का प्रतिनिधित्व करती है और इस नाते उसे स्टेट्स कमेटी के समक्ष अपने विचार रखने का पूरा अधिकार है। अंत में एक लंबे पत्राचार के बाद इंडियन स्टेट्स कमेटी ने प्रजामण्डल से लिखित ज्ञापन लेना स्वीकार कर लिया किंतु मौखिक प्रमाणों को मानने से इंकार कर दिया। इससे स्पष्ट है कि प्रजामण्डल को प्रारंभ में अनेक समस्याओं एवं बाधाओं का सामना करना पड़ा। अतएव प्रजामण्डल ने एक विस्तृत ज्ञापन तैयार किया जिसमें ब्रिटिश सरकार व भारतीय रियासत के मध्य ऐतिहासिक संबंधों का वर्णन था। इस ज्ञापन में प्रत्येक रियासत ने ब्रिटिश सरकार की सर्वाभौम सत्ता को स्वीकार किया और सहमति व्यक्त की। ब्रिटिश सरकार रियासतों में कुशासन पर अंकुश लगाने का अधिकार रखती है।

प्रजामण्डल ने ज्ञापन के माध्यम से एक आयोग के गठन की स्थापना की माँग की जो इस बात की जाँच करे कि सार्वभौम शासन अपने कर्तव्यों का निर्वाहन कर रहा है अथवा नहीं। ज्ञापन में यह भी माँग की गई कि राजनैतिक विभाग को प्रजातांत्रिक स्वरूप प्रदान किया जाए तथा एक स्वतंत्र न्याय व्यवस्था स्थापित की जाए। प्रजामण्डल ने राजा–महाराजा के इस सिद्धांत को स्वीकार नहीं किया कि रियासतों का संबंध सीधे ब्रिटिश ताज से है न कि भारत सरकार से। रियासतों की आंतरिक परिस्थिति की चर्चा करते हुए ज्ञापन में कहा गया कि कुछ रियासतों को छोड़कर अन्य रियासतों में विधि सम्यक प्रशासन नहीं है अर्थात् जनता की संपत्ति तथा जानमाल की सुरक्षा भी नहीं है अर्थात् रियासतों में प्रतिनिधात्मक सरकार भी नहीं है।

गाँधी जी का मत था कि रियासतों में निवास कर रही जनता को संगठित होकर अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करना पड़ेगा। रियासतों में जो आंदोलन संचालित किए जाएँगे, कांग्रेस उनको नैतिक समर्थन देगी। कांग्रेस ने ब्रिटिश सरकार द्वारा जारी श्वेत पत्र को अस्वीकार कर दिया। यह जनता की आकांक्षा के अनुरूप नहीं था। गाँधी जी के विचारों ने प्रजामण्डल के अनेक नेताओं के मस्तिष्क में संदेह उत्पन्न कर दिया अतएव प्रजामण्डल के अध्यक्ष श्री एन.सी. केलकर ने स्पष्टीकरण मांगा कि गाँधी जी के साथ केलकर का जो पत्राचार हुआ उसका आशय क्या है ? गाँधी जी ने स्पष्ट किया कि कांग्रेस ने रियासतों में हस्तक्षेप न करने की जो नीति अपनाई है वह उचित है क्योंकि ब्रिटिश कानून के अनुसार प्रत्येक रियासत का स्वतंत्र अस्तित्व है। अतएव कांग्रेस उनके आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं कर सकती।

1920 से 1935 तक वर्ष बहुत महत्वपूर्ण थे। इन वर्षों में देश में राजनीतिक चेतना उत्पन्न हुई। महात्मा गांधी के नेतृत्व में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने एक जनसंगठन का रूप ले लिया। 1919 के अधिनियम में व्यवस्था थी कि दस वर्ष की अवधि व्यतीत हो जाने पर एक रायल कमीशन नियुक्त किया जाए जो ब्रिटिश इंडिया में शासन प्रणाली के कार्यकरण की तथा प्रतिनिधि संस्थाओं के विकास की जाँच करे। कमीशन द्वारा मई 1930 में प्रकाशित प्रतिवेदन को सब राजनीतिक दलों ने अस्वीकार कर दिया। इस बीच पं. जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने 1929 में अपने लाहौर अधिवेशन में घोषणा की थी कि पूर्ण स्वराज ही हमारा उद्देश्य है।

इसमें संघीय विधानमंडल में दो सदनों का प्रावधान किया गया। इसमें उच्च सदन के लिए प्रत्यक्ष निर्वाचन की और निम्न सदन के लिए अप्रत्यक्ष निर्वाचन की पद्धति अपनाई गई थी। इस अधिनिमय का संघीय व्यवस्था वाला भाग कभी लागू नहीं हुआ क्योंकि रियासतों को संघ में शामिल होने के लिए तैयार नहीं किया जा सका।

कांग्रेस के भीतर एक ऐसा वर्ग था जो मौलिक विचारों से प्रभावित होकर रियासतों के प्रति व्यवहारिक नीति अपनाने की वकालत कर रहा था। इस वर्ग ने यह माँग की कि कांग्रेस को रियासतों के प्रति अधिक दृढ़ नीति अपनानी चाहिए। उनका यह मत था कि रियासतों में स्थापित राजतंत्र यद्यपि संवैधानिक आधार पर हैं लेकिन यह रियासतों की जनता के मूलभूत अधिकारों के लिए अनुपयुक्त है। अतएव रियासतों में जो व्यवस्था अथवा राजनीतिक तंत्र कार्यरत है उसमें व्यापक परिवर्तन किए जाने चाहिए ताकि वह रियासतों की जनता के मौलिक अधिकारों की रक्षा कर सके। यह वर्ग कांग्रेस समाजवादी के नाम से जाना जाता है। किंतु वह कांग्रेस की तत्कालीन नीतियों में परिवर्तन के उद्देश्य से अधिक प्रभावशाली भूमिका अदा नहीं कर सका। कांग्रेस कार्यकारिणी ने अक्टूबर 1934 के एक प्रस्ताव में भारतीय रियासतों के प्रति मित्रतापूर्वक रुख अपनाने की बात कही किंतु इसके साथ ही उनके आंतरिक मामलों व प्रशासन में हस्तक्षेप न करने की मंशा जाहिर की।

रियासतों में शक्ति का केंद्र राजा महाराजा ही थे। उनके अधिकार बनें रहें, यह हर संभव प्रयास वे कर रहे थे। अतः रियासतों में जनता ने अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए संगठित राजनीतिक आंदोलन प्रारंभ किए। रियासतों में आंदोलन का नेतृत्व स्थानीय नेताओं ने किया। अनेक अवसरों पर सरदार वल्लभ भाई पटेल, जमनालाल बजाज, महात्मा गाँधी, जवाहरलाल नेहरू व जे.पी. कृपलानी ने आंदोलन में मार्गदर्शन किया और आवश्यकता पड़ने पर रियासतों में हस्तक्षेप किया। 1938 में महात्मा गाँधी ने राजकोट रियासत में भूख हड़ताल भी की। रियासती जनता के राजनीतिक संघर्ष का स्वरूप विकसित होता गया।

संदर्भ :

- पैम्पलेट, ओरछा सेवा संघ की आवश्यक बैठक, 24–26 दिसम्बर 1946-
- Menon V.P.-The Story of the Integration of Indian States, Orient Longman, 1969.
- Phadnis Urmila -Towards the Integration of Indian States.
- Handa R.L. -History of the Freedom Struggle in Princely States.
- Azad Abul Kalam, India Wins Freedom, Orient Longman, 1959.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

Natural Disaster Management in India with focus on Floods : A case study of North Bihar

Praveen Kumar Jha
Research Scholar, Magadh University

Key words :- Flood Management, Measures, Flood Forecasting, Flood Control, Flood Management Information System Cell (FMISC

Introduction :- Devastation by floods is a recurrent annual phenomenon in India. Almost every year, some or the other part of the country is affected by floods. Floods cause enormous damage to life, property-public and private, and disruptions to infrastructure, besides psychological and emotional instability amongst the people. Rashtriya Barh Ayog (RBA) had estimated in 1980, total flood-prone area in the country as 40 million hectare (m ha) which was revised further to45.64 m ha by the Working Group on Flood Management set up by the Planning Commission for the 11th Five-Year Plan, based upon the information furnished by the State Governments. Proper management of floods constitutes an important element in national's development activities. In order to protect human life, land and property from flood fury in the country; the state governments had been engaged in flood management works for last 5 decades and a total of 18.22 m ha area has been provided a reasonable degree of protection by the end of 10th Plan. The Working Group on Water Resources constituted by Planning Commission has set a target to protect an additional area of 2.18 million hectare during the XI Plan. Government of India has also been assisting the flood prone states in flood management and anti-erosion works for critical river reaches, by providing financial assistance to the state Governments through a number of centrally sponsored schemes. In order to provide financial assistance to the State Governments for undertaking flood management works in critical areas a state sector scheme, namely, "Flood Management Programme" (FMP) was launched by Ministry of Water Resources under Central Plan, at a total cost of Rs. 8,000 crore. The Government of India has approved continuation of this Programme during XII Plan with an outlay of Rs. 10,000 crore.

FMP during XI Plan the Government of India launched a Flood Management Programme during XI Plan for providing central assistance to the State Governments for taking up works related to river management, flood control, anti-erosion, drainage development, flood proofing works, restoration of damaged flood management works and anti-sea erosion. The salient features of FMP during XI Plan were as under : Funding pattern under FMP Category Central Share State Share (a) Special Category States * 90% 10% (b) Other States 75% 25% (a) Restoration of damaged flood management works 90% 10% * (The Special Category States : North Eastern States, Sikkim, Himachal Pradesh, Jammu & Kashmir and Uttarakhand.) Criteria for inclusion of schemes under FMP.

In India, Bihar is one of the worst affected states due to floods. As per one estimate, in Bihar flood affects about 6.880 million hectares of land out of about 9.416 million hectare, which is about 73.06%. It not only affects the infrastructure but also the socio-economic life in the state. Therefore, there is a need to minimize negative consequences and ill effects of flooding by means of flood management. In Bihar, most of the times, the decision makers go for structural measures like construction of embankments, flood retention walls, flood levees and channel improvements, etc. However, it is felt that structural measures itself is not sufficient to reduce the adverse impacts of floods in the state. Hence non-structural measures like flood plain management policy, building bye-laws, flow and silt management policy are also required. It contemplates the use of flood plains judiciously, simultaneously permitting vacating of the same for use by the river whenever the situation demands. A number of perennial marks Bihar's topography and non-perennial Rivers of which, those originating from Nepal are known to carry high sediment loads that are then deposited on the plains of Bihar. A majority of the rainfall in this region is concentrated in the 3 months of monsoon during which the flow of rivers

increases up to 50 times causing floods in Bihar. According to the Bihar Government's Flood Management Information Systems Cell, floods of Bihar can be divided into 4 categories namely:

Class I: Flash floods– floods occurring due to rainfall in Nepal, lead time is short (8 hours), receding of flood waters is fast;
Class II: River floods– lead time 24 hours, receding of floodwaters is 1 week or more;
Class III: Drainage congestion in river confluence- lead-time more than 24 hours, lasting full monsoon season (i.e. receding of floodwater takes 3 months).
Class IV: Permanent water logged area.

As such, 73.63% of the geographical area of North Bihar is considered to be prone to floods. Out of 38 districts, 28 districts get flooded (of which 15 districts are worst affected) causing huge loss of property, lives, farmlands and infrastructure. During the 2008 Kosi floods, over 350,000 acres of paddy, 18,000 acres of maize and 240,000 acres of other crops were adversely affected, affecting close to 500,000 farmers.

Flood Management Program Measures practiced in India :- Different measures have been adopted to reduce the flood losses and protect the flood plains. Depending upon the nature work, Flood protection and flood management measures may be broadly classified as under:

- Engineering / Structural Measures
- Administrative / Non-Structural Measures

Engineering /Structural Measures :- The engineering measures for flood control which bring relief to the flood prone areas by reducing flood flows and thereby the flood levels are –

- an artificially created reservoir behind a dam across a river
- a natural depression suitably improved and regulated, if necessary or
- by diversion of a part of the peak flow to another river or basin, where such diversion would not cause appreciable damage.
- by constructing a parallel channel by passing a particular town/reach of the river prone to flooding.

The engineering methods of flood protection, which do not reduce the flood flow but reduce spilling, are embankments, channel and drainage improvement works Different aspects of some of the important measures for flood management are enumerated below:

Reservoirs :- Reservoirs can moderate the intensity and timing of the incoming flood. They store the water during periods of high discharges in the river and release it after the critical high flow condition is over, so as to be ready to receive the next wave. Their effectiveness in moderating floods would depend on the reservoir capacity available at that time for absorbing the flood runoff and their proximity to the likely damage centre. They are operated with a carefully planned regulation schedule, which takes into account both the safety of the dam and related structures and the safe carrying capacity of the lower reaches of the river in their present condition.

Reservoirs are more effective for flood management if, apart from the incidental moderation available for any type of storage on a river, specific flood space is earmarked, as in the case of DVC dams across the Damodar and its tributaries. The operation schedule or rule curve being followed should be reviewed and a suitable operation schedule/rule curve prescribed for the monsoon filling to ensure space for flood moderation but which can be filled for conservation at a later stage when high flows end.

Embankments :- Embankments (including ring bunds and town protection works) confine the flood flows and prevent spilling, thereby reducing the damage. These are generally cheap, quick and most popular method of flood protection and have been constructed extensively in the past. These are reported to have given considerable protection at comparatively low costs, particularly in the lower reaches of large rivers. In many places, embankments may be the only feasible method of preventing inundation. Embankments are designed and constructed to afford a degree of protection against floods of a certain frequency and intensity or against the maximum recorded floods till the time of their planning only (in the absence of detailed hydrological data for longer periods) depending upon the location protected and their economic justification. The raising and strengthening of existing embankments have also been taken up in many of the flood prone States. In order that

this work is done adequately, it is necessary to adopt the flood frequency approach in their redesign, taking into account the data of historical floods, which is now available. Construction of embankment with proper roads has been perceived as providing useful communication linkages and reliable surface network for areas that are liable to stand completely cut off during floods and thereafter. They could provide quick communication for facilitating better supervision and maintenance of the flood protection works and provide all weather communication facilities to the adjoining habitats. As such, they are often deemed as the life line during floods. It is also recognized that embankments are not an unmixed blessing. They have adverse effects such as interference with drainage, inability to stand erosion, etc. which should be considered before planning this measure for flood management. As such, this method of flood management may be undertaken only after carrying out detailed hydrological and other studies regarding their favorable and adverse effects.

Channelization of Rivers :- Some of the states are proposing channelization of rivers, at least in certain reaches, in the context of tackling the extensive meandering problems of the rivers, activating navigational channels and training these rivers into their original courses. While venturing to channelize rivers, thought must be given in allowing the river certain freedom to flow and right of way to pass its floodwaters and silt load within its natural waterway. The dynamic nature of the rivers should be appreciated and preventive measures planned accordingly instead of pinning down the river by channelizing.

Drainage Improvement :- Surface water drainage congestion due to inadequacy of natural or artificial drainage channels to carry the storm water discharge within a reasonable period causes damages. It is often difficult to distinguish between flood and drainage congestion situations. This problem is rather acute in Andhra Pradesh, Bihar, Haryana, Punjab, Orissa, Uttar Pradesh, Assam and West Bengal, J&K, Gujarat and Tamilnadu. Therefore, improvement of drainage by construction of new channels or improvement in the discharge capacity of the existing drainage system is recommended as an integral part of the flood management programme in the country.

Diversion of Flood Waters :- Diversion of floodwaters takes a part of the flood discharge to another basin or to the same basin downstream of the problem area or to a depression where it could be stored for subsequent release. This measure can be used to manage unusual floods around cities as in the case of flood spill channel near Srinagar and in the lower reaches of a river near the sea as in the case of Krishna Godavari drainage scheme. Important schemes under execution or under planning are the supplementary drain in Delhi, the outfall channel in Jammu and Kashmir, the Damodar in the lower reaches in West Bengal, the Thottapally Spillway diversion in Kerala, the Kolleru lake diversion into the sea in Andhra Pradesh, the Kama-Pahari drain in Rajasthan and the Hulwaa drain in Uttar Pradesh.

Watershed Management :- The watershed management measures include developing and conserving the vegetative and soil covers and to undertake structural works like check-dams, detention basins, diversion channels, etc. In the watershed management of upper catchment, structural works for retarding the water velocity and arresting silt should supplement land treatment through forestation and grassland development practices.

Administrative / Non-structural Measures :- The administrative methods endeavor to mitigate the flood damages by

- ❖ Facilitating timely evacuation of the people and shifting of their movable property to safer grounds by having advance warning of incoming flood i.e. flood forecasting, flood warning in case of threatened inundation
- ❖ Discouraging creation of valuable assets/settlement of the people in the areas subject to frequent flooding i.e. enforcing flood plain zoning regulation.

Providing absolute protection to all flood prone areas against all magnitude of floods is neither practically possible nor economically viable. Such an attempt would involve stupendously high cost for construction and for maintenance. Hence, a pragmatic approach in flood management is to provide a reasonable degree of protection against flood damages at economic cost through a combination of structural and non-structural measures.

Flood Plain Zoning :- Flood-plain zoning is a concept central to flood plain management. This concept recognizes the basic fact that the flood plain of a river is essentially its domain and any intrusion into or developmental activity therein must recognize the river's 'right of way'. Flood-plain zoning measures aim at demarcating zones or areas likely to be affected by floods of different magnitudes or frequencies and probability levels, and specify the types of permissible developments in these zones, so that whenever floods actually occur, the damage can be minimized, if not avoided. Unfortunately, while all generally endorse this approach in principle, scant attention is given to it in actual practice, leading to increased flood damages. The Central Water Commission (CWC) has continuously impressed upon the states the need to take follow-up action to implement the flood plain zoning approach. The union government in 1975 to all the states also circulated a model draft bill for flood plain zoning legislation.

There has been passive resistance on the part of the states to follow up the various aspects of flood plain management including possible legislation.

Flood Proofing :- Flood proofing measures adopted in India in the past, consisted in raising a few villages above pre-determined flood levels and connecting them to nearby roads or high lands. Under this programme, several thousand villages were raised in Uttar Pradesh in the fifties. In West Bengal and Assam also landfills were attempted in villages to keep houses above flood levels even though nearby agricultural lands were liable to inundation. During X Plan, the Government of Bihar had also constructed, with Central assistance, the raised platforms for safety of the people in flood prone areas of North Bihar.

CWC National Flood Forecasting Network :- The work of flood forecasting and warning in India is entrusted with the Central Water Commission (CWC). Flood Forecasting and flood warning in India was commenced in a small way in the year 1958 with the establishment of a unit in the Central Water Commission (CWC), New Delhi, for flood forecasting for the river Yamuna at Delhi. Presently, there are 878 Hydrological and Hydro-meteorological sites being operated by CWC across the country covering 20 river basins for gauge, discharge, sediment & water quality observations. The formulation of a forecast requires effective means of real time data communication network from the forecasting stations and the base stations (380 nos approx at present). Wireless Communication system installed in almost 550 stations is the backbone of the communication system required for flood forecasting activities. The activity of flood forecasting comprises of Level Forecasting and Inflow Forecasting.

Administrative / Non-structural Measures in Bihar

Flood Management Information Systems Cell :- The Flood Management Information System Cell (FMISC) was established in January 2007 following the GoB administrative order establishing the Flood Management Information System (FMIS). The FMIS was set up as a result of an agreement at a meeting between the GoB and the World Bank in January 2006 at which a water sector partnership matrix and action plan was agreed. A component of the short-term action was to improve the technical and institutional capacity of the state in flood management, in particular the introduction of modern information technologies. The FMISC comprises 23 staff currently in office against sanctioned posts of 34 officers. The Cell is comprised of one Joint Director, two Deputy Directors with an additional Director on deputation, six Assistant Directors and four Engineers on deputation, one JE on deputation, and seven contract staff that have technical specialization remote sensing, GIS, web and IT management, disaster management, among others. In addition, the FMISC also has 14 support staff. The overall aim of the FMIS is to generate and disseminate timely and customized information in order to assist flood management agencies to move from disaster response to disaster preparedness and to effectively support flood control and management in the flood prone areas of Bihar. It was recognized that there was a compelling role and benefit for modern technology to improve decision-making processes before, during and after flood events.

The development of the FMIS was planned in four stages:

- Flood hazard characterization and emergency response;
- Improved flood preparedness and community preparedness;
- Flood hazard mitigation; and
- Integrated flood management.

The initial Phase I (August 2006-June 2008) activities focused on flood hazard characterization and operation of flood management products, supplemented by improved flood forecasts, a flood management website, updated flood control manuals, preparation of plans for upgrading hydrological measurements and telemetry and training of government agency personnel. Subsequent stages of FMIS development seek to encompass enhanced functions and products, supported by improved hydrologic observations and telemetry, more reliable and longer-term rainfall forecasts, enhanced flood forecasting and prediction of inundation using more powerful models, real-time inundation mapping during floods (using Synthetic Aperture Radar, ASAR surveys), real-time flood data dissemination, mapping of floodplain geomorphology using close-contour surveys, establishment of an embankment asset management database, enhanced information flow and communication links together with community outreach and participation programmes providing flood risk assessments and flood warning. The FMISC is supported by the World Bank with training for the staff and for selected WRD personnel. This has included training by the US Army Corps of Engineers on asset management plans for embankments, specialized training on flood forecasting and water resources management. Once a year the FMISC also hosts a training session for the WRD Technical Advisory Committee. Training is required for WRD engineers, particularly those working in the Flood Management Cell, in mathematical modeling, hydrology, meteorology and flood management. This training is provided by the Water and Land Management Institute (WALMI) and does not, surprisingly, involve staff of the FMISC who could cover the mathematical modeling and hydrological aspects. The FMIS website provides the following information: Daily hydro-meteorological status in north Bihar with danger level, water level and rainfall data provided during the flood season (15 June to 15 October); Daily flood bulletin with summarized information on observed rainfall, water levels and 3-day basin-wide rainfall forecasts; Inundation maps showing the aerial extent of flooding. These data are obtained from RADASAT layers and images provided by National Remote Sensing Authority (NRSA); Monthly e-bulletins detailing the work done by the FMISC; End-of-season flood report; District level 5-day rainfall forecasts for Bihar and Jharkhand. The Indian Meteorological Department (IMD) provides these data during the flood season. Currently FMIS is in the process of executing Phase II of the FMIS programme, which consists of several components. Component A of Phase II focuses on institutional strengthening of flood management, Component B focuses on development of FMIS including flood forecast and Inundation modeling as well as development of an embankment asset management system and lastly Component C focuses on community-based flood risk management in targeted areas. The FMISC is also the nodal unit in charge of implementing the flood management component of the World Bank aided Bihar Kosi Flood Recovery Project (see section 7). In addition, the FMISC is supporting the WRD in finalizing anti-erosion works utilizing up-to-date satellite images to aid decision-making as well as during flood fighting periods; the FMISC assists the WRD in actively monitoring critical locations in north Bihar. The FMISC supports the Disaster Management Department by providing some inundation maps, which assist the department in undertaking relief and rescue operations.

Water and Land Management Institute :- The Bihar Water and Land Management Institute (WALMI) was founded in 1983 in Patna under the purview of the Water Resources Department. In 1999, WALMI became an autonomous institution. The institute campus is located less than five kilometers from the WRD headquarters in Patna. The main objectives of the institute are:

- Multi-disciplinary training for engineers from Water Resources and Agriculture departments
- Study and develop solutions to improve the water and land management around existing irrigation systems
- Establish linkages with other institutions involved in water management and collaborate with similar foreign institutions on research subjects.

Act as a knowledge dissemination centre in the field of water and land management. WALMI strives to offer training in computers and water management. Further, farmers are also given training in water management for agriculture. The institute is run mainly by annual grants (95%) provided by the Water Resources Department. Further, revenues generated through fees charged for training facilities and other assets aid the institute. The overall budget estimate for 2011-12 was

Rs.96.71million. This included a maintenance estimate of Rs.51.5 million. The Director is the overall head of WALMI. Professors (SE rank officers), Readers (AE rank officers), and Assistant Professors (EE rank officers) are deputed from WRD for teaching and research stints at
WALMI and report to the Director within their respective hierarchies. In addition, an Estate Officer is in-charge of managing and maintaining the overall assets of the institute. Table 4 below provides a list of staff within WALMI that is currently deputed to WALMI versus the numbers of staff that are sanctioned. The overall figures clearly indicate that there is nearly a 50% shortage of staff in WALMI at all levels. There is specifically a 50% shortage in the number of training staff, which has a more significant impact of the quality and quantity of trainings that WALMI can provide to WRD staff. At present, the Engineer-in-Chief North (E-in-C) who is head of flood management activities in the

Bihar State Disaster Management Authority & Disaster Management Department :- The Bihar State Disaster Management Authority (SDMA) is a strategic body created under the framework of the National Disaster Management Authority (NDMA) at the state level. SDMA at one level translates NDMA guidelines and policies for appropriate implementation in the state and at another level, develops Bihar specific strategies and new initiatives in the space of disaster management. The Chief Minister is the Chairman of the SDMA. Operationally, the Vice-Chairman is responsible for the day-to-day activities of the organization. As a strategic policy level body covering all types of disasters, SDMA does not specialize just in flood related disasters but encompasses all forms of disasters. However, it supports publishing and dissemination of disaster preparedness information with respect to floods. Similarly, they undertake policy level initiatives in preparing the community for flood related hazards by disseminating the do's and don'ts for flood prepared to community members, developing a volunteer task force to be activated during flood events, and training people in swimming and other rescue activities. The Disaster Management Department (DMD) is the nodal agency within the Government of Bihar that provides disaster-related information and provides disaster rescue, relief and rehabilitation functions to affected areas throughout the state. The agency is responsible for coordinating with various departments to ensure preparedness and immediate action towards rescue and relief when a disaster occurs. A state-of-the art disaster control room in Patna and similar centers at district level are part of the overall DMD apparatus. For flood specific disasters, DMD has developed a standard operation manual that offers guidelines about the pre-flood season preparations, coordination mechanisms, and an operating book for the relief and rescue operations during and after the flood event. As part of the study, the operation manual was reviewed and its field level implementation was tested through survey questions. As section 6 will detail, it became clear to the study team that the operation manual is not fully implemented. A detailed study of the gaps between the DMD operation manual and the field implementation needs to be conducted to reveal the specific discrepancies. This was considered to be out of the scope of the current phase of the study. In addition, section six will illustrate that the coordination.

State Administration (District Magistrates Office) :- The state administration at the District Magistrate (DM) level and Block Development Officers (BDO) level are engaged in flood management activities mainly on the functions of communicating with the community, interacting with the media, staying prepared and alert for rescue in the event of a flood and administering the relief and rehabilitation process. In addition, the wide array of developmental projects overseen by the DM and BDO gradually develops the preparedness level of the flood prone areas. For example, they play an instrumental role in constructing physical structures of schools, primary health centers, installation of hand-pumps, and construction of village roads, which together account for both the post-flood reconstruction activities and to ensure flood preparedness of the community. The DMs office is in direct contact with the Circle and Division offices of the WRD on information related to vulnerabilities, rainfall and water levels. The flood management rules section of the Bihar Irrigation, Flood Management and Drainage Rules 2003 (GoB 2003) states three roles for the District Magistrate's Office: a) protecting the embankment from miscreants; b) staying prepared during floods and helping fill any gaps in patrolling and/or administration; and c) removing all encroachments by April every year to facilitate scheduled embankment maintenance works. Although there are further insights to be gained about these linkages, this

study did not focus on the intricate functions of the DM's office with respect to flood management.

State Administration :- Under state administration, the police stations are involved in ensuring that miscreants do not damage flood protection structures. They also play the primary role in maintaining law and order during flood events, rescue and relief activities. This study did not focus on the intricate linkages and functions of the police administration with respect to flood management.

Panchayat Raj Institutions and Elected Representatives :- Panchayat Raj Institutions (PRIs) and elected representatives such as Members of Legislative Assembly (MLA) and Members of Parliament (MP) do not have a formal role in the flood management setup. However, they undertake several informal functions. First, they act as pressure agents in influencing the department on anti-erosion works that needs to be taken. Second, MLAs and MPs have a role in presenting new ideas to the department with respect to flood management structures especially embankments and ensuring connectivity by constructing new roads ensuring repairs that are required are done in a timely manner.

Conclusion :- Flood management does not aim at total elimination or control of floods or providing total immunity from the effects of all magnitudes of floods, which is neither practicable from economic considerations nor even necessary, keeping in view other realities that are faced in the Bihar context. An efficient flood management is a special case of water management and requires a most holistic approach as it involves the management of thousands of micro watersheds in both the catchment and the flood prone areas.

Bibliography :-

1. 1 .Kansal, M.L., Kumar, P. and Kishore, K.A. (2016) Need of Integrated Flood Risk Management (IFRM) in Bihar, 2.National Conference on Water Resources and Flood Management with Special Reference to Flood Modeling, Surat, October 14-15, 2016
2. .Kansal, M.L., Kishore, K.A. and Kumar, P. (2016) Impact of Floods on Sustainable Development and its Management in Bihar, 31st Indian Engineering Congress, Kolkata, December 16-18, 2016
3. Kumar, D. (2015) International Water Resources Association, XVth World Water Congress, Edinburgh, Scotland, May 25 - 29, 20015
4. National Disaster Management Authority (2008) Government of India, National Disaster Management Guidelines, Management of Floods, New Delhi, India
5. Reserve Bank of India (2015) Handbook of Statistics on Indian Economy 2014-15, Reserve Bank of India, New Delhi <https://www.rbi.org.in/scripts/ AnnualPublications.aspx> (Sep. 16, 2015).
6. Sinha, C.P. (2008) Economic & Political Weekly, Management of Floods in Bihar, New Delhi, November 15, 2008
7. Sinha, R., Burton, M., and Tiwari,. G. (2012) Strengthening the Institutional Framework for Flood and Water Management in Bihar, International Growth Centre, London
8. United Nations (1992) "Declaration of the 1992 Rio Conference on Environment and Development", Rio de Janeiro, Brazil, April 1992 .
9. Water Resources Department (2013) Flood Report 2013, Flood Management Improvement Support Centre (FMISC), Water Resources Department, Government of Bihar, Patna, <http://fmis.bih.nic.in/ publications
10. National Oceanic and Atmospheric Administration (2010) Flash flood early
11. warning system reference guide pp: 1-204.
12. World Meteorological Organization (2012) Management of flash flood.
13. Integrated Flood Management Tools Series No.16.
14. Douvinet J, Delahaye D, Langlois P (2013) Measuring surface flow
15. concentrations using a cellular automaton metric: a new way of detecting
16. the potential impacts of flash floods in sedimentary context. Geomorphology,
17. Relief, Environment, Processes 1: 27-46.
18. 14. Creutin JD, Borga M (2013) Radar hydrology modifies the monitoring of flashflood
19. hazard. Hydrological Processes 17: 1453-1456.
20. 15. Pratomo RA (2016) Sensitivity analysis of flash-flood modeling in Grenada,
21. as a small island Caribbean states. The 5th International Symposium on Earth

22. hazard and Disaster Mitigation. AIP Conf Proc 1730, 070002-1-070002-10.
23. *Semi, Naginder S (1989).* "The Hydrology of Disastrous floods in Asia: An Overview"*(PDF). Hydrology and Water Resources Department. London: James & James Science Publishers*. Retrieved 15 September 2010.
24. *Bradshaw, CJ; Sodhi, NS; Peh, SH; Brook, BW (2007). "Global evidence that deforestation amplifies flood risk and severity in the developing world". Global Change Biology.* ***13****: 2379–2395.* doi:10.1111/j.1365-2486.2007.01446.x.
25. *Bradshaw, CJ; Sodhi, NS; Peh, SH; Brook, BW (2007). "Global evidence that deforestation amplifies flood risk and severity in the developing. Also a flood has recently hit Pakistan which is said to be more devastating than the Tsunami of 2005". Global Change Biology.* ***13****: 2379–2395.* doi:10.1111/j.1365s-2486.2007.01446.x

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

महिला सशक्तीकरण मे महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गांरटी योजना (मनरेगा) के प्रभाव का अध्ययन (छतरपुर जिले की राजपुरा ग्राम पंचायत के विशेष संदर्भ मे)

फरीद अहमद सौदागर, (शोधार्थी)
प्रो. श्रीनाथ शर्मा
समाजशास्त्र एवं समाजकार्य विभाग, डॉ हरीसिह गौर विश्वविद्यालय सागर, (म.प्र.)

शोध सारंश :– प्रस्तुत शोध मे छतरपुर जिले की रजपुरा पंचायत मे महिला सशक्तीकरण मे महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गांरटी योजना (मनरेगा) के प्रभाव को देखा गया है महिला संशक्तिकरण की अवधारणा का मुख्य उद्देश्य महिला को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक रूप से सक्षम बनाना है। मनरेगा योजना ने रजपुरा पंचायत मे एक महत्वाकाक्षी योजना के रूप मे महिलाओ को कार्य प्रदान कर उनकी आय मे बृद्धि, पारिवारिक निर्णयो मे भागीदारी और पूर्व की योजनाओ मे प्राप्त सुविधाओ से ज्यादा अच्छी सुविधाए प्रदान कर रही है। पंचायत मे महिलाओ द्वारा योजना मे कार्य करने बाद उनके परिवार, पडौस और समाज के लोगो की प्रतिक्रया भी सकारात्मक एवं समान्य है और राजनैतिक एवं बैकिग व्यावस्था के प्रति भी महिलाओ की जागरूक मे बृद्धि हुई है। 'शोध पत्र मे मनरेगा येाजना मे जाबकार्ड धारी 50 महिलाओ को निदर्श के रूप मे मे लिया गया है निदर्श का चयन उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधी के माध्यम से किया गया है, एवं तथ्य संकलन हेतु साक्षातकार अनुसूची प्रयोग किया गया है।

शब्द कुंजी :– विकास, महिला सशक्तिकरण,मनरेगा योजना

समतामूलक विकास किसी भी देश की प्रगति का आधार होता हैं। विकासशील देशो की तरह विकसित देशो मे भारत ने भी अपनी आजादी के बाद एक ऐसी समन्वित विकास की अवधारणा बनाई जिसमे समाज के सभी वगों को लेकर देश का विकास किया जा सके, इस प्रयास के तहत अनेक कार्यक्रम एवं योजनाऐ भी बनाई गई ।

भारत एक ग्राम प्रधान देश है जिसमे जनसंख्या का सर्वाधिक प्रतिशत ग्रामो मे निवास करता है। ग्राम की सामजिक संरचना, विकास कार्यक्रमो एवं योजनाओ की असफलता के करण समाज की आधी आबादी का प्रतिनिधित्व करने वाला एक वर्ग अर्थात महिलाए विकास की मुख्य धार से अलग हो होने लगी। सरकार द्वारा महिलाओ को विकास की मुख्यधारा मे शामिल करने के लिए महिला सशक्तिकरण की अवधारणा का अपनाया गया।

महिला सशक्तीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जो महिलाओं को भौतिक, बौद्धिक और मानव ससांधनो तक पहुचने और उन पर नियंत्रण कायम करने में सक्षम बनाता है। उनका सशक्तीकरण शक्तियों का एक ऐसा पुर्नरावतरण है जो पुरातन अवधारणाओं को चुनौती देने के साथ ही उन्हें सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक आरै सांस्कृतिक मुद्दों सहित समाज उन सभी पहलुओं से संबंधित निर्णय प्रक्रिया में भागीदारी पद्रान करता है। इसलिए महिला सशक्तीकरण इस प्रक्रिया का एक अभिन्न हिस्सा है और इसमें कोई संदेह नहीं की निर्णय प्रक्रिया में भागीदारी के बल पर सच्चे अर्थों में उनका सशक्तीकरण संभव हो सकता है [1]

महिला संशक्तिकरण के प्रयासो मे प्रभावी प्रयास के रूप 5 सितंबर 2005 को भारत सरकार ने राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गांरटी अधिनियम (मनरेगा) को 2 फरवरी 2006 से लागू किया। मनरेगा योजना के तहत प्रत्येक वित्तीय वर्ष मे सरकार द्वारा 100 दिन के रोजगार की गारंटी दी गई और इस योजना मे महिला एवं पुरूष दोनो को समान अधिकार प्रदान किये गये।

मनरेगा समीक्षा (2006–12)[2] में मनरेगा येाजना की समीक्षा कर उसके लाभों की चर्चा की गयी है ग्रामीण बेरोजगारी और प्रवजन पर इसके प्रभाव को बताया गया है और महिलांए इस योजना से किस प्रकार लाभान्वित होकर सशक्त हुई है

डॉ कुमार (2008)[3] ने बताया कि महिलाऐं देश की जनसंख्या का महत्वपूर्ण भाग है और देश के आर्थिक विकास को काफी प्रभावित करती है, इसलिए ग्रामीण कार्यक्रमों का सुचारू रूप से संचालन किया जाना आवश्यक है। सरकार द्वारा महिलाओं के लिए सामान्य कार्यक्रमों के साथ–साथ विशेष कार्यक्रमों का संचालन किया जाना चाहिए, जिससे उचित रूप से महिलाओं की ग्रामीण विकास मे भागीदारी सुनिचित होगी।

डॉ. सिंह (2009)[4] ने बताया कि रोजगार गांरटी योजना गॉव के सभी लोगों को ध्यान मे रखकर बनाई गई है। काम ठीक तरह से हो इस हेतु काम की देखरेख में लोगों की भागेदारी सुनिश्चित की गई है। गॉवों मे आवश्यक जरूरतों, जल, जंगल, जमीन के बचाव और उसके विकास की योजना को उचित स्थान दिया गया है। यह योजना गॉव मे सामाजिक बदलाव व संसाधनों का उपयोग सीधे तौर पर पूरे गॉव के विकास में करनें में सहायक है, ओर ग्रामीण विकास एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था के सुधार की दिशा में एक अत्यंत महत्वपूर्ण कदम है।

खरलिंगदोह (2010)[5] ने बताय कि राष्ट्रीय रोजगार गांरटी अधिनियम का प्रारंभ, ग्राम रोजगार परिषद, क्षेत्र रोजगार परिषद, ब्लांक रोजगार परिषद, वित्तीय उपलब्धिया, सामाजिक लेखा परीक्षा, सीमाऍं, नरेगा का महिला सशक्तीकरण पर प्रभाव के बारे मे संक्षेप में उल्लेख किया है।

चौरसिया (2011) [6] ने बताया कि महात्मा गांधी राष्ट्रीय रोजगार गारंटी योजना ने महिलाओं की दशा ही बदल दी है। महिलाएं घर–गृहस्थी का काम निबटाने के बाद गांव में ही काम कर रही हैं और उन्हें पुरुषों के बराबर मजदूरी भी मिल रही है। महिला रोजगार की दिशा में मनरेगा की भूमिका महत्वपूर्ण है। इसके अलावा केंद्र सरकार की ओर से चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं में महिलाओं की हिस्सेदारी बडी है।

कुमावत (2011)[7] ने कहा कि महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना और सूचना के अधिकार ने गरीब तबके को किस तरह से सशक्त किया है –राजस्थान के राजसमंद की विजयपुरा ग्राम पंचायत का भ्रमण कर यह जाना जा सकता है। यहां की सरपंच रुक्मणी देवी ने सूचना के अधिकार का इस्तेमाल कर यह साबित कर दिया कि भ्रष्टाचार रोकने में इसे हथियार के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। उन्होंने सूचना के अधिकार का प्रयोग कर 85 महिलाओं को पेंशन दिलाई। राशन वितरण में चल रही मनमानी को रुकवाया और मनरेगा के तहत गांव की सैकड़ों महिलाओं को स्वावलंबी बनाया। इनकी इसी प्रतिबधता के कारण उन्हें 'इंस्टीट्यूट आफ सोशल साइंस' की ओर से महिला सरपंच लीडर अवार्ड से सम्मानित किया गया है।

पुनिया (2012)[8] ने मनरेगा का विश्लेषण करते हुए इसका प्रभाव मुख्यतः महिलाओं पर केन्द्रित किया गया है जो लैंगिक विमर्श से सम्बद्धित है और स्थानीय अर्थव्यावस्था को मजबूत कर राष्ट्रीय आय में वृद्धि कर रहा है।

शोधपत्र का उद्देश्य :–

1. मनरेगा योजना के प्रभाव से ग्रामीण महिलाओ के सशक्तिकरण का अध्ययन करना।
2. मनरेगा योजना के काम करने वाली महिलाओ की पारिवारिक और सामाजिक स्थिति का अध्ययन करना।

शोधपत्र का उपकल्पना :–

1. मनरेगा योजना के प्रभाव से ग्रामीण महिलाओ का सशक्तिकरण हुआ है।
2. मनरेगा योजना के आने के बाद महिलाओ की पारिवारिक और सामाजिक स्थिति मे सुधार हुआ है।

शोधपद्धति :– प्रस्तुत शोध प्रत्र मे मध्यप्रदेश के सागर संभाग के छतरपुर जिले के विजाबर ब्लांक की राजपुरा ग्रामपंचायत को लिया गया है। राजपुरा पंचायत मे मनरेगा येाजना मे जाबकार्ड धारी 50 महिलाओ को निदर्श के रूप मे मे लिया गया है निदर्श का चयन उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधी के माध्यम से किया गया है, एवं तथ्य संकलन हेतु साक्षातकार अनुसूची प्रयोग किया गया है।

तथ्यो का बर्गीकण एवं सारणीयन

तालिका कमांक–1
मनरेगा योजना मे कार्य के वर्षो के आधार पर वर्गीकरण

किसी भी योजना की सफलता तभी संभव है कि जब उसका लाभ लेने वाले लाभार्थीयो उस योजना से कितने समय से जुडे है ये जानकारी हो मनेरगा येाजना मे कार्य करने के समय के आधार पर प्राप्त तथ्यो के विश्लेषण से स्पष्ट है, कि 20 प्रतिशत उत्तरदाता 1 वर्ष से , 30 प्रतिशत उत्तरदाता 2 वर्ष से, 10 प्रतिशत उत्तरदाता 3 वर्ष से एवं 40 पतिशत महिला उत्तरदाता प्रारंभ से ही मनेरगा योजना के अन्तर्गत कार्य कर रही है । अतः स्पष्ट्र है कि योजना मे सर्वाधिक उत्तरदाता प्रारंभ से कार्य करने वाले है।

तालिका कमांक– 2
मनरेगा योजना मे काम करने के बाद उत्तरदाताओ की आय की वृद्धि की स्थिति

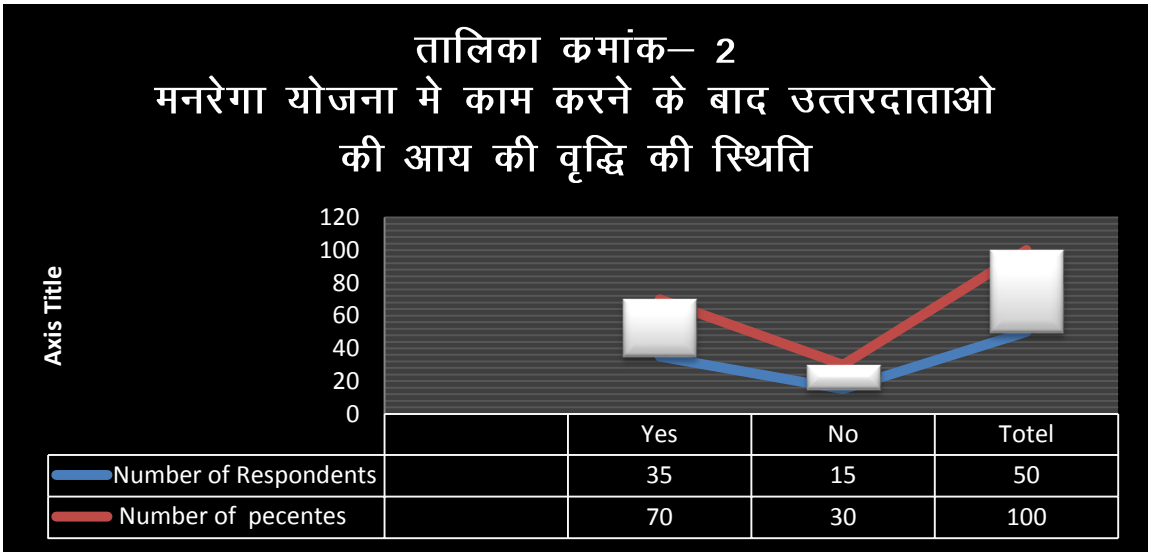

	Yes	No	Totel
Number of Respondents	35	15	50
Number of pecentes	70	30	100

परिवार मे महिला आय मे बृद्धि से परिवार की आर्थिक स्थिति अपने आप ही उच्च होने लगती है। योजना मे कार्य करने के बाद उत्तरदाताओ की आय की क्या स्थिति से प्राप्त तथ्यो के विश्लेषण से ज्ञात हुआ कि मनरेगा योजना मे कार्य करने के बाद 70 प्रतिशत महिलाओ की आय मे बृद्धि हुई है। जबकि 30 प्रतिशत महिलाओ ने माना कि आय मे बृद्धि सामान्य बृद्धि हुई।

तालिका कमांक– 3
पारिवारिक निर्णयो मे भागीदारी मे मे वृद्धि का अध्ययन

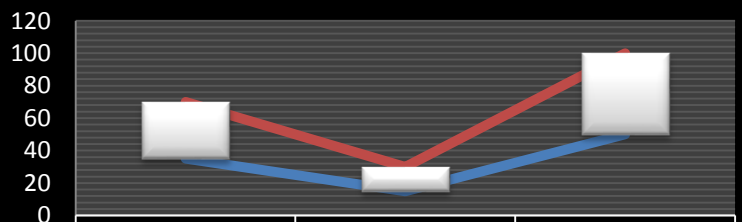

	Yes	No	Totel
Number of Respondents	35	15	50
Number of pecentes	70	30	100

किसी भी व्यक्ति की परिवार मे स्थिति का अध्ययन इस आधार पर लगाया जा सकता है कि उसकी पारिवारिक निर्णयो मे कितनी भागीदारी है । मनरेगा योजना मे काम करने के बाद उत्तरदाताओ के पारिवारिक निर्णयो मे भागीदार के सबंध मे प्राप्त तथ्यो के विश्लेषण से स्पष्ट हुआ कि 70 प्रतिशत महिलाओ की पारिवारिक निर्णयो मे भागीदारी बढी है जबकि 30 प्रतिशत महिलाए ऐसी है जिनकी है योजना मे कार्य करने के बाद पारिवारिक निर्णयो मे भागीदारी नही बढी है।

तालिका कमांक– 4
मनरेगा योजना मे कार्य करने के बाद बचत की स्थिति का अध्ययन

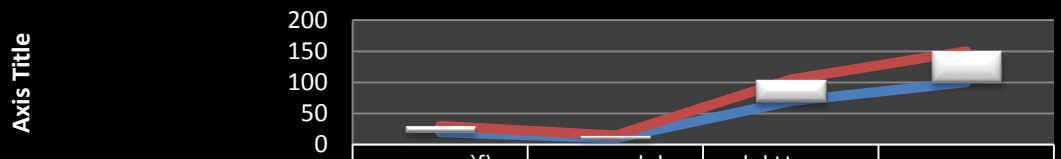

	cpr es c`f) gqbZ gS	cpr es deh gqbZ gS	lekU; cpr gqbZ	;ksx
Number of Respondents	10	5	35	50
Number of pecentes	20	10	70	100

बचत एक ऐसा तत्व है जिससे ज्ञात होता है कि व्यक्ति की आर्थिक स्थिति कैसी है । मनरेगा योजना मे काम करने के बाद बचत की स्थिति के सबंध मे प्राप्त तथ्यो के विश्लेषण से पाया कि 20 प्रतिशत उत्तरदाताओ की बचत मे बृद्धि हुई है, 10 प्रतिशत उत्तरदाताओ की बचत मे कमी आई है और 70 प्रतिशत ऐसे उत्तरदाता एसे है जिनकी बचत की स्थिति समान्य है अतः स्पष्ट है कि मनरेगा योजना मे काम करने के बाद महिलाओ की बचत सामन्य मे सामन्य वृद्धि हुई है

तालिका कमांक– 5
मनरेगा योजना एवं पूर्व मे चलाई जा रही
योजनाओ एवं सुविधाओ का तुलनात्मक अध्ययन

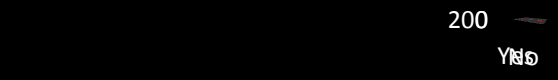

	Yes	No	
Number of Respondents	10	40	50
Number of pecentes	20	80	100

मनरेगा योजना से पूर्व चलाई जाने वाली योजनाओ के तुलनात्मक रूप से तथ्यो का अध्ययन कर ज्ञात हुआ कि 80 प्रतिशत उत्तरदाताओ को मनरेगा योजना की सुवधाए पूर्व योजनाओ से ज्यादा अच्छी लगी है जबकि 20 प्रतिशत ऐसे भी उत्तरदाता है जनके पूर्व की योजनाओ की सुविधाए ज्यादा अच्छी लगी है अतः स्पष्ट है कि मनरेगा योजना की सुबधाए पूर्व मे चलाई जा रही योजनाओ से बहतर है।

तालिका कमांक –6
मनरेगा योजना मे कार्य करने के बाद ग्रामसभा की मीटिग
मे उपस्थिति का अध्ययन

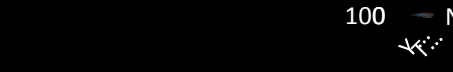

	Yes	No	Totel
Number of Respondents	45	5	50
Number of pecentes	90	10	100

किसी भी गाव की विकास के लिए वहा के विकास कार्य के लिए बनाई जाने वाली योजनाओ और नीतियो मे गाव के लोगो की सहभागिता और सुझाव आवश्यक हेाती हैं, ग्रम सभा एक ऐंसा मंच है जहा गाव के विकास के लिए किये जाने वाले कार्यो मे प्रत्येक व्यक्ति के सुभाव और विचार लिये जाते है। ग्राम सभा मे उत्तरदाताओ उपस्थिति के सबंध मे से प्राप्त तथ्यो के विश्लेषण से यह ज्ञात हुआ कि मनेरगा योजना मे कार्य करने से पहले 90 प्रतिशत महिलाए ग्राम सभा की मीटिग नही जाती थी सिर्फ 5 प्रतिशत महिलाओ ने माना कि वह योजना मे कार्य करने से पहले ग्राम सभा की मीटिग मे भाग लेती थी। अतः कहा जा सकता है योजना मे कार्य करने के बाद महिलाओ मे ग्रामीण विकास मे जागरूकता का विकास हुआ है।

तालिका कमांक– 7
मनरेगा योजना मे कार्य करने के बाद राजनैतिक रूप से जागरूकता का अध्ययन

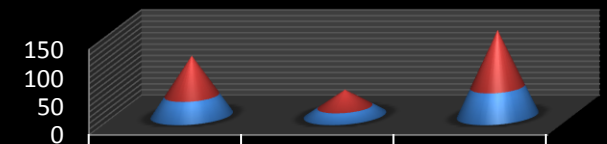

	Yes	No	Totel
Number of pecentes	70	30	100
Number of Respondents	35	15	50

राजनैतिक जागरूकता व्यक्ति को अपने विकास के लिए मार्ग प्रशक्त करती है राजनैतिक रूप से जागरूक व्यक्ति को यह जानकारी रहती है देश, प्रदेश और गांव मे क्या राजनैतिक गतिविधिया चल रही है। मरनेगा योजना मे कार्य करने वाले महिला मजदूर उत्तरदाताओ मे 70 प्रतिशत ने यह माना कि योजना मे कार्य करने के बाद उनकी राजनैतिक रूप से जागरूक हुई है जबकि 30 प्रतिशत उत्तरदाताओ ने कहा कि आज भी वह राजनैतिक रूप से जागरूक नही है। अतः तथ्यो से स्पष्ट है मरेनगा योजना मे कार्य करने के बाद महिलाए राजनैतिक रूप जागरूक हुई है उनको अब यह जानकारी रहती है गाम मे क्या क्या राजनैतिक गतिविधी हो रही है।

तालिका कमांक– 08
मनरेगा योजना मे कार्य करने से पहल उत्तरदाताओ की बैक खाते की स्थिति का अध्ययन

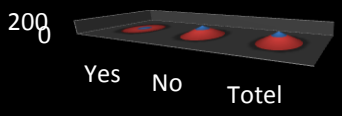

	Yes	No	Totel
Number of Respondents	4	46	50
Number of pecentes	8	92	100

व्यक्ति की बचत उसकी अच्छी आर्थिक स्थिति को बताती है। व्यक्ति अपनी बचत को कहा रखते है यह उसकी जागरूकता का प्रदर्शिता करता है। मनरेगा योजना मे कार्य कर रही महिला उत्तरदाताओ से यह जानकारी प्राप्त की गई कि मरनेगा योजना मे कार्य के पहले क्या बैक मे खाता था। प्राप्त तथ्यो के विश्लेषण से स्पष्ट हुआ कि 92 प्रतिशत उत्तरदाताओ का बैक मे खाता नही था जबकि 8 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओ का बैक मे पहले से खाता था। स्पष्ट है कि योजना के प्रभाव के कारण मजदूरो को बैकिग व्यावस्था का भी ज्ञान हो गया ।

तालिका कमांक– 09
मनरेगा योजना मे कार्य करने से सहकमियो से संपर्क मे वृद्धि का अध्ययन

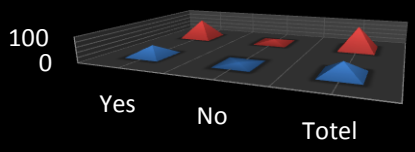

	Yes	No	Totel
Number of Respondents	42	8	50
Number of pecentes	84	16	100

कार्य स्थल पर कार्य कर रहे सहकमियो से साथ अच्छे सबंध जहा एक और कार्य के कार्यक्षमता मे बृद्धि करते है वही दूसरे सहकमिया से संम्पर्क भी स्थापित होते है। मनेरगा योजना मे कार्य कर रही महिला मजदूरो से योजना मे कार्य कर रही अन्य सहकमियो से सबंधो मे बृद्धि के संबंध मे प्राप्त तथ्यो के विश्लेषण से 84 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओ ने माना कि कार्यस्थल पर अन्य महिला सहकर्मियो से उनके संपर्क मे बृद्धि हो हुई है और 16 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओ ने कहा कि सहकमियो से संबंध सामान्य रहे ।

उत्तरदाताओ की सामजिक स्थिति से सम्बंधित तथ्यो के विशलेषण से स्पष्ट हुआ कि उत्तदाताओ मे सवार्धिक उत्तरदाता (56 प्रतिशत) 20से 40 वर्ष की आयु की है और शिक्षा की स्थिति के आधार सर्वाधिक (86 प्रतिशत) उत्तरदाता अशिक्षित है। उत्तदाताओ मे सभी हिन्दु धर्म का मानने वाली है किन्तु वर्ग के आधार पर सर्वाधिक प्रतिशत अनुसूचित जाति (64 प्रतिशत) की उत्तरदाताओ का है। उत्तरदाताओ मे 94 प्रतिशत वैवाहिक जीवन व्यतीत कर रही है एवं 80 प्रतिशत उत्तदाता संयुक्त परिवार मे रहती है। उत्तरदाताओ मे से 68 प्रतिशत उत्तरदाताओ के पास भूमि अधिकार है, वही 80 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे है जो कच्चे मकान मे रह रही है। अतः सामजिक स्थिति से प्राप्त तथ्यो के आधार पर स्पष्ट है कि उत्तरदाताओ मे सर्वाधिक प्रतिशत हिन्दु धमे का मानने वाली अनुसूचित जाति की महिलाओ का है जिसमे 20 से 40 वर्ष की वैवाहित महिलाएं है जो सयुक्त परिवार मे रहती है और इनके पास भूमि अधिकार होते हुए कच्चे मकान मे निवास करती है।

इस प्रकार तथ्यो क विश्लेषण से स्पष्ट है कि मनरेगा योजना एक महत्वाकाक्षी योजना के रूप ग्रामीण विकास मे महत्वपूर्ण योजना है और इस योजना ने महिलाओ को प्रारंभ से कार्य प्रदान कर उनकी आय मे बृद्धि की है। महिलाओ की पारिवारिक निर्णयो मे भागीदारी बढी है और मनरेगा योजना मे पूर्व की योजनाओ मे प्राप्त सुविधाओ से ज्यादा अच्छी सुविधाए है । महिलाओ की योजना मे कार्य करने बाद उनके परिवार, पडौस और समाज के लोगो की प्रतिक्या भी समान्य है, एवं मनेरगा योजना मे कार्य करने बाद महिलाओ की ग्राम सभा की मीटिग मे उपस्थिति बढ गई है। राजनैतिक एवं बैकिग व्यावस्था के प्रति भी महिलाओ की जागरूक मे बृद्धि हुई है, साथ ही सहकमियो से सामाजिक सम्बन्धो मे भी बृद्धि हुई है। तथ्यो के सारणीयन एवं विश्लेषण से हमारे शोधपत्र की प्रथम उपकल्पना (मनरेगा योजना के प्रभाव से ग्रामीण महिलाओ का सशक्तिकरण हुआ है) एवं द्वितीय (मनरेगा योजना के आने के बाद महिलाओ की पारिवारिक और सामाजिक स्थिति मे सुधार हुआ है) दोनो उपकल्पनाए भी सिद्ध होती है। मनरेगा योजना ने समान मजदूरी की दर निर्धारित कर महिलाओ को सशक्त किया है, किन्तु अभी भी योजना मे कियान्यन के स्तर विशेषकर भष्टाचार पर अकुश लगाना आवश्यक है। कियान्वयन स्तर पर सुधार की आवश्यता के साथ यह कहा जा सकता है कि मनरेगा योजना न केवल देश की बल्कि विश्व की रोजगार की गांरटी देने वाली महत्वपूर्ण योजना है।

संदर्भ गंन्थ सूची :–

1. गुरूमयूम खेलेना, एच. सुधीर (दिसंबर, 2009) लेख ''महिलाओं का राजनीतिक सशक्तीकरण'' योजना पत्रिका, पृ–37,
2. MNREGA SAMEEKSHA(2006-2012) an Athology of Research Studies on the Mahatma Gandhi National Rural Employment Gurantee Act, 2005
3. डॉ कुमार, सदीप (मार्च 2008,), 'ग्रामीण विकास और महिला रोजगार' कुरूक्षेत्र पत्रिका, पृ 19

4. डॉ.सिंह, श्रीमती साधना (2009), ग्रामीण विकास एवं राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना/कार्यक्रम', रचना पत्रिका,जनवरी–फरवरी, पृ.65
5. खरलिंगदोह, फ्रीमैन दिसम्बर (2010), लेख 'मेघालय के गॉवों का सशक्तिकरण' , योजना पत्रिका, पृ 17
6. चौरसिया, धनजी सितम्बर (2011), लेख 'रोजगार और स्वास्थ्य रक्षा से सशक्त हुई महिलाएं, ' कुरूक्षेत्र पत्रिका, पृ 15
7. कुमावत, पूरण चंद सितम्बर (2011), ' लेख 'रुक्मणी देवी की सक्रिय भागीदारी से बदली गांव की तस्वीर ' कुरूक्षेत्र पत्रिका, पृ 44
8. Poonia, Jyoti (2012), "Critical Study of MNREGA: Impact and Women's Participation" international journal of informative&futuristic research

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

शासकीय सेवाओं की पदोन्नति में आरक्षण : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

रामसिंग उईके, (शोधछात्र)
डॉ. दिवाकर शर्मा, (प्रोफेसर, शोध निर्देशक)
समाजशास्त्र एवं समाजकार्य विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर, म.प्र.

शोध सारांश :– प्रस्तुत शोधपत्र में शासकीय सेवाओं की पदोन्नति में आरक्षण का समाजशास्त्रीय विश्लेषण किया गया है। शोध पत्र मे आरक्षण के मूल अवधारणा को स्पष्ट करते हुए आरक्षण के ऐतिहासिक आधार से लेकर वर्तमान परिप्रेक्ष्य मे आरक्षण शासकीय सेवाओं की पदोन्नति में हो रहे परिवर्तनों पर विचारिक चिन्तन किया गया है। भारतीय संविधान में अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के उत्थान के लिए विशेष अवसर की उपलब्धता के प्रावधान का वर्णन अनुच्छेद 15, 15(4), 16(4), 29(2), 46 के माध्यम से किया गया है इंदिरा साहनी या नागराज मामले में सुप्रीम कोर्ट के फैसले को यथावत् रखा जाये। जिससे सामाजिक एवं शैक्षणिक रूप से पर्याप्त प्रतिनिधित्व के आधार पर कमजोर, पिछड़े हुए लोगों को समान अवसर दिये जाने के तौर पर पदोन्नति में किस प्रकार की व्यवस्था की जाये जिससे अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के लोगों को मुख्य धारा में साम्मिल हो कर देश के विकास मे बराबर का योगदान दे सके इस पर विस्तृत विमर्श प्रस्तुत किया गया है।

भारतीय समाज का प्राचीन सामाजिक ढाँचा असमानता पर आधारित रहा हैं। कर्म की उच्चता या निम्नता पर आधारित वर्ण व्यवस्था चार वर्णों में विभक्त था। यद्यपि वर्ण व्यवस्था की प्रकृति कर्म आधारित थी। इस व्यवस्था में कर्म के आधार पर असमानता को बनाये रखने के लिए आरक्षित किया गया था, परन्तु कालान्तर में वर्ण व्यवस्था आन्तरिक एवं बाह्य परिस्थितियों के कारण जाति व्यवस्था में परिवर्तित हो गया और जाति व्यवस्था को जन्म के आधार पर स्वीकार किया गया। जाति व्यवस्था में भी वर्ण व्यवस्था की तरह असमानता का विशेषता निहित हो गया। इसमें अनेक जातियां उपजातियों में विभक्त हो गयी और इसमें कुछ समूह तो ऐसे थे जो सामाजिक, आर्थिक व शैक्षणिक दृष्टि से बहुत ही निम्न थे। एम. एन. श्रीनिवास, डॉ. रश्मि चौधरी (अनुवादक) ने अपनी पुस्तक "आधुनिक भारत में जाति" में जाति समूहों के बीच प्रतिस्पर्धा 'जाति के सिद्धान्तों के विरूद्ध जाति हैं'।[1] उन्होंने आगे कहा कि यह सच हैं श्रम का जातिगत विभाजन जातियों के परस्पर आश्रित रहने में सहायक होता हैं और यह बात जजमानी प्रथा में साफ तौर पर देखा जा सकता हैं, लेकिन परस्पर आश्रित होना पूरी कहानी नहीं है। जातिया राजनीतिक और आर्थिक शक्ति एवं उच्च आनुष्ठानिक स्थान प्राप्त करने के लिए परस्पर प्रतिद्वन्द्विता में भी लगी रहती हैं।

भारतीय इतिहास के सभी दौर में उच्चवर्ग की सर्वोच्चता को अस्वीकार करने के प्रयास होते रहे हैं, परन्तु इस शताब्दी में निम्नवर्ग के आन्दोलन, विगत् आन्दोलनों से न केवल विस्तार और प्रभाव बल्कि अपनी सैद्धान्तिक धारणाओं की दृष्टि से भी भिन्न हैं। निम्न वर्ग के नेताओं ने इस बात पर जोर दिया कि वे उच्चवर्ग के समान ही श्रेष्ठ हैं। ब्रिटिश शासकों से वे यह अपेक्षा रखते थे कि वे उन्हें कुछ समय के लिए सुविधाओं के आवंटन में वरीयता दें ताकि यह समानता एक स्थापित सत्य बन जाए। महात्मा ज्योतिबा फुले ने सन् 1873 में सत्यशोधक समाज की स्थापना की, जिसका उद्देश्य जात–पात पर विचार किए बिना मानव मात्र की गरिमा को स्थापित करना था। उन्होंने सन् 1848 में निम्नवर्ग के बालक–बालिकाओं के लिए एक स्कूल खोला। सन् 1851 में निम्न वर्ग के लिए पूना में एक स्कूल की स्थापना की। ज्योतिबा फुले ने सेवाओं और स्थानीय संस्थाओं में सभी जाति के सदस्यों के लिए पर्याप्त प्रतिनिधित्व की मॉग रखी।[2] प्रो0 घुर्ये का अवलोकन हैं कि सेवाओं और स्थानीय निकायों में निम्न वर्ग को विशेष प्रतिनिधित्व दिये जाने की फुले की मॉग, 19वीं सदी के अन्तिम दशकों में तब तक अनसुनी ही रही थी, जब तक कि कोल्हापुर के महाराज (श्री साहू छत्रपति) ने निम्न वर्ग की मॉगों को बुलन्द नहीं किया था। यह श्रेय मुलतः उन्हीं के प्रयासों को दिया जा सकता हैं कि मौंटेग्यू चेम्सफोर्ड सुधारों में मिश्रित मतदाताओं के माध्यम से निम्न वर्ग को विशेष प्रतिनिधित्व की मॉग स्वीकार कर ली गई। इन सुधारों ने मुम्बई के लोगों को तीन राजनीतिक दर्जो

में बॉट दिया। पहले दर्जे में ब्राह्मण और उनकी समवर्ती जातियॉ आती थीं, दूसरे दर्जे में मध्यवर्ती जातियॉ, मराठे एवं अन्य शामिल थे और अन्तिम दर्जे में अछूतों सहित अन्य पिछड़े वर्ग शामिल थे। इस सिद्धान्त का उपयोग सरकारी पदों पर नियुक्तियों के दौरान भी किया गया।[2] यह पिछड़ापन आजादी के छः दशक बाद भी कुछ परिवर्तनों के साथ आज भी विद्यमान है।

जातियों एवं उपजातियों की सामाजिक असमानता को ध्यान रखते हुए भारत के नीति निर्माताओं ने सभी जातियों को चार श्रेणियों में विभक्त कर दिया। ये क्रमशः सामान्य, अन्य पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति हैं जो एकीकृत रूप से आजादी के पश्चात् भी असमान सामाजिक ढाँचे का नेतृत्व वर्तमान में भी कर रही है। इनमें सामाजिक असमानता शुद्धता और अशुद्धता पर आधारित है। इसे हम लुइस ड्यूमा की पुस्तक 'होमो हायरारकीकस' में देख सकते हैं। ड्यूमा ने कहा कि भारतीय जाति व्यवस्था में शुद्धता एवं अशुद्धता के आधार पर ब्राह्मण व क्षत्रिय को शुद्ध बताया, तो वहीं दूसरी वैश्य व शूद्र को अशुद्धता की श्रेणी में रखा। इनमें भी इन्होंनें ब्राह्मण को क्षत्रिय से ऊपर रखा और शुद्र को वैश्य से नीचे रखा है। ड्यूमा ने भारतीय समाज में जाति व्यवस्था का विश्लेषण करते हुए लिखा है कि पवित्र (ब्राह्मण) तथा अपवित्र (शूद्र) के दो विरोधी परन्तु एक–दूसरे पर निर्भर सांस्कृतिक तत्वों से बनी हुई है।[3]

भारतीय समाज में हो रहे परिवर्तन के बारे में उन्होनें कहा कि 'समाज में परिवर्तन हो रहा है, किन्तु समाज का परिवर्तन नहीं हो रहा है।' प्रो. एम.एन. श्रीनिवास 1952 में पुस्तक 'रिलीजन एण्ड सोसायटी अमंग द कुर्गस ऑफ साउथ एण्डिया' में भारतीय सामाजिक संरचना की विवेचना जातिगत सांस्कृतिक गतिशीता के आधार पर किया है। उन्होनें कहा कि 'निम्न जाति अपने से उच्च जातियों के जीवनशैली का अनुसरण करती है और उनमें शामिल होना चाहती है'। यह भी सामाजिक असमानता पर आधारित है।

एम.एन. श्रीनिवास ने रामपुरा गांव के अध्ययन के आधार पर संस्कृतिकरण की अवधारणा प्रतिपादित की जिसमें बताया है कि 'कोई निम्न जाति किसी उच्च जाति, समानता प्रभु जाति को अपना आदर्श मानकर उसके रीति–रिवाजों को अपनाने लगती है तथा कालान्तर में परम्परा से जो स्थान उसे मिला हुआ है उससे ऊँचे स्थान को प्राप्त करने का प्रयास करती है'।

वर्तमान में आरक्षण का उद्देश्य सामाजिक एवं शैक्षणिक रूप से पिछड़े हुए लोगों को अवसर की समानता उपलब्ध कराना हैं ताकि वे सामान्य जीवन–यापन कर सकें। संस्कृतिकरण की प्रक्रिया एवं आरक्षण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण अन्तर यह हैं कि संस्कृतिकरण के लिए निम्न जातियॉ स्वयं प्रयास करती हैं जबकि आरक्षण के द्वारा विशेष अवसर देकर निम्न जाति को सामान्य स्तर पर लाने का प्रयास किया जाता हैं।

प्रख्यात् समाजशास्त्रीय योगेश अटल ने वर्तमान में दी जा रही जाति आधारित आरक्षण व्यवस्था की चर्चा नकारात्मक संदर्भ में की हैं। प्रो. अटल का मानना हैं कि आरक्षण दिए जाने के कई दशक बाद भी इस नीति को बनायें रखना असफलता का सूचक है। अटल के अनुसार पिछली शताब्दीयों में निम्न जाति के लोग उच्च जातियों में शामिल होना चाहते थे परन्तु वर्तमान आरक्षण के कारण उच्च जातिया अपने से निम्न जाति में सम्मिलित होना चाहती हैं।[3] उदाहरण स्वरूप राजस्थान का गुर्जर आन्दोलन इसका प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

प्रो. दीपांकर गुप्ता की पुस्तक "कास्ट एण्ड पॉलिटिक्सः आईडेन्टिटी सिस्टम" में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं अन्य पिछड़ा वर्ग पर आरक्षण के प्रभावों की विवेचना जातियों के राजनैतिक संदर्भ में की गई है। प्रो. गुप्ता ने बताया कि आरक्षण से जाति व्यवस्था भंग हो रही हैं लेकिन जातिगत पहचान प्रबल हो रही हैं।

संविधान में आरक्षण के प्रावधान का उद्देश्य सभी जातियों को सामूहिक रूप सामान्य स्तर पर लाना था इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए पिछड़े वर्गो के लिए सन् 1953 में काका कालेकर आयोग का गठन हुआ। सन् 1978 में वी0 पी0 मण्डल आयोग ने पिछड़े वर्गो को 27 प्रतिशत आरक्षण देने की बात की। जो सन् 1992 में लागू हुई और अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति को संविधान लागू होने से ही क्रमशः 15 प्रतिशत एवं 7.5 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की गई। अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं अन्य पिछड़ा वर्ग के लिए आरक्षण के प्रावधान से इन वर्गो का विकास होने

लगा, लेकिन तुलनात्मक रूप से अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति का विकास अन्य पिछड़ा वर्ग की तुलना में धीमी रहीं क्योकि वे सामाजिक–सांस्कृतिक दृष्टि से अत्यन्त निम्न थे। अतः सन् 1995 में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति को पदों में पदोन्नति के लिए भी आरक्षण की व्यवस्था की गई जिसके सकारात्मक परिणाम आयें हैं। 10 जुलाई 2012 को उच्च न्यायालय उत्तराखण्ड ने श्री विनोद प्रकाश नौतिपालद व अन्य उत्तराखण्ड राज्य व अन्य के बाद में उत्तर प्रदेश लोक सेवाएं अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति एवं अन्य पिछड़ा वर्ग अधिनियम 1994 की धारा 3(7) को निरस्त कर दिया गया हैं। जिससे राज्य की सेवाओं में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लिए पदोन्नति में आरक्षण का प्रावधान करने वाली वर्तमान में कोई धारा मौजूद नहीं हैं।

वर्तमान में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षण के प्रावधान को 7वॉ दशक हो रहा हैं और अन्य पिछड़ा वर्ग के लिए दो दशक पूरे हो गये। प्रारंभ में आरक्षण को 10 वर्ष के लिए संविधान में लागू किया गया था यद्यपि वर्तमान में भी आरक्षण जारी हैं लेकिन आरक्षण उपरोक्त सभी श्रेणी के लोगों को शिक्षा और सामाजिक आधार पर सामान्य स्तर पर लाने का उद्देश्य पूर्ण नहीं हो रहा है इसके पीछे प्रमुख रूप से राजनीतिक कारणों के साथ–साथ स्वयं आरक्षण प्राप्त लाभार्थी भी जिम्मेंदार हैं। यही कारण हैं कि लाभार्थी का परिवार एवं समूह निम्न स्तर पर बना हुआ हैं। इसलिए लाभार्थी के परिवार एवं समूह को पुनः आरक्षण की व्यवस्था करनी पड़ती हैं।

आरक्षण से सम्बंधित पूर्व में किये गये अध्ययन का विश्लेषणकिया गया हैं जो निम्नवत हैं –प्रो. जगन कराडे की पुस्तक "डेवलपमेंट ऑफ सेड्यूल कास्ट एण्ड सेड्यूल ट्राईब इन इंडिया" में चार श्रेणियों में बटे पदों में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति को आरक्षण के बावजूद असमानता का उल्लेख किया गया हैं। आरक्षण के प्रारम्भ होने से लेकर वर्तमान तक आरक्षण के लाभ द्वारा अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति तृतीय एवं चतुर्थ श्रेणी के पदों तक ही पहुॅच पा रहे हैं। प्रथम एवं द्वितीय श्रेणियों के पदों में अभी भी अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति का प्रतिशत बहुत कम हैं।[4]

अनिरूद्ध प्रसाद द्वारा लिखित पुस्तक 'आरक्षण सामाजिक न्याय एवं राजनैतिक संतुलन' में आरक्ष्ण सामाजिक न्याय प्रदान करने की प्रतिबद्धता किस प्रकार राजनैतिक प्रतिबद्धता का रूप ले रही हैं और किस प्रकार आरक्षण के कारण जातीय मानसिकता से संबंधित समस्यायें उत्पन्न हुई हैं, की विवेचना की हैं।[5]

सोनाल्डे देसाई एवं अमरेश दुबे द्वारा लिखित विशेष लेख 'Cost in 21st century india:competing narratives' में 20वीं शदी के मध्य नृजाति अध्ययन में जाति विभिन्नता के अनेक आयाम देखने को मिलते हैं। 21 वीं 'शताब्दी में आर्थिक विकास के परिणाम स्वरूप जाति व्यवस्था वर्ग व्यवस्था के रूप में परिणत हो रही हैं जो सामाजिक विभेदीकरण का एक नया मॉडल प्रस्तुत कर रहा है। जिसकी विवेचना हाशिये के लोगों का नेतृत्व आर्थिक, सामाजिक एवं प्रतिक्रियात्मक शक्ति के रूप में की गई है।[6]

सुखदेव थोराट एवं चितरंजन सेन के द्वारा लिखित लेख 'रिजर्ववेशन इन एम्लायमेण्ट, एजूकेशन एण्ड लेजिस्लेचर स्टेटस इमर्जिन इश्यूज' में भारतीय समाज की संरचनात्मक असमानता और बहिष्कृत तथा भेदभाव परक विशेषताओं की विवेचना जाति एवं नृजातिय आधार पर बहिष्करण के रूप में की हैं। आरक्षण को बहिष्करण एवं भेदभाव परक विशेषताओं को विखण्डन के लिए महत्वपूर्ण माना हैं तथा सरकारी पदो के साथ निजी क्षेत्रों में भी आरक्षण की वकालत की हैं।[7]

प्रो. योगेश अटल द्वारा लिखित सम्पादकिय लेख 'आरक्षण की उलझन' में भारतीय सीमान्त लोगों को दी जा रही आरक्षण के दुरूपयोग की विवेचना की हैं इन्होंने बताया कि आरक्षण जाति को एक इकाई मानना सबसे बड़ी गलती हैं क्योंकि हर जाति में कमजोर वर्ग पाया जाता हैं जबकि आरक्षण निर्धारित जाति को ही दी जाती हैं और उन निर्धारित जातियों में आरक्षण का लाभ सम्पन्न वर्ग हजम कर जाता हैं और असली हकदारों तक नहीं पहुॅच पाता हैं।[8] भारत के परिप्रेक्ष्य में सामाजिक रूप से निम्न स्तर पर जीवन यापन कर रहे लोगों के लिए देश के कुछ समाज सुधारकों के सतत् प्रयास से अगडे वर्ग द्वारा अपने ओर अछूतों के बीच बनाई गयी दीवार को तोड़ने का प्रयास किया। इनमें स्वतंत्रता के पूर्व रेत्तामलई, श्रीनिवास, पेरियार, ज्योतिबा फुले, डॉ.

भीमराव अम्बेड़कर, महात्मा गांधी आदि के द्वारा उनकी स्थिति में सुणार के लिए अधिक से अधिक प्रयास किये गये। फिर स्वतंत्रता के बाद इन्हीं के प्रयासों के प्रतिफल स्वरूप भारतीय संविधान में निम्न जातियों, जनजातियों को अनुसूचित कर उन्हें मुख्य धारा में लाने के लिए सरकारी नौकरी आदि में कुछ स्थान आरक्षित रखे गये हैं।

स्वतंत्रता के पूर्व से ही आरक्षण की शुरूआत सकारात्मक रूप से हुई थी, ब्रिटेन प्रधानमंत्री रैम्जे मैकडोनाल्ड ने जब 1932 में भारत के दलित,कमजोर और पिछड़े वर्गो के लिए आरक्षण का प्रस्ताव का रखा तो उस समय गांधी जी ने इसका कड़ा विरोध किया। वही विरोध के उपरान्त डॉ. भीमराव अम्बेड़कर और गांधी के बीच में फिर पूना पेक्ट पर समझौता हुआ। इसमें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने सन् 1935 में पूना पेक्ट समझौता के तहत दलित वर्ग के लिए विधानसभा में अलग निर्वाचन क्षेत्र आवंटित/आरक्षित प्रस्ताव पास किया। ब्रउउनदंस ूतक संसद में भारत सरकार अधिनियम 1935 के तहत आरक्षण का प्रावधान किया गया है। सन् 1942 में डॉ. भीमराव अम्बेड़कर ने दलित, कमजोर वर्गो के लिए अखिल भारतीय दलित वर्ग महासंघ की स्थापना की वही से उन्होंने सरकारी सेवाओं और शिक्षा के क्षेत्र में अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षण मांग की है। और सन् 1946 के समय डॉ. भीमराव अम्बेड़कर को भारत में कैबिनेट मिशन के कई समितियों के सदस्य व भारतीय संविधान के लिए मसौदा समिति का अध्यक्ष बनाया गया। भारतीय समाज में जाति व्यवस्था नामक सामाजिक वर्गीकरण के सदियों से चली आ रही निचली जातियों के भेदभाव घोर उत्पीड़न और अलगांव जैसी स्थिति से निपटने के लिए संविधान में प्रावधान किया। भारतीय संविधान में केवल धर्म, नस्ल, जाति, लिग और जन्म स्थान के आधार के आधार पर भेदभाव का निषेध करता है, बल्कि नागरिकों के लिए समान अवसर प्रदान करते हुए सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गो या अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की उन्नति के लिए संविधान में विशेष धाराएँ रखी गयी हैं। राज्य पिछड़े हुए नागरिकों के लिए किसी वर्ग के पक्ष में जिनका राज्य की राय में राज्य के अधीन सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं हैं या पदों में आरक्षण के लिए उपलब्ध कर सकती हैं। अनुच्छेद 16(4) ऐसा उन लोगों को सामाजिक–आर्थिक समानता प्रदान करने के लिए हैं जो पिछड़े हैं।[9]

संघ या राज्य के क्रियाकलापों से सम्बधित सेवाओं और पदो के लिए नियुक्तियॉ करने में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के दावों का प्रशासन की दक्षता बनाए रखने की संगति के अनुसार ध्यान रखा जायेगा। अनुच्छेद 335 का जो अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों के पक्ष में किसी परीक्षा में अर्हक अंक में छूट दिये जाने या मूल्यांकन के स्तर को निम्न करने के लिए उपबंध करता है वह प्रशासन में दक्षता बनाएं रखने को विचार में लिए जाने को प्रभावित करता हैं। मंडल आयोग का (इन्द्रा साहनी) लेखक शार्टर कांसटीट्यूशन ऑफ इंडिया 14 वॉ सं. 2008 अनुच्छेद 16 (4) के अधीन 1.यह कार्यपालिका आदेश द्वारा भी किया जा सकता है। 2.अनुच्छेद 16 (4) में जिस पिछड़े पन की बात की है। वह मुख्यतः सामाजिक है यह आवश्यक नहीं कि वह सामाजिक और शैक्षिक दोंनो हों। 3. कोई वर्ग तभी आरक्षण पाएगा जब वह पिछड़ा हो और राज्य की सेवाओं में उसका पर्याप्त प्रतिनिधित्व न हों। 4. अनुच्छेद 16 (4) में अनुध्यान आरक्षण 50 प्रतिशत से अधिक नहीं होना चाहिए। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय से ही अनुसूचित जातियों व जनजातियों के लिए शिक्षा, सरकारी नौकरियों में आरक्षण लागू किया है।

भारतीय संविधान में अनुसूचित जातियों व जनजातियों तथा पिछड़े वर्गों के उत्थान के लिए विशेष अवसर की उपलब्धता के प्रावधान का वर्णन अनुच्छेद 15, 15(4), 16(4), 29(2) के खण्ड 2 राज्य को यह अधिकार दिया गया है कि सामाजिक एवं शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए कोई विशेष अवसर की उपलब्धता की व्यवस्था देने से वंचित नही कर सकते, अर्थात् राज्य चाहे तो इनके उत्थान के लिए आरक्षण अथवा अन्य उपबंध कर सकती है जिसे कोई भी व्यक्ति उसकी विधि मान्यता पर हस्तक्षेप नहीं कर सकता और न ही यह वर्ग विभेद उत्पन्न कर सकता हैं। यद्यपि अवसर की उपलब्धता के लिए आरक्षण दिये जाने के बावजूद सरकार ने सन् 1955 में पदोन्नति में आरक्षण दिये जाने का विचार रखा लेकिन जिसका कोई तात्कालिक परिणाम नहीं निकला, परन्तु आगामी समय में विभिन्न राजनैतिक दलों ने इस मुद्दे का राजनैतिक लाभ लिया जो धीरे–धीरे जोर पकड़ता गया और सन् 1992 में इंदिरा साहनी के संदर्भ में सरकार ने पदोन्नति में आरक्षण का आदेश जारी कर दिया। जिसे उच्चतम न्यायालय ने इसे असंवैधानिक करार दे दिया। असंवैधानिक

करार देने के बावजूद सरकार ने इसे विशेष परिस्थिति का केस मानकर पॉच वर्षों के लिए जारी रखा। इसी दौरान सन् 1995 में 77वॉं संविधान संशोधन के द्वारा अनुच्छेद 16 (4ए) के तहत पदोन्नति में आरक्षण को संवैधानिक रूप से लागू किया गया। पदोन्नति में आरक्षण को लेकर सवर्ण जाति के लोगों द्वारा विरोध प्रकट किया जाता है और यह आरोप लगाया जाता है कि इससे जाति कट्टरता बढ़ेगी।

पदोन्नति में आरक्षण के संदर्भ में नया मोड़ 19 अक्टूबर 2006 में नागराज के केस में आया। इससे उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद 16 के धारा 4 (ए) के संदर्भ में महत्वपूर्ण निर्देश जारी किये जो निम्नलिखित है–

1. पदों में अनुसूचित जातियों व जनजातियों की पर्याप्त संख्या बनाये रखने की बात की गई है।
2. पदोन्नति में आरक्षण देने की समय सीमा सुनिश्चित की जाये।
3. न्यायालय में इसे चुनौती नहीं दिया जा सकता है यद्यपि अनुच्छेद 16 को मौलिक अधिकार के अन्तर्गत रखा गया है लेकिन धारा 4 (ए) को मौलिक अधिकार से बाहर कर दिया गया।
4. इसके अतिरिक्त उच्चतम न्यायालय ने एक और महत्वपूर्ण निर्देश जारी किया कि–'पदों में एस.सी. व एस.टी. जातियों की पर्याप्त संख्या होने के बावजूद यदि उनका'शोषण किया जा रहा हो तो उनकी संख्या को सरकार पदों में आरक्षण के माध्यम से और बढ़ा सकती है।

उत्तरप्रदेश में सन् 2007 में मायावती सरकार ने जातियों के पर्याप्त प्रतिशत पदोन्नति में आरक्षण का आदेश जारी किया जिसे सन् 2011 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय में चुनौती दी गई और उसे असंवैधानिक करार दिया गया। परन्तु उच्च न्यायालय के इस निर्णय को 27 अप्रैल 2012 में उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी गई जहां पर इंदिरा साहनी, नागराज केस को आधार बनाते हुए इस निर्णय को पुनः बहाल कर दिया गया और इसमें अनुसूचित जाति एवं अनु जनजाति में भी जातियों के पर्याप्त प्रतिनिधित्व बनाये रखने की बात कही। यद्यपि उच्च पदों में प्रत्येक श्रेणी के अन्तर्गत जातियों के पर्याप्त प्रतिनिधित्व का प्रावधान किया है। पदोन्नति में आरक्षण के संदर्भ में पूरे घटनाक्रम का समाजशास्त्रीय विश्लेषण किया जाये तो आरक्षण देने के पीछे कुछ कारण स्पष्ट दिखाई देते हैं।

पहले कारण को हम इंदिरा साहनी की केस में देख सकते हैं जिसमें सामाजिक पिछड़ेपन को आधार बनाया गया है।

दूसरे केस के संदर्भ में उच्चतम न्यायालय के सन् 2006 में नागराज के केस में दिये गये निर्णय को देख सकते हैं। जिसमें यह कहा गया है कि उच्च पदों में जातियों की पर्याप्त संख्या होने के बावजूद यदि उनका शोषण होता है तो उनकी पर्याप्तता को पदोन्नति में आरक्षण देकर सरकार उसे और बढ़ा सकती है ताकि सामाजिक संतुलन बना रहे।

सुरक्षा के उपाय :–

1. आरक्षण का वार्षिक विवरण प्रस्तुत किया जायें।
2. सरकारी सेवाओं में अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजातियों के पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व की जॉच की जायें।
3. सभी विभागों के पदों में आरक्षण के लिए रोस्टर लागू की जायें ।
4. रोस्टर का वार्षिक निरीक्षण किया जायें।
5. सरकारी सेवाओं में अनुसूचित जातियों व अनुसूचित जनजातियों के लिए रियायतों की निगरानी और उचित कार्यान्वयन सुनिश्चित करना होगा ।

अतः इस संदर्भ में हम यह कह सकते हैं कि सामाजिक असमानता और शोषण एक संवेदनशील मुद्दा है। सामाजिक रूप से वंचित समूहों के लिए सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने में सकारात्मक कारवाई करके सरकारी सेवाओं में अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजातियों के पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व की जॉच की जायें और शासकीय सेवाओं की पदोन्नति में आरक्षण पुनः दिया जाना चाहिए, परन्तु सरकार और राजनीतिक पार्टियों के द्वारा वोट बैंक का आधार बनाकर निम्नश्रेणी के लोगों के साथ असंवेदनशीलता का परिचय दिया रहा है। इससे सामाजिक असमानता और शोषण अत्यधिक होने की सम्भावना हैं, अन्यथा आरक्षण का उद्देश्य कभी पूरा नहीं हो सकेगा और जातिगत कट्टरता तथा वैमनस्य और बढ़ेगा।

संदर्भ :–

1. श्रीनिवास, एम.एन, रश्मि चौधरी (अनुवादक, 2016) "आधुनिक भारत में जाति" राजकमल प्रकाशन प्रा. लि. नई दिल्ली। पृ. 27–28
2. बसु,डी.डी. (2010), "भारत का संविधान", प्रेंटिस हाल आफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
3. अटल, योगेश, (1968)"दी चेन्ज फ्रंटियरस् ऑफ कॉस्ट", नेशलन दिल्ली।
4. कराडे, जगन (2008), "डेवलपमेन्ट ऑफ सेड्यूल कास्ट एण्ड सेड्यूल ट्राईब इन इंडिया", कैम्ब्रिज स्कॉलर पब्लिसिंग, 15 यंगेस्टॉन गारडन्स न्यू कॉसल, एन.ई. 5.2 जे. ए.यू.के.।
5. प्रसाद, अनिरूद्ध (1991), "आरक्षण सामाजिक न्याय एवं राजनैतिक संतुलन", रावत पब्लिकेशन्स 3, एन.–20 जवाहर नगर जयपुर।
6. देशाई, सोनाल्डे एवं दुबे, अमरेश, (2011), ई.पी.डब्ल्यू., 12 मार्च, वाल्यूम XLVI, नवम्बर 2011।
7. थोराट, सुखदेव एवं सेन, चितरंजन, (2007)''शोध पत्र' India Institute of Dalit Studies Working Paper Series Voll II Nov.-5.
8. अटल, योगेश, "आरक्षण की उलझन, जनसत्ता,27 अप्रैल–2013।
9. सिंह, मुकेश कुमार (2010), "कास्ट एण्ड रिजर्वेशन इन इंडिया", दया पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली।
10. सेंगर, शैलेन्द्र (2007), "कास्ट एण्ड रिजर्वेशन इन इंडिया", दया पब्लिकेशन हाउस नई दिल्ली।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

विभिन्न विद्यालयीन वातावरण के हिन्दी माध्यम के उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों के स्व–बोध का अध्ययन

डॉ तृप्ति श्रीवास्तव

शोध सारांश :– प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के किशोर–किशोरियों के हिन्दी भाषा के विद्यालयों के विद्यालयीन वातावरण का उनके स्व–बोध पर प्रभाव का अध्ययन करना था। न्यादर्श के रूप में उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के 120 छात्र एवं 120 छात्राओं का चयन किया गया। डाटा संकलन के लिये विद्यालयीन वातावरण मापनी –डॉ. (कु.) अनीता सोनी एवं डॉ. अशोक शर्मा एवं स्व–बोध मापनी –जी.पी. ठाकुर एवं एम.एस. प्रसाद को लिया गया। यह परिणाम प्राप्त हुआ कि बहुत अच्छे विद्यालयीन वातावरण वाले हिन्दी माध्यम के विद्यालयों तथा सामान्य विद्यालयीन वातावरण वाले हिन्दी माध्यम के विद्यालयों के छात्र, छात्रा तथा विद्यार्थियों के स्व –बोध में सार्थक अंतर नहीं है।

शिक्षा मानव के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान देती है। जन्म लेने के उपरान्त बालक अपने माता –पिता, घर –परिवार से शिक्षा लेता है। कुछ समय पश्चात वह विद्यालय जाकर व्यवस्थित रूप से शिक्षा प्राप्त करता है। इस प्रकार शिक्षा के दो रूप दिखाई पड़ते हैं–1. अनौपचारिक शिक्षा ,जो कुछ भी हम घर परिवार से सीखते हैं अनौपचारिक शिक्षा के अंतर्गत आता है। 2. औपचारिक शिक्षा, जो विद्यालय जाकर व्यवस्थित रूप से प्राप्त की जाय।

विद्यालय में शिक्षा किस प्रकार से प्रदान की जाती है इसका प्रभाव बालक के सम्पूर्ण व्यक्तित्व पर पड़ता है। जिन विद्यालयों का विद्यालयीन वातावरण अच्छा रहता है वहॉ के विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का समुचित विकास होता है। इस विकास में बालक का आन्तरिक एवं बाह्य दोनों प्रकार का विकास सम्मिलित होता है। अच्छा विद्यालयीन वातावरध बालक के स्व का विकास करता है। उसके आत्म विश्वास ,स्व–बोध को बढ़ाता है क्योंकि स्व–बोध की भावना के कारण व्यक्ति समाज में अपना एक विशेष स्थान बनाना चाहता है। उसे इस बात की लालसा रहती है कि वह उव्व पद पर आसीन हो और समाज में प्रतिष्ठित हो सके। इसके विपरीत जिन विद्यालयों में समूहों में सामंजस्य व अंतः क्रिया नहीं रहती है ,सम्बन्धें में नीरसता रहती है तथा कार्य के प्रति जवाबदेही नहीं रहती है उन विद्यालयो के विद्यार्थियों मे स्व का विकास अपेक्षाकृत कम होता है। विभिन्न विद्यालयों में शिक्षा का माध्यम अलग –अलग रहता है। होग, स्मित एवं हैन्सन (1990) ने विद्यालयीन वातावरण व छात्रों के स्व–बोध के मध्य संबंध का अध्ययन किया। न्यादर्श के रुप में मिडिल स्कूल के विद्यार्थियों को लिया गया। यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ कि विद्यालयीन वातावरण छात्रों के स्व–बोध को प्रभावित करता है। मुखोपाध्याय (1988) ने पायाकि उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों का विद्यालयीन परिवेश उनकी शैक्षणिक उपलब्धि व व्यक्तिगत विशेषताओं को प्रभावित करता है।

अध्ययन का उद्देश्य विद्यालयीन वातावरण व विद्यार्थियों के स्व–बोध के मध्य संबंध को जानना था। अच्छे विद्यालयीन वातावरण के हिन्दी माध्यम के विद्यालयों तथा सामान्य विद्यालयीन वातावरण के हिन्दी माध्यम के विद्यार्थियों/छात्र/छात्राओं के स्व–बोध में क्या कोई अन्तर होता है।

उद्देश्य :– उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विभिन्न विद्यालयीन वातावरण वाले हिन्दी माध्यम के छात्र ,छात्रा एवं विद्यार्थियों के स्व–बोध का अध्ययन करना ।

परिकल्पना :– उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विभिन्न विद्यालयीन वातावरण वाले हिन्दी माध्यम के छात्र ,छात्रा एवं विद्यार्थियों के स्व–बोध में कोई सार्थक अन्तर नहीं होता है।

विधि :– प्रस्तुत अध्ययन में सर्वेक्षण अनुसंधान पद्धति का प्रयोग किया गया है।

उपकरण :– प्रस्तुत शोध में निम्नलिखित मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का प्रयोग किया गया है –

1. **विद्यालयीन वातावरण मापनी**– डॉ. (कु.) अनीता सोनी एवं डॉ. अशोक शर्मा
2. **स्व–बोध प्रश्नोत्तरी**– श्री जी.पी. ठाकुर एवं श्री एम.एस. प्रसाद

न्यादर्श :– सर्वप्रथम विभिन्न विद्यालयों के ग्यारहवीं कक्षा के 800 छात्र–छात्राओं का चयन यादृच्छिक रूप से किया गया जिन पर विद्यालयीन वातावरण मापनी का प्रशासन कर विभिन्न विद्यालयों के विद्यालयीन वातावरण का पता लगाया गया। तदुपरांत बहुत अच्छे विद्यालयीन वातावरण के हिन्दी माध्यम के विद्यालयों के 60–60 छात्र–छात्राओं का चयन यादृच्छिक रूप से पुनः किया गया। इस प्रकार अंतिम न्यादर्श के रूप में 240 छात्र–छात्राओं का चयन किया गया।

न्यादर्श –1

विद्यार्थी	संख्या
छात्र	400
छात्राएं	400
योग	**800**

न्यादर्श–2

विद्यालयीन वातावरण	छात्र	छात्राएं
अच्छा	60	60
सामान्य	60	60
योग	120	120

शोध कार्य विधि :– न्यादर्श हेतु यादृच्छिक रूप से चयनित 400 छात्र–छात्राओं (शासकीय एवं अशासकीय दोनों) पर स्व–बोध मापनी का प्रशासन किया गया। तदुपरांत गणना का कार्य किया गया। गणना के उपरांत प्राप्त प्राप्तांकों का सांख्यिकीय विधियों (मध्यमान,प्रमाप विचलन, क्रान्तिक अनुपात एवं प्रसरण विश्लेषण)द्वारा विश्लेषण किया गया व अधिक अच्छे विद्यालयीन वातावरण के हिन्दी माध्यम के विद्यालयों एवं सामान्य विद्यालयीन वातावरण के हिन्दी माध्यम के विद्यालयों के छात्र–छात्राओं के प्राप्तांकों के आधार पर परिणामों का विश्लेषण व व्याख्या की गई।

परिणामों का विश्लेषण एवं व्याख्या :– विभिन्न विद्यालयीन वातावरण वाले हिन्दी माध्यम के विद्यालयों के छात्र, छात्राओं एवं विद्यार्थियों के स्व–बोध के परिणामों का विश्लेषण व व्याख्या निम्न है–

विभिन्न विद्यालयीन वातावरण वाले हिन्दी माध्यम के विद्यालयों के छात्र, छात्राओं एवं विद्यार्थियों के स्व–बोध के तुलनात्मक परिणाम

समूह	विद्यालयीन वातावरण	PPS>SPS	PPS=SPS	PPS<SPS	विद्यार्थी संख्या	काई वर्ग का मान	'पी' मूल्य
छात्र	बहुत अच्छा	43	3	14	60	1.07	झ0ण05
	सामान्य	38	3	19	60		
छात्राएं	बहुत अच्छा	41	5	14	60	5.77	झ0ण05
	सामान्य	35	1	24	60		
विद्यार्थी	बहुत अच्छा	84	8	28	120	2.56	झ0ण05
	सामान्य	73	4	43	120		

स्वतंत्रता के अंश– 2 0.05 स्तर पर सार्थकता का निर्धारित न्यूनतम मान– 5.99

0.01स्तर पर सार्थकता का निर्धारित न्यूनतम मान– 9.21

उपरोक्त तालिका में विभिन्न विद्यालयीन वातावरण के हिन्दी माध्यम के विद्यालयों के छात्र एवं छात्राओं के स्व–बोध के परिणामों से स्पष्ट होता है कि बहुत अच्छे विद्यालयीन वातावरण वाले हिन्दी माध्यम के विद्यालयों तथा सामान्य विद्यालयीन वातावरण वाले हिन्दी माध्यम के विद्यालयों के छात्र, छात्राओं व विद्यार्थियों के स्व–बोध में सार्थक अंतर नहीं है क्योंकि प्राप्त 'काई वर्ग' का मान क्रमशः 1.07, 5.77 व 2.56 आये हैं जो 0.05 स्तर पर सार्थकता के निर्धारित न्यूनतम मान से कम है।

अतः निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि विद्यालयीन वातावरण का हिन्दी माध्यम के विद्यालयों के छात्र, छात्राओं एवं विद्यार्थियों के स्व–बोध पर सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।

हिन्दी माध्यम के विद्यालयों के विभिन्न विद्यालयीन वातावरण के छात्र–छात्राओं के परिणामों से स्पष्ट होता है कि हिन्दी माध्यम के विद्यार्थियों के स्व–बोध पर विद्यालयीन वातावरण का प्रभाव नहीं पड़ा है । प्रस्तुत अध्ययन के परिणाम **रॉबर्ट, एल. विलियम तथा हैरी बियर्स (1970)** के परिणामों से समानता रखते हैं। अपने अध्ययन में उन्होंने पाया कि स्व–बोध का विकास सभी प्रकार की शिक्षा व्यवस्था में समान रूप से होता है। शासकीय विद्यालयों के छात्र एवं छात्राओं, अशासकीय विद्यालयों के छात्र एवं छात्राओं, हिन्दी माध्यम के विद्यालयों के छात्र एवं छात्राओं तथा अंग्रेजी माध्यम के छात्र एवं छात्राओं के स्व–बोध में कोई सार्थक अंतर नही आया है।

है। अध्ययन के परिणामों के आधार पर छात्र, छात्राओं, शिक्षकों, प्रशासन, अभिभावकों तथा भावी अनुसंधान के लिये निम्न सुझाव दिये जा सकते हैं –

- व्यक्तित्व के विकास में स्व–बोध एक महत्वपूर्ण कारक होता है। सकारात्मक स्व–बोध व्यक्तित्व के विकास में अत्यंत सहायक होता है। उच्च स्व–बोध विद्यार्थी को अपने कार्यो को प्रसन्नता पूर्वक करने तथा उसमें सफलता प्राप्त करने के लिये तत्पर करता है।
- विद्यार्थी द्वारा किये गये कार्यों में मिली सफलता, उसके स्व–बोध में वृद्धि करती है।
- कार्यों में सफलता प्राप्त करने के लिये विद्यार्थियों को अपने जीवन लक्ष्य निर्धारित कर अपनी रूचि के अनुसार कार्य करना चाहिये। सफलता स्व–बोध को बढ़ाने में सहायता प्रदान करती है।
- शिक्षक अपने विद्यार्थियों को विभिन्न प्रकार के प्रोत्साहन व पुर्नबलन देकर उन्हें अपने द्वारा किये गये कार्यो का सम्मान करने की प्रेरणा दे सकता है जो उनके स्व–बोध को बढ़ाने में सहायक हो सकता है।
- अभिभावकों को अपनी इच्छा अपने बालक–बालिकाओं पर थोपनी नहीं चाहिये बल्कि उनकी इच्छा के अनुरूप उन्हें कार्य करने की अनुमति प्रदान करनी चाहिये जो उनके स्व–बोध को बढ़ाने में सहायक होगी।
- अभिभावकों को अपने बालक–बालिकाओं में नियमित अभ्यास की आदत डालनी चाहिये क्योंकि नियमित अभ्यास कार्य में पूर्णता लाता है जो बालक–बालिकाओं के स्व–बोध को बढ़ाने (व्यक्तिगत व सामाजिक दोनों) में सहायक होता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ :–

- माथुर एस.एस. (2007–08) **''शिक्षा मनोविज्ञान''**, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा, 28 वॉ संस्करण, पृ.सं. 96–98
- मो. सुलेमान (2008) **''मनोविज्ञान, शिक्षा एवं अन्य सामाजिक विज्ञानों में सांख्यिकी''**, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, छठवॉ संशोधित संस्करण, पृ.सं. 100–159, 283–344, 345–378
- ऋचा चौधरी (2010) **''विकासात्मक मनोविज्ञान''**, पहला संस्करण, राधा पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ.सं. 213–217
- राय, पारसनाथ (1985) **''अनुसंधान परिचय''** लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, पृ.सं. 72–73
- श्रीवास्तव, डी.एन. (2009) **''व्यक्तित्व का मनोविज्ञान''** श्री विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा–2, पृ.सं. 40–47, 97, 112–114
- त्रिपाठी, मधुसूदन (2008) **''विद्यालय संगठन एवं प्रबंधन''**,, शिवा पब्लिकेशन्स, दिल्ली, प्रथम संस्करण, पृ.सं. 22–23
- पटेल राहुल (2002) **''सह शिक्षा व असह शिक्षा विद्यालयों में अध्ययनरत् किशोर छात्र–छात्राओं के आत्मविश्वास, आत्मसम्मान एवं अर्न्तव्यैक्तिक संबंधों का अध्ययन''**, पी.एच.डी. रानी दुर्गावती वि''वविद्यालय, जबलपुर
- पटेरिया, आशा (2004) **''हाईस्कूल के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्य एवं आत्म सम्मान पर शालेय वातावरण**

के प्रभाव का अध्ययन'' पी.एच.डी., रानी दुर्गावती वि''वविद्यालय, जबलपुर

- श्रीवास्तव, भारद (2011) **"राज्य शासन एवं विभिन्न धार्मिक (मिशनरी) सस्थाओं द्वारा संचालित प्राथमिक शालाओं के शैक्षणिक वातावरण एवं शैक्षणिक उपलब्धता का समीक्षात्मक अध्ययन''**, पी.एच.डी., रानी दुर्गावती वि''वविद्यालय, जबलपुर।
- Anderson, C. (1982) **"The search for school climate; a review of the research"**, Review of Educational Research, 52(3), 368-420.
- Hurlock, E.B. (1968) **'Developmental Psychology'**, Tata McGraw Hill Company, Third Edition, P.N. 414-417.
- Shelat Neela (1979) **'Concept of Organizational Climate School Management and Change',** CASE, Baroda, P.N.83.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

भारत में ग्रंथालय एवं सूचना विज्ञान का महत्व

श्रीमती अनुश्री दरेकर
(सहायक ग्रंथपाल), जी. एस. कालेज जबलपुर

डॉ. राकेश कुमार खरे
पुस्तकालयाध्यक्ष, पुस्तकालय एंव सूचना विभाग आइसेक्ट, विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

भारत में ग्रंथालय की परम्परा वैदिक काल से रही है ऋगवेद, उपनिषद जैसें धार्मिक तथा दार्शनिक ग्रंथ, महाभारत रामायण जैसे महाकाव्य एवं मनुस्मृती इस बात का प्रमाण है। ब्रिटिश भाासन में भी इस क्षेत्र में काफी प्रयास किये गये। भारतीय ग्रंथालय आंदोलन में डॉ. रंगनाथन का आगमन इतिहास में एक महत्वपूर्ण घटना हैं।

भारत देश को स्वतंत्र हुए 62 साल हो गये लेकिन गांवो में शिक्षा के क्षेत्र में जैसी उन्नति होनी चाहिए अभी नहीं हुई हैं। सबसे बुरे हालात प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक शिक्षा की हैं। जिनके लिए सरकार स्वयं के पुस्तकालयों की स्थापना नहीं कर सकी है। इसी प्रकार माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालयों के पुस्तकालयों की स्थिति भी ठीक नहीं है। इन विद्यालय पुस्तकालयों के लिए ना तो भवन की व्यवस्था है और न ही उपयुक्त पाठ्य सामग्री का संग्रह है। अतः वर्तमान समय में भारत में विद्यालय पुस्तकालयों की स्थिति सोचनीय है। भाहरी क्षेत्रों में शिक्षित लोगों की रूची अधिक है। भारत में कई बड़े बड़े पुस्तकालय मौजूद हैं। सबसे मुख्य पुस्तकालय कोलकाता की नेशनल लायब्रेरी है जिसमें दस लाख पुस्तकें है। भारत का दूसरा बडा पुस्तकालय बडौदा का केंन्द्रीय पुस्तकालय हैं इसमें 1 लाख 31 हजार पुस्तकें हैं।

आधुनिक युग विज्ञान का युग है। ज्ञान प्राप्त करना स्वयं एक शिक्षा हैं शिक्षा के लिये पुस्तकालय एवं वाचनालय का विशेष योगदान सदैव रहता हैं शिक्षा का सीधा सम्बन्ध व्यक्ति से होता हैं। क्योंकि व्यक्ति शिक्षित होता हैं। एवं ऐसे ही शिक्षित व्यक्तियों से समाज बनता हैं। शिक्षा के लिए पाठ्य सामग्री और उपकरणों की उपलब्धी पुस्तकालयों के माध्यम सें सरलता पूर्वक की जा सकती है। शिक्षा का सही मुल्यांकन पुस्तकालयों और वाचनालयों द्वारा किया जा सकता है। पुस्तकालयों में शिक्षा के लिए उपयुक्त रोचक व अत्यंत सरल भाषा में लिखित पाठ्य सामग्री उपलब्ध होती हैं। प्रतिदिन कला, विज्ञान, वाणिज्य, तकनीकी एवं अन्य विशयों पर नवीनतम ज्ञान व शिक्षा का निरंतर विकास हो रहा हैं। जैसे जैसे शिक्षा का महत्व बढता जा रहा हैं। वैसे ही शिक्षा के साथ साथ पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान का महत्व बढ रहा हैं।

ग्रन्थ शिक्षा का आधार होते हैं तथा ग्रन्थालय शिक्षा के पूरक एवं सहयोगी माने जाते हैं। क्योंकि ग्रन्थालय न केवल शिक्षार्थियों को ग्रन्थ प्रदान करते हैं बल्कि उन्हें अनेक प्रकार से अतिरिक्त सहायता भी प्रदान करते हैं। इस प्रकार शिक्षा के लक्ष्य की प्राप्ति में ग्रन्थालय एक अहम् भूमिका अदा करता हैं। समाज में उन्नति एवं पुनर्गठन ग्रन्थालयों द्वारा प्रदत्त सेवाओं के द्वारा ही सम्भव हैं।

आधुनिक समाज के विकास में ग्रन्थालय का महत्वपूर्ण योगदान हैं। दिनों दिन ग्रन्थालय का महत्व एवं आवश्यकता बढती जा रही हैं। इसी आवश्यकता को ध्यान में रखकर ग्रन्थालयों को भी सही दिशा में कार्य करने की जरुरत है। इस हेतु ग्रन्थालय प्रशिक्षण अहम भूमिका अदा कर सकती है। असल में एक हद तक भारत में ग्रन्थालय की स्थिती ग्रन्थालय प्रशिक्षण की उपलब्धता, प्रशिक्षण सामग्री, प्रशिक्षण की विधियों को प्रदर्शित करती हैं। इसलिये ग्रन्थालय प्रशिक्षण केंद्रों पर अधिक जिम्मेदारी बनती है। इस दिशा में भारत में लगातार प्रयास जारी हैं इस बात को विस्तार से जानने के लिये हम भारत में पुस्तकालय के एवं पुस्तकालय विज्ञान के इतिहास पर एक नजर डालते हैं।

प्रथम लाइब्रेरी स्कूल, बरोडा, 1911 :– देश का पहला लाइब्रेरी स्कूल डब्लू ए बोर्डन ने 1911 में बरोडा में प्रारंभ किया जिसमें ग्रन्थालय प्रशिक्षण का औपचारिक पाठ्यक्रम शुरु किया गया। बरोडा राज्य के महाराजा सयाजी राव गायकवाड ने अमेरिका के एक ग्रंथपाल को आमंत्रित किया था।

द्वितीय लाइब्रेरी स्कूल,पंजाब विश्वविद्यालय (वर्तमान में पाकिस्तान में स्थित)1915 :– दूसरा ग्रन्थालय प्रशिक्षण पाठ्यक्रम ए. डी. डीकीनसन ने 1915 मे पंजाब विश्वविद्यालय, लाहौर (वर्तमान में पाकिस्तान में स्थित) में प्रारंभ किया गया।

आंध्रा देसा लाइब्रेरी एसोसियेशन कोर्स 1920 :– ए. डी. एल. एसोसियेशन कोर्स 1920 में शुरु किया गया। यह लाइब्रेरी एसोसियेशन द्वारा विजयवाडा में शुरु किया गया पहला प्रशिक्षण पाठ्क्रम था। इस पाठ्क्रम की अवधि 1 माह की थी एवं जिसके लिये निश्चित योग्यता की आवश्यकता थी।

मैसूर स्टेट (कर्नाटक स्टेट 1920) सन 1920 के दौरान ग्रंथपाल एवं ग्रंथालय कर्मियों के लिये कर्नाटक में एकं प्रशिक्षण पाठ्यक्रम शुरु किया गया। यह प्रशिक्षण सर एम. विश्वैसवरैया. (मैसूर के दिवान) द्वारा लाइब्रेरी डेवलपमेंट कार्यक्रम के अंर्तगत बैंगलौर में आयोजित किया गया था।

माला – मद्रास लाइब्रेरी असोसियेशन 1928 :– मद्रास लाइब्रेरी असोसियेशन सन् 1928 में अस्तित्व में आया। इसका श्रेय डा. एस. आर. रंगनाथन को जाता है जिन्होने आगे चलकर इसमें एक वार्षिक समर कोर्स की शुरुआत की।

इम्पीरीयल लाइब्रेरी कोर्स आफ कलकत्ता 1935 :– सन् 1935 में खान बहादुर असदउल्ला खान ने इम्पीरीयल लायब्रेरी में नियमित पूर्ण कालिक डिप्लोमा कोर्स प्रारंभ किया। खान बहादुर ने दो दशकों तक लायब्रेरीयन के रुप में अपनी सेवायें प्रदान की। इम्पीरीयल लायब्रेरी को आज नेशनल लायब्रेरी ऑफ इंडिया के नाम से जाना जाता हैं।

बंगाल लाइब्रेरी एसोसियेशन कोर्स 1935 :– सन् 1935 में बंगाल लाइब्रेरी ने पुस्तकालय के क्षेत्र में क्रांतिकारी कार्य किये। इसी के तहत बासबेरिया में एक पुस्तकालय प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया था। बंगाल लाइब्रेरी एसोसियेशन ने सन् 1937 में एक नियमित प्रमाण पत्र पाठ्यक्रम प्रारंभ किया जो बहुत समय तक चला।

विश्वविद्यालय स्तर पर पाठ्यक्रम आंध्रा विश्वविद्यालय 1935 :– आंध्रा विश्वविद्यालय ने 1935 में एक डिप्लोमा कोर्स प्रारंभ किया एवं उसके बाद मद्रास ने भी एक कोर्स शुरू किया। यद्यपि यह कोर्स 1937 एवं 1947 के बीच बंद रहे।

मद्रास विश्वविद्यालय 1937 :– सन् 1937 में मद्रास विश्वविद्यालय ने एक वर्षीय पूर्ण कालिक स्नातकोत्तर पाठ्यकम शुरू किया जिसमे आगे चलकर पुस्तकालय विज्ञान में डिप्लोमा प्रदान किया गया। यह देश का स्नातकोत्तर स्तर पर दिया जाने वाला पहला डिप्लोमा था जिसने की स्वतंत्रता के पहले एवं बाद में एक माडॅल के रूप में कार्य किया।

सन् 1960 में इस डिप्लोमा कोर्स को बी. लिब. एस. सी. डिग्री द्वारा बदला गया। डॉ रंगनाथन ने उनके सेवानिवृत्त होने तक मद्रास में यह प्रशिक्षण कार्यक्रम शुरू रखा।

1956 में डॉ श्री रंगनाथन ने अपनी जीवनभर की जमा पूंजी 100000/– एक लाख रूपये मद्रास विश्वविद्यालय को दान कर दिये।

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय 1942 :– बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय ने 1942 में स्नातकोत्तर स्तर पर डिप्लोमा कोर्स शुरू किया जिसके पाठ्यक्रम में पुस्तकालय प्रबंधन की जिम्मेदारीयों को सम्भालने एवं दस्तावेजों को किस प्रकार रखना हैं आदि के बारे में पूरी जानकारी दी गई थी।

मुबंई विश्वविद्यालय 1944 :– मुबंई विश्वविद्यालय ने 1944 में दो डिप्लोमा कोर्स शुरू किये पहला कोर्स मेट्रिक पास उम्मीदवारो के लिये था एवं दूसरा स्नातक उम्मीदवारो के लिये था। इन दोनों कोर्स के प्रति लोगों ने बहुत रूझान दिखाया। कई पुस्तकालय कर्मियों ने एवं छात्रों ने 1940 के दशक में मुबंई विश्वविद्यालय से शिक्षा प्राप्त की।

कलकत्ता विश्वविद्यालय 1945 :– पश्चिम बगांल के कलकत्ता विश्वविद्यालय ने भी 1945 में पुस्तकालय विज्ञान में डिप्लोमा कोर्स शुरू किया। अतः स्वतत्रता के पहले केवल उपरोक्त 5 विश्वविद्यालयों में ही शैक्षणिक स्तर पर पुस्तकालय विज्ञान में डिप्लोमा कोर्स कराये जाते थे।

दिल्ली विश्वविद्यालय 1947 :– 15 अगस्त 1947 को मिली आजादी के कुछ ही दिनों पहले दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रथम पुस्तकालय विज्ञान विभाग द्वारा एक वर्षीय स्नातकोत्तर डिप्लोमा कोर्स प्रारम्भ किया गया। यह पुस्तकालय विज्ञान विभाग स्वर्गीय डॉ. एस आर रगंनाथन, स्वर्गीय एस. डी. गुप्ता के कठिन प्रयासों के कारण शुरू हुआ।

यह देश का पहला पुस्तकालय विज्ञान का विभाग था जो विश्वविद्यालय के दूसरे विभागों जैसे ही स्थापित किया गया था। यहां 1948 में एम. लिब. एस. सी. डिग्री शुरू की गई। इस डिग्री के अतिरिक्त रिसर्च कार्य आरंभ किये गये एवं जिसमें आगे चलकर 1948 में ही पी. एच. डी. डिग्री प्रदान करने की व्यवस्था की गई। 1955 में डॉ. एस आर रगंनाथन के स्वर्गवास के बाद 1956 से लेकर 1958 के दौरान एम. लिब. एस. सी. डिग्री कोर्स बंद रहा। 1955 में डॉ. एस आर रगंनाथन के विश्वविद्यालय में रहते हुये ही एक छात्र डॉ. डी बी कृष्णा राव ने अपना पी. एच. डी. का कार्य पूर्ण किया।

इंस्टिटयूट ऑफ लायब्रेरी साइंस 1958–64 :– 1958 में दिल्ली विश्वविद्यालय में इंस्टिटयूट ऑफ लायब्रेरी साइंस की स्थापना की गई। यह भारत में पुस्तकालय विज्ञान की शिक्षा में एक महत्वपूर्ण घटना हैं। जिसे शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार के सहयोग से शुरू किया गया था। इस संस्थान के मुख्य उद्देश्य निम्न थे।

- राज्य स्तर एवं जिला स्तर के सार्वजनिक पुस्तकालय के लिये लाइब्रेरियनों को प्रशिक्षित करने हेतू एक वर्षीय पाठ्क्रम संचालित करना
- पुनश्चर्या पाठ्यक्रम एवं स्पेशलाइज्ड कोर्स संचालित करना

- भारत में पुस्तकालय विज्ञान के लिये शिक्षण सामग्री का निर्माण करना।
- सार्वजनिक पुस्तकालय की समस्याओं के हल के लिये अनुसंधान करना।

1959 में निम्न 6 विश्वविद्यालयों में पुस्तकालय विज्ञान के विभाग खोले गये।

1. अलिगढ मुस्लिम विश्वविद्यालय
2. महाराजा सयाजी राव विश्वविद्यालय
3. नागपुर विश्वविद्यालय
4. उस्मानिया विश्वविद्यालय
5. विक्रम विश्वविद्यालय
6. पूना विश्वविद्यालय

निष्कर्ष :– इस अध्ययन से यह समझ में आता हैं की पुस्तकालयों की महत्ता उपयोगिता एंव उसकी आवश्यकता अक्षुण्ण हैं। मानव के व्यक्तित्व निर्माण में पुस्तकालयों की भूमिका महत्वपूर्ण होती हैं। इसमें शैक्षिक संस्थान का पुस्तकालय हो या सार्वजनिक स्थान का हो या कि व्यक्तिगत हो। पुस्तकालय का अपना अलग अस्तित्व नहीं होता, इसके उद्देश्य इसकी भूमिका, इसके कार्य उस जनता के साथ जुड़े हुये हैं जिसको इनके द्वारा सेवायें दी जाती हैं। देश में पुस्तक एवं पुस्तकालय का महत्व पौराणिक काल से ही हैं। पुस्तकालय शिक्षित मानव समाज का एक महत्वपूर्ण अंग रहा हैं एवं पुस्तकालय विज्ञान की शिक्षा में पिछले कुछ दर्शकों में क्रांतिकारी कार्य हुये हैं। जिसमें डॉ. एस. आर. रगंनाथन को योगदान अभूतपूर्व रहा हैं। वर्तमान परिस्थिती को देखते हुये लगता की अभी भी उच्च शिक्षा के अतंर्गत पुस्तकालय विज्ञान के क्षेत्र में बहुत कार्य करने बाकी हैं।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

YOGA AND MENTAL HEALTH

SMT. Varsha Choubey
Research Scholar, Yoga Deptt, R.D.V.V, Jabalpur

An effective communication of human experiences is the very basis of literature. Indian writing in English, an integral part of English literature, with its immense and notable contributions, has served as an important medium of human thoughts and expressions. The cohort of women writers, especially women fiction writers have delineated the various aspects of human life through a keen understanding of human relationships. As parent child relationship is central to all the human relationships it has been the main subject of exploration of the women fiction writers. Contemporary writing chiefly encompasses the works of these women fiction writers. Anita Desai, Kamala Markandaya, Shashi Deshpande, Suchita Malik, and Manju Kapur are some of the contemporary women writers who have explicitly dealt with the theme of the parent child relationship. As women, they are able to manifest both reverence and dedication for the mother daughter relationship. Thus, this paper makes a sincere attempt to delineate the manifold aspects of the mother daughter relationship in the novels of a well-known contemporary women writer, Manju Kapur.

Manju Kapur has written six novels: Difficult Daughters, A Married Woman, Home, The Immigrant, Custody and Brothers. The protagonists of Manju Kapur are radical women who choose to break the conventional barriers and defy the path laid down by their mothers in the quest of their self-identity. This search presents them with many problems in their life, especially in their familial relationships: "All protagonists in the fictional works of Kapur are women. . . . All of her protagonists struggle to take charge of their own lives. In the course of this struggle they suffer and their lives become difficult to live with" (Nitonde)

Orthodox society is strictly patriarchal and in case of Indian families husbands regulate the patriarchal norms through their wives. Hence, it is the responsibility of the mothers to endow their daughters with the complete understanding of the conformist beliefs and conventions. Being influenced by the radical changes which are witnessed by the society owing to the advent of new technology and developments in the economic, political and social spheres, the daughters challenge the restrictions which are imposed on them by their mothers. This serves as the main reason behind the complicated relationship between the mothers and daughters in the novels of Kapur.

Difficult Daughters (1998), the first novel by Manju Kapur presents the complex mother daughter relationship between three generations of women: Kasturi, Virmati and Ida. Kasturi is traditional woman who sacrifices her whole life to prove herself as an ideal wife, daughter and mother. Therefore, when her daughter challenges the beliefs which are staunchly supported by Kasturi through her willingness to establish her identity through education, she overtly criticizes Virmati's decision: ''Leave your studies if it is going to make you so bad-tempered with your family. You have forgotten what comes first" (Kapur, Difficult 21). Virmati's love affair with a married man, Harish who is an English professor further facilitates her quest for individuality through higher education and career. These unforeseen developments in the life of Virmati engenders as a difficult daughter in the eyes of her family. In view of the profundity of her romantic relationship, Virmati rebels against her whole family and marries her lover. This defiance sours her relations with her family, especially her mother, who is unable to tolerate the implications of Virmati's transgression. Although Virmati is repentant for her misconduct, but being extremely furious with her daughter, Kasturi remains hostile with her:

'Mati – Mati –' chocked Virmati. 'I shouldn't have'
'Why are you telling me you shouldn't have?' . . .

Virmati looked at her mother's face. The eyes were cold and narrow, the brows contorted with rage. There was implacable hostility there. She thought she should die with the pain she felt.

'I shouldn't have come,' she managed bitterly. 'I should have known what to expect.' (220)

When Virmati becomes mother, she shares the fulfilment of the similar expectations from her daughter, Ida as Kasturi had wanted from her. Despite of being a defiant daughter, she becomes a conservative mother because she realizes that it is necessary for the survival of the latter in the patriarchal society.

A Married Woman (2002), the second novel by Kapur, describes the mother daughter relationship between Sita and Astha. Sita is a conformist Hindu woman for whom the marriage of her daughter in accordance to the long-established principles is the main objective in life. It is towards this end that she incorporates strict discipline to ensure the chastity of her daughter throughout her childhood and adolescence. While Astha, owing to her maturational changes, repudiates the wishes of her mother and indulges in romantic pursuits: "Astha has her own dreams and desires. She has her own romantic world" (Patel 51). It is Astha's arranged marriage with an eligible boy named, Hemant Vadera which helps to diminish the problems between her and her mother. After the death of Sita's husband, yet again, complications are created between the mother and daughter. In adherence to her belief in the conformist principles, Sita distances herself from Astha and keeps the expectations of her son-in-law ahead of her daughter. She detaches herself from the world her daughter accepts a solitary life in an ashram in Rishikesh. As far as Astha is concerned, she due to her modern outlook could not relate with the perverse decision of her mother. The writer has shed light on this misunderstanding between the two in the following lines of the novel: Of course you will come and live with us, Ma,' said Astha. . . . 'I am thinking of moving to Rishikesh.' 'Rishikesh? You are going to live there all your life?' Astha was appalled.

'Aree, who knows how long one is going to live? The atmosphere should be pure, one should lead a life of virtue and truth, where and how does not matter. (A Married 85-86)

Home (2006), the third novel by Kapur, skilfully traces the account of the protagonist Nisha's relations with her mother, Sona and surrogate mother, Rupa. Sona, being engrossed in the traditional value system is biased for her son, Raju and remains apathetic towards her daughter Nisha. She could not realize the trauma through which Nisha undergoes because of being sexually abused by her cousin, Vicky in the young age. While Rupa, the sister of Sona and a childless woman, is able to empathize with the suffering of Nisha and accept her as her own daughter when she is sent to her house in the face of the inability of the latter's family to comprehend the reason behind her agony. This distinction between the two is highlighted in the novel through the eyes of Nisha's father, Yashpal: Every time his daughter came home, he noticed how happy she looked. He . . . watched her climb into Rupa's lap when Vicky was there, and observed his wife preoccupied with her son. . . ." (Kapur, Home 72). After few years, Nisha is called back to her home by her family. Sona wanted that Nisha should get well settled in her own home by getting married: "For Sona, the true happiness for a girl lies in her own family" (Vashist 5). Accordingly, she wants that Nisha should shine in her marital home through the art of domesticity and service and observance of Hindu rituals. However, when she finds her daughter lacking in these aspects, because of her modern bent of mind which she has acquired from her aunt, she becomes utterly dejected with Sona and Rupa:

Sona grumbled. 'You take half an hour to peel ten potatoes. How will you manage in your future home?' 'Masi [aunt] said there is always time to learn cooking, but only one time to study.' Nisha tried defending herself. . . . That Masi of yours has ruined your head. What does a girl need with studying? Cooking will be useful her entire life. . . . The mother's anger rose. . . . Spoilt you, do you hear? (Kapur, Home 125)

After reaching college, Nisha becomes engaged with a boy named, Suresh. Her love affair creates fissures in her relations with her conservative family, especially with her mother because Suresh belongs to a poor and low caste family. Sona accosts her for her misbehaviour thus, "Answer me, said her mother, icy-voiced, stony-faced. . . You have been deceiving your parents? . . . Sona raised her hand to strike her" (194). Nisha's family severs all the ties between her and her lover and looks forward to an eligible match for her who could fulfil their expectations of a high caste family with an affluent background. As Nisha's marriage gets delayed due to inadvertent reasons, her mother blames her self-assertion for her uncertain future. It is only after arranged marriage

with a widower named Arvind that Nisha could gain the acceptance of her mother.

The Immigrant (2008) which is the fourth novel by the writer delineates the intricate mother daughter relationship between the characters Shanti and Nina. Shanti and Nina are bound in an intimate relationship after the death of Shanti's husband. They both want happiness and contentment for each other. This closeness between the two gets marred because Nina's marriage gets inadvertently late. Shanti vociferously gets engaged in finding a good match for her daughter who could recuperate the blissful life which Nina had enjoyed in the presence of her IFS father. On account of futile love affair with her teacher, Rahul and her unmarried status at the age of thirty, Nina resents her mother quest for her happiness and security. When the marriage proposal of an Indian born dentist named Ananda who is settled in Canada and possesses all the qualities which Shanti wanted in her son-in-law, she persuades Nina to marry him at any cost. Nina, who does not want to leave her mother and motherland and go and settle in a far-off land with a stranger, is reluctant to accept this offer. This leads to an argument between Nina and Shanti: "Mr Batra (sic) [Shanti] was jubilant. With such a background, how could her daughter not be happy, how could she not? . . . Nina . . . murmured . . . , So eager to send your daughter ten thousand miles away?" (Kapur, The Immigrant 53-54). However, eventually Nina agrees for the marriage and this raises her status as the model daughter.

After her marriage, Nina follows the traditional path laid by her mother and this helps her to establish good relations with her husband. Gradually, her unfocused life bereft of career and children engenders her as desolate and depressed and to "fill the loneliness she yearns for a child but is unable to conceive" (Maitra and Dubey 397-98). Being influenced by the advice of her mother she seeks medical help for her condition but Ananda takes it as the intrusion into his privacy and this creates problems in her marital relationship. In view of the infidelity of Ananda and Nina their marriage suffers but Nina maintains the status quo to remain faithful to the expectations of her mother. However, after her mother's death she chooses a different path and breaks her marriage to procure for herself the same contentment which her mother had tried to provide but along with completely embracing her immigrant identity.

Custody (2012), the fifth novel by the writer traces the journey of the mother daughter relationship by exploring the subjects of marriage, divorce and custody. The ambivalent relationship between the protagonist Shagun and her mother, Mrs Sabharwal is the highlight of the book. The cordial relations which Shagun shares with her mother because of her adherence to the conventional path become difficult because of her unfaithfulness towards her husband, Raman and the decision to neglect the future of her two children Arjun and Roohi and terminate her marriage: People do get divorced, you know, Ma. . . . Are you mad? You want to destroy your home? . . . Really, Mama,' said Shagun, 'what do you want me to do? . . . You want me to kill myself, then you will be happy?' . . . The older generation were hopeless. Abruptly she [Shagun] got up and slammed the door to her childhood bedroom. Mrs Sabharwal watched sadly. (94-95)

"Shagun fought for the freedom she had long wanted but it was at the cost of her children and a happy married life. She dares to come out of the protective environment of the peaceful family setup" (Maji 2). Afterwards, it is Shagun's remarriage with her lover, Ashok which helps to establish harmony between her and her mother. Nevertheless, the battle of custody for her children which Shagun has to fight with Raman after her divorce remains a source of grief for her mother.

The convoluted relations between Mrs Rajora and her daughter, Ishita is the another highlight of the book. Although Ishita follows the path lay down by her family by having an arranged marriage with Suryakant but her infertility sours her relations with her in-laws and her marriage ends up in divorce. This creates fissures in her relations with her mother as a divorcee and childless woman, Ishita makes unconventional choices by seeking adoption and having a clandestine relationship with Raman. Mrs Rajora tries to placate Ishita to share the truth of her love affair with her but Ishita who is not sure about the future of her romantic relationship because of Raman's indecision does not disclose her feelings in front of her mother: "Beta, . . . I only want to be sure that you are not doing anything to harm yourself. 'Mummy please. There is nothing to tell. I am not doing anything to ruin my life. . . . (Kapur, Custody 282). Ultimately, it is the fulfilment of desires of her mother by Ishita through her

remarriage with Raman which helps to diminish the remoteness between her and Mrs Rajora.

Works Cited :-

Goael, Mona. "An Anlaysis of Mother Daughter Relationship in Difficult Daughters." The Criterion: An International Journal in English (2014): 273-278. Web.

Kapur, Manju. Difficult Daughters . New Delhi : Faber, 2010. Print.

Nitonde, Rohinidas. In Search of a Feminsit Writer. New Delhi: Patridge, 2014. Print.

Patel, Rupal S. "Feminsit Perspective of Manju Kapur's A Married Woman." Arts Artium: An International Peer Reviewdcum Referred Journal of Humanities and Social Sciences (2016): 50-55. Web.

Pew, Maji. "Feminsim in Manju Kapur's Custody ." The Criterion: An International Journal in Englsih (2013): 1-6. Web.

Vashist, Shivani. "Manju Kapur's Search for Hime: A Shuttle from Difficult ." Lapiz Lazuli: An Internationa Literary Journal (2011): 1-7. Web.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

हृदय रोग का योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा मे प्रबधंन

डॉ. मनोज कुमार शर्मा
पी. एच. डी. योग

आलेख सार :– चिकित्सा वैज्ञानिकों ने यह पाया है कि हृदय एवं संवहनियों को होने वाले नुकसान का, भोजन में ग्रहण की जाने वाली चर्बी एवं कोलेस्ट्रॉल से निकट का संबंध है। अधिकत चिकित्सक यह मानते है कि आधुनिक एवं पश्चिमी सभ्यताओं के भोजन में आवश्यकता से अधिक मात्र में चर्बी प्रोटीन तथा कैलोरी रहती है। अत्यधिक गरिष्ठ भोजन पाचन तंत्र पर आवश्यकता से अधिक कार्यभार डालता है। आधुनिक कहलाने वाले व्यक्तियों के शरीर में उत्पन्न होने वाले अधिकतर रोगों की जड़ यही है।

वृहद रूप से प्रकाशित एक अमेरिकन शोध पत्र में आकस्मिक कारणों से मरने वाले नौजवान स्वस्थ सैनिकों का पोष्टमार्टम कर उनके हृदय की कोरोनरी धमनियों का अध्ययन प्रकाशित किया गया था। अध्ययन में यह देखा गया कि इन नौजवान सैनिको की कोरोनरी में 20–30 वर्ष की उम्र में चर्बी जमना तथा हासीय परिवर्तन शुरू हो गये थे। उनकी धमनियों की अन्दरूनी सतह पर चर्बी युक्त पदार्थ जम चुका था, जिसे मेडिकल साईस की भाषा में 'एथीरोमेटस प्लेक कहा जाता है। और यही आगे चलकर हृदय रोग उत्पन्न कर देती है। इस शोध पत्र के प्रकाशित होते ही चिकित्सकों में खलबली मच गई, क्योंकि पहले यह माना जाता था कि 55–60 वर्ष के ऊपर यह प्रक्रिया शुरू होकर रोग उत्पन्न करती है। इस शोधपत्र ने यह प्रमाणित कर दिया कि यह रोग बुढ़ापे का नही, वरन छोटी से ही इसकी बुनियादी प्रक्रिया शुरू हो जाती है।

धमनियों में वसा एवं कोलेस्ट्रॉल का जमना अब हृदय संवहनी तंत्र में हासीय परिवर्तनों तथा मृत्यु का एक मूलभूत कारण माना जाता है। रक्त में बढ़े हुए कोलेस्ट्रोल की मात्रा को साधारण शाकाहारी भोजन के सेवन द्वारा कम किया जा सकता है। यह भोजन मुख्यतः अनाज,ताजे फल एवं सब्जियों पर आधारित होता है। वसायुक्त मांस, मक्खन एवं घी, इत्यादि पदार्थो में वसा अधिक होती है। इनकी बजाय मूँगफली या सनफ्लॉवर इत्यादि तेलों का प्रयोग ज्यादा स्वास्थप्रद होता है।

इस प्रकार का शाकाहारी भोजन प्रत्येक हृदय रोगी को अनुशंसित किया जाता है, और अब चिकित्सक यह भी मानने लगे है कि ऐसा भोजन न केवल कोलेस्ट्राल जमने से रोकता है, वरन धमनियों की भित्ती में जमे वसात्मक जमाव को पुनः द्रवीभूत कर रोग की प्रक्रिया को व्युत्क्रमित कर देता है।

एक व्यक्ति जो अधिक वसायुक्त, अधिक कोलेस्ट्रॉल युक्त भोजन गृहण करता है, उसका रक्त द्रव (सीरम) गाठा दुधिया तथा धुधला दिखाई देता है। इसके विपरीत शाकाहारी भोजन करने वाले का सीरम साफ रंगहीन दिखाई देता है। अब हम इस तथ्य का आसानी से अनुमान लगा सकते है कि हृदय को इस वसा कणों से लदे द्रव को दिन–रात निरन्तर वर्षो तक फेंकते रहने में कितना अधिक श्रम करना पड़ता होगा।

हृदय रोग सामान्य परिचय :– हृदय वक्ष स्थल में बाई ओर स्थित है। इसके दोनों और दो फुक्फुस होते है। हृदय आकार पाँच इंच लम्बा, साढ़े तीन इंच चौड़ा तथा ढ़ाई इंच मोटा होता है। इसके ऊपर एक झिल्ली रहती है तथा इसके अन्दर रक्त होता है। हृदय शूद्ध रक्त को शरीर के सभी अंगों में प्रवाहित करता है तथा अशुद्ध रक्त इसके फुक्फुस में चला जाता है जहाँ इसकी शुद्धि क्रिया होती है।

काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, ईष्या, चिंता व शोक से हृदय पर घातक प्रभाव पड़ता है। इनसे बचकर जीवन में संयम बनाये रखें।

हृदय रोग एवं धमनीकाठिन्य जिसमें रक्त नलिकाओं की भित्ति में हासीय परिवर्तन होने लगते है, आज विश्व के आधुनिक मानव समाज के सबसे घातक रोगों में से एक है। प्रतिवर्ष लाखों लोग हृदय रोगों से पीड़ित हो काल के ग्रास बन जाते है। इन रोगों में हृदयघात के अलावा उच्च रक्तचाप, रक्तचाप,रक्ताधिक्य हत्पात एवं लकवा तथा गुर्दे की खराबी इत्यादि आते है। इनके अलावा कई व्यक्ति बार–बार सीने में उठनें वाले दर्द 'हृदयशूल' का अनुभव करते है। ये सभी समस्याएँ हमारी दैनिक जीवनचर्या में शामिल तनावों का हृदय पर कुप्रभाव प्रदर्शित करती है।

हृदय पर पड़ने वाले दबाव एवं क्षति के कारणों एवं प्रभावों की सूची लम्बी एवं जटिल है, जिसमें आहार के अलावा, हृदय पर मानसिक एवं भावनात्मक प्रक्रियाओं के प्रभाव तथा चयापचयी असन्तुलन शामिल है। पाचन एवं प्रजनन तंत्र की प्रक्रियाएँ भी दिल से अक्सर अत्यधिक दवाब की अवस्था में क्रियाशील अपेक्षित करती है।

भौतिक क्रिया विज्ञान :– हृदय, जो मानव की क्रियाशीलता एवं जीवन का केन्द्र है। एक ऐसा अनुठा मांसपेशीय पम्प है जो अपनी विधुत यांत्रिकी गतिविधि द्वारा पूरे शरीर की प्रत्येक

कोशिका तक रक्त के माध्यम से आवश्यक तत्व पहुँचाता है। साथ ही रक्त को फेफड़ो द्वारा शुद्ध कराकर परिसंचरित करता है। हृदय पर पूरे शरीर का जीवन निर्भर है, और इसी निर्भरता के कारण धड़कन रूकने के साथ मिनटो में ही सम्पूर्ण शरीरिक क्रियाएँ ठप्प हो जाती है। हृदय बिना थके रात दिन जीवन के अंकुर फुटने से लेकर अन्तिम श्वास तक कर्मयोगी की तरह अनवरत रूप से गतिशील रहता है। जब शरीर आराम करता है तो इसकी गति मन्द हो जाती है, तथा व्यायाम करते दूरस्थ माँसपेशियों एवं कोशिकाओं तक रक्त की अधिक मात्रा पहुँचाने हेतु फौरन अपनी गति बढ़ा लेता है।

हृदय की रक्त फेंकने की शक्ती उसकी मांसपेशीय में अन्तर्निहित है। ये मांसपेशियों पूरे शरीर से भिन्न विशेष प्रकार की होती है, जो शरीर की किसी भी अन्य माँसपेशी की अपेक्षा अधिक मजबूत एवं सहनशील होती है। इसलिये हृदय आराम किए बिना ही अपनी और पूरे शरीर की जरूरतों को पूरा करने में सक्षम है। शरीर का कोई दूसरा अंग कर्मठता में हृदय की बराबरी नही कर सकता। इसलिए अपने हृदय को स्वस्थ बनाए रखने के लिए ''सन्तुलित भोजन' संयम जीवनशैली आराम एवं व्यायाम में सन्तुलन रखना हमारा प्रथम कर्तव्य है।

हृदय संरचना :– हृदय भीतर से चार प्रकोष्ठों में विभाजित रहता है। उपर के दो 'आलिद' तथा नीचे के दो 'निलय' कहलाते है। रक्त बायें आलिंद से बायें निलय में पहुँचता है। बायाँ निलय रक्त से भरने के बाद अंकुचन करता है, जिसके फलस्वरूप रक्त मुख्य धमनी का वाल्व खोलकर मुख्य धमनी में प्रवेश करता है, जिसके फलस्वरूप रक्त मुख्य धमनी का वाल्व खोलकर मुख्य धमनी में प्रेवश करता है, तथा नलियों की सैकड़ों शाखाओं, प्रशाखाओं में से होते हुए पूरे शरीर में फैल जाता है यह शुद्व रक्त पूरे शरीर की कोशिकाओं को आवश्यक पोषक तत्व एवं ऑक्सीजन प्रदान करने के बाद अशुद्धियों तथा कार्बन –डाई–ऑक्साइड को निकाल लेता है। यह अशुद्ध रक्त शिरा नामक नलियों से होते हुए दायें आलिंद में आता है तथा दायें आलिंद से होते हुए दाये निलय में पहुँचाता है, जो उसे फेफडो की ओर फेंक देता है। रक्त फेफड़ों में कार्बन–डाई–ऑक्साइड छोडकर ऑक्सीजन ले लेता है तथा शुद्ध हो जाता है। यह शुद्ध रक्त फिर बायें आलिंद में पहुँचकर पूरी प्रक्रिया को दुहराता है। इस प्रकार चौबिसों घण्टे यह प्रक्रिया बारम्बार हर धड़कन के साथ एक लयबद्ध तरीके से सम्पन्न होती रहती है। हृदय प्रति मिनट 70–100 बार धड़कन कर एक मिनट में 4–5 बार रक्त को सम्पूर्ण शरीर में परिसंचारित करता है।

रक्त परिसंचरण :– शरीरिक अंगों और हृदय के मध्य रक्त का आदान–प्रदान अनेक छोटी–बड़ी नलिकाओं से होता है, जिन्हें कार्यानुरूप अलग–अलग नाम दिए गये है। हृदय से शरीर के अन्य हिस्सों तक जिन नलिकाओं से रक्त जाता है उन्हें 'धमनी' कहते है। धमनियाँ सबसे लचीली, मोटी एवं मजबूत होती है ताकि हृदय से आने वाले रक्त का सीधा दवाब सह सके कलाई में नाड़ी की धडकन एक धमनी का उदाहरण है जो इसी तथ्य को दर्शाती है। एक बड़ी धमनी अंगो तक पहुँचते–पहुँचते अनेक छोटी–छोटी शाखाओं में विभाजित होते हुए महीन नलिकाओं के जाल में परिवर्तित हो जाती है जिन्हें ''कैपिलरी'' कहते है। ये महीन धागों के सदृश नलिकाएँ (कैपिलरी) ऊतकों एवं कोशिकाओं के सीधे सम्पर्क में आती है। इनकी महीन भित्ती से होकर रक्त से कोशिकाओं तक ऑक्सीजन तथा पोषक पदार्थ चले जाते है। साथ ही कोशिकाओं से उत्सर्जित कार्बन–डाई–ऑक्साइड तथा अवशिष्ट पदार्थ खून आकर मिल जाते है।

धमनी काठिन्य :– रक्त को पूरे शरीर में संचरित करने वाली ये धमनियाँ यदि कड़ी पड़ जाये तो उनकी मित्तीयों का लचीलापन कम हो जायेगा एवं भीतरी व्यास कम हो जायेगा। फलस्वरूप रक्त का दवाब बढ़ जाएगा, ठीक वैसे ही जैसे बगीचे में पानी डालते समय पाइप को दबा देने से पानी की धारा का दबाव बढ़ जाता है। इस दवाब से हृदय पर अधिक भार पडता है, जिससे वह रोग ग्रस्त व कमजोर हो जाता है।

कोरोनरी धमनियाँ :– शरीर की मुख्य धमनियाँ, महाधमनी की शाखाएँ है। महाधमनी की प्रथम दो शाखाएँ ''कोरोनरी धमनियाँ'' कहलाती है। इनकी लम्बाई लगभग पाँच इंच तथा मोटाई 9/8 इंच के लगभग होती है। इनका कार्य हृदय की मांसपेशियों को रक्त की आपूर्ती करना है, जिससे हृदय की मॉस पेशियों को भोजन व ऑक्सीजन मिलती रहे। यदि इनमें से कोई भी नलिका सिकुड़ जाए तो उसके रक्त प्रवाह में थोड़ा–सा भी अवरोध उत्पन्न हो तो सम्पूर्ण परिसंचरण तंत्र के ठप्प होने की सम्भावना है, क्योंकि यदि हृद्मांसपेशियों को आवश्यकतानुसार ऑक्सीजन या पोषण नहीं मिला तो वह कार्य करना बन्द कर देगी और उसमें पीडा की संवेदना उठने लगेगी। जब हासीय परिवर्तन के कारण या चर्बी जमने से कोरोनरी धमनी के छिद्र का व्यास छोटा हो जाता है। तब ऐसा ही होता है। कभी–कभी यही अवस्था खून के थक्के के छोटे–छोटे से टुकड़े के फॅसने से या अत्यधिक तनाव के फलस्वरूप धमनी संकुचन के कारण उत्पन्न हो जाती है। जब हृदय के तरफ रक्त का स्वतः संचार में अवरोध आंशिक हो तो अवस्था कम गम्भीर होती है तथा दर्द हमेशा श्रमसाध्य कार्य करने के बाद ही उठता है। इसे हम 'एंजाइना' या 'हृतशूल/हृदयशूल' कहते है।

धमनी काठिन्य रक्त वाहिनियों की ह्रासीय बीमारी है, जिसमें उनकी भित्तयों में चर्बी जम जाती है, उनका छिद्र छोटा हो जाता है तथा वे कडी पड जाती है। इन सबके कारण उनमें बहने बहने वालें रक्त का प्रवाह अवरूद्व होता है। उनकी भीतरी सतह चिकनी की बजाय खुरदरी हो जाती है। इस रोग का

सम्बन्ध मुख्यतः धूम्रपान खान पान की गडबडी जैसे – वसायुक्त पदार्थों मांसाहार का सेवन 'शारीरिक व्यायाम की कमी तथा अत्यधिक मानसिक तनाव आदि से जोड़ा जाता है। यौगिक जीवन पद्धति, भोजन की गड़बड़ी एवं तनावों को दूर कर इस रोग से बचाती है। तथा उपचार में भी सहायक है।

पेसमेकर (गति प्रेरक) :– हृदय के धड़कने की गति उसमें स्नायविक विधुत तंरगो के लयबद्ध प्रवाह द्वारा नियंतत्रित होती है। इन तरंगों को उत्पन्न करने का मुख्य केन्द्र हृदय की दायी और ऊपर के भाग में स्थित एक स्नायु के छोटे से टुकड़े में होता है। इसे एस.ए.नोड (पर्व) कहते है। यह एक निश्चित कालांतर से रह–रह कर विधुत तंरगे छोड़ता है। ये तरंगे महीन तंत्रिकाओं के माध्यम से हृदय पेशियों में संचरित हो उनका तंत्रिकाओं के माध्यम से हृदय पेशियों में संचरित हो उनका आकुंचन उत्पन्न करती है। यही आकुंचन कहलाता है तथा इसी से रक्त–संचार शुरू होता है। हृदय धड़कन जिस गति–प्रेरक द्वारा नियंत्रित होती है, वह स्वयं प्रतिक्षण बदलती हुई शारीरिक माँगों एवं मानसिक उद्वेगो के प्रति संवेदनशील रहता है।

मानवीय भावनाओं का पीठ :– हृदय का हमारी भावनात्मक प्रतिक्रियाओं से बहुत नजदीकी संबंध है, और इस संबंध से ह म सभी भली भाँति परिचित है। हृदय रोग के जितने भौतिक कारण है, उतने ही भावनात्मक कारण भी है। चिन्ताओं एवं परेशानियों से ग्रस्त, उत्तेजित एवं अत्यधिक तनावग्रस्त मन एक असन्तुलित मानसिकता को जन्म देता है, जो लगातार क्रोध, ममता एवं दुःख के उतार चढ़ाव के झूले में झूलती रहती है। ये उद्वेग हमारे शरीर में स्थित अनुकम्पी तंत्रिका प्रणाली को अनियंत्रित रूप से उत्प्रेरित करते है। इस उत्प्रेरण के फलस्वरूप रक्त में उत्तेजक हॉरमोन्स–एड्रीनलीन एवं नारएड्रीनली की मात्रा अत्यधिक बढ़ जाती है। इनके प्रभाव से हृदय की अपनी सामान्य गति से अधिक बार धड़कने के लिए बाध्य होना पड़ता है। जिससे उस पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

ठीक इसी प्रकार से व्यक्तिगत सम्बंधो से उपजे तनाव, जो हमारी भावनाओं, प्रवृत्तियों एवं इच्छाओं के टकराने से उत्पन्न होते है। वे हमारे हृदय एवं अन्तःस्त्रावी तंत्र पर लगातार दबाव डालते रहते है। इस दबाव तथा अनुकम्पी तंत्र की अतिक्रियाशीलता के कारण सम्पूर्ण 'शरीर की छोटी–छोटी रक्त वाहिनियाँ अनवरल आकुंचन की अवस्था में अधिक जोर लगाना पड़ता है। तथा बहने वाले रक्त का दबाव बढ़ जाता है। इसे ही हम उच्च रक्तचाप या हाइपरटेंशन कहतें है। अब आप टेंशन से हाइपरटेंशन का सरल सम्बन्ध समझ सकते है।

हृदय एवं यौन प्रक्रियाओं का सम्बन्ध :– मन की गहराइयों से उठने वाली प्रवृत्तियाँ तथा मनोभावनात्मक उत्तेजनाएँ अनेक माध्यमों से अभिव्यक्ति का मार्ग खोजती है। सामान्यतः वे यौन आचरण के माध्यम से अभिव्यक्त होती हैं

यौन अभिव्यक्ति अनेक तरीकों से हृदय पर दुष्प्रभाव डालती है उनमें से एक है अन्तः स्रावी तंत्र की प्रतिक्रिया हालाकी ये प्रत्येक मनुष्य में सामान्यतः पायी जाती, मगर कुछ लोगों को विशेष प्रभावित करती है, विशेषतः पुरूषों को

शरीर में यौन हॉरमोन दो प्रकार के होते है :– ''एण्ड्रोजन्स'' या पौरूष हॉरमोन तथा 'एस्ट्रोजन' या स्त्रैण हॉरमोन' ये हॉरमोन मुख्यतः यौन ग्रन्थियॉ (पुरूषों मे अण्डकोष तथा स्त्रियों में डिम्बग्रंन्थि) में निर्मित होते है। इनके निर्माण का नियंत्रण ''पिट्यूटरी ग्रंथि'' से होता है, जो स्वयं मस्तिष्क के 'हाइपोथेलेमस' नामक हिस्से के नियंत्रण में रहती है। और मस्तिष्क का यह हिस्सा भावनाओं एवं आवेंगो के प्रति अतिसंवेदनशील रहता है।

शोध कर्ताओं का कहना है कि पौरूष स्राव या एण्ड्रोजन ही पुरूषों की आक्रमणशील या उधमशील विशिष्टता के साथ–साथ 'हृदयाधाती'' व्यक्तित्व भी प्रदान करते है। इसलिये स्त्रियों की अपेक्षा पुरूषों में हृदय रोग आमतौर पर अधिक देखा जाता है।

चूँकि स्त्रियों में एण्ड्रोजन कम तथा एस्ट्रोजन ज्यादा होता है जो एण्ड्रोजन के दुष्प्रभावों से रक्षा करता है, इसलियें स्त्रियों में हृदयघात की संभावना बहुत कम होती है। मगर यह अन्तः स्रावी प्रक्रिया रजोनिवृत्ति के बाद बदल जाती है। रजोनिवृत्ति के साथ ही एस्ट्रोजन कम होता है, फलस्वरूप हृदयघात की संभाना बढ़ जाती है।

योगियों का कहना है कि भावनाओं एवं यौन प्रक्रियाओं को योगाभ्यास द्वारा सन्तुलित करने से इन स्त्रावों की मात्रा में सन्तुलन आता है। इस प्रकार से सन्तुलित व्यक्ति अपने हृदय की स्वास्थ्य रक्षा कर सकता है। हालाकि कई अन्य प्रतिक्रियाएँ एवं अवयव भी साथ–साथ कार्य करते है, जिनका भी ख्याल रखना आवश्यक है।

प्रथम सफल हृदय प्रत्यारोपण करने वाले, विश्व विख्यात हृदय शल्य चिकित्सक डाक्टर क्रिश्चियन बर्नार्ड का कहना है कि 'सिद्धासन' (जिसका यौन अंगो पर प्रभाव पड़ता है) का अभ्यास प्रत्येक व्यक्ति को करना चाहिए, जिससे उसे हृदय रोग न हो, तथा प्रत्येक हृदय रोगी को ओषधिपत्र में इस आसन को करने की सलाह होनी चाहिए।

हृदय रोग तथा व्यक्तित्व :– जिन व्यक्तियों को हृदय रोग होता है, उनके व्यक्तित्व की एक विशिष्ट पहचान होती है, जिसे खास नाम भी दिया गया है:– ''हृदय रोग व्यक्तित्व'' या

कार्डियक पर्सनाल्टी। ऐसा व्यक्ति प्रायः अधेड़ उम्र का होता है, जो अत्यन्त लगनशील हठधर्मी तथा प्रतिस्पर्धात्मक स्वभाव का होता है। अपने कार्यक्षेत्र में अधिकतर सफल होता है। वह अपनी क्षमताओं को चरम सीमा तक खीच कर ही जीवन में कुछ बन पाता है। उसके व्यक्तिगत आदर्श ऊँचे होते है तथा दूसरों से भी उसकी अपेक्षाएँ उन्ही आदर्शो के अनुरूप होती है। वह काम करने की ऐसी लत पाल लेता है कि अपने कार्य को ही वह आत्मसन्तुष्टि का एकमात्र माध्यम बना लेता है। बहुत बा रवह पारिवारिक जिम्मेदारियों तथा पीडादायी भावनात्मक परिस्थितियों की उपेक्षा कर उन्हे टाल जाता है। हालाकि ऊपर से तो वह बहुत सशक्त इच्छाशक्ति वाला, स्वतन्त्र व्यक्तित्व का दिखाई पड़ता है। मगर उसकी अंदरूनी व्यक्तिगत प्रवृत्ति बिल्कुल विपरीत हो सकती है। वह अन्दर से प्रायः अत्यन्त संवेदनशील तथा कलात्मक अभिरूचियों वाला हो सकता है। मगर उसमें अपने व्यक्तित्व के इस कोमल पहलु को दमित कर दिया होता है और यही वैषम्य उसके अर्न्द्वन्द्व, मानसिक तनाव तथा हृदय रोग का मूल कारण है।

हृदय रोगों के निम्नांकित भेद है :–

1. **हृल्कम्प** :– इस रोग में जोर–जोर से दिल धड़कने के दौरे आते है। उस वक्त रोगी को घबराहट बढ़ जाती है तथा उसे मृत्यु भय होने लगता है। यह रोग पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियों को अधिक होता है। आकस्मिक घटनाओं भय या क्रोध की स्थिति में भी हृदय तीव्र गति से धड़कने लग जाता है। हृदय की पेशियों और स्नायुओं की निर्बलता इस रोग का मूल कारण है। नशीली चीजों का सेवन शारीरिक और मानसिक दुर्बलता, अर्जीर्ण रक्तहीनता, स्नायुविकार, अनियमित आहार विहार हृदयदोष, वीर्य विकार खूनी बवासीर एवं पेट में अपच के कारण वायु की उत्पत्ती आदि इस रोग के अन्य प्रमुख कारण है।

हृदय में कोई दोष उत्पन्न हो जाने के कारण जब हल्कम्प रोग होता है। तो उसमें प्रायःहाथ बर्फ की भांति ठण्ड़े हो जाते हैं तथा रोगी को ठण्डा पसीना आता है।

2. **हृदय की धड़कने का बन्द होने लगना** :– हृदय की धडकन तो अकस्मात बन्द हो जाती है, परन्तु उसके पूर्व रोगी को कितने ही लक्षणों द्वारा उसका आभास अवश्य ही मिल जाता है। हृदय की धडकन सदैव के लिये बंद होने से पहले उनमें कमी होने लगती है जिसे हृदय या दिल का बैठना कहते है। साथ में हृदय में कभी–कभी दर्द भी होता है। प्रायः पेट में नाभि के ऊपर कठिन पीड़ा भी होती है। जिसे साधारणतः कलेजे का दर्द समझा जाता है। हृदय की धड़कन बन्द होकर जब मृत्यु होने को होती है तो अत्यधिक और अवर्णनीय प्रकार की रोगी को बेचैनी होती है। अचानक ही बदन में सख्त गर्मी मालूम होने लगती है और उसके बाद पसीना आता है। छाती के पास रोगी को इतना अधिक तीव्र दर्द होता है कि रोगी बुरी तरह से छटपटाने लगता है।

3 **हृदयशूल** :– हृदय की रक्त कोषिकाओं से प्रकृति जब वहाँ पर एकत्रित विजातीय द्रव्य को बाहर निकाल फेकने की चेष्टा करती है तो रूकावटों को दूर करने में विजातीय द्रव्य के कणों में रगड़ व टक्कर होती है, जिससे भयानक पीड़ा की अनुभूति होती है। यही–'' हृदयशूल'' या दिल का दर्द है जिसे अंग्रेजी में 'एन्जाइना पैक्टोरिस (।दहपदं चमबजवतपे) कहते है। यदि समय पर इस रोग की सफल चिकित्सा न की जाए तो रोगी की मृत्यु निश्चित है। कभी–कभी हृदय और उसके स्नायुओ कमजोरी आ जाने के कारण भी यह दर्द उत्पत्र होता है।

हृदयशूल के समय रोगी बुरी तरह घबराता श्वास लेने मे कष्ट होने लगता है और मृत्यु –भय साक्षात उपस्थित हो जाता है। कभी–कभी यह दर्द बढ़कर बॉए हाथ और पूरी बॉयी छाती तक फैल जाता है। उस रोगी का मुँह लाल, बदन ठण्डा और नाड़ी की गति धीमी जो जाती है। दर्द के दौरे आते है। दर्द साधारणतः तीन–चार मिनट तक रहता है। कभी–कभी इससे अधिक समय तक भी रहता है।

4. **हृदय का आकार में छोटा या बड़ा हो जाना** :– हृदय में अथवा हृदय के आस–पास विजातीय द्रव्य के एकत्रित हो जाने से रक्तनलिकाओं में दूषित पदार्थ भर जाते है जिससे वे सकरी हो जाती है और साथ ही हृदय की दीवारें भी मोटी हो जाती है तथा फैल भी जाती है जिससे हृदय आकार में बड़ा प्रतीत होने लगता है।

विजातीय द्रव्य की गर्मी से जब हृदय सूख जाता है तो उस समय वह आकार में छोटा हो जाता है। इन दोनो की परिस्थितियों में रक्त को शरीर के समस्त भागों में पहुॅचाने हेतु हृदय को कड़ी मेहनत करनी पड़ती है।

5. **हृदय शोध** :– हृदय में शोध (सूजन) उत्पन्न हो जाना इस बात का प्रमाण है कि हृदय में विजातीय द्रव्य काफी मात्रा में एकत्रित हो गया है।हृदय चारों ओर से एक प्रकार की झिल्ली से ढँका होता है। जब झिल्ली में सूजन हो जाती है तो उसे 'परिहार्दिक सूजन' (चमतपबंतकपजपे) कहते है। और जब यह सूजन हृदय की भीतरी झिल्ली में होती है तो उसे– 'अन्तः हार्दिक सूजन'' (इण्डो कार्डइटिस) कहते है। जब स्वयं हृदय अथवा उसकी मॉसपेशियों में सूजन हो जाती है तब उसे '' मध्य हार्दिक सूजन'' कहते है।

प्रायः हृदय को ढॅकने वाली झिल्ली जिसे 'हृदयावरण' कहते है, में पानी आ जाने से भी हृदय सूजा हुआ प्रतीत होता

है जिसकी बढ़ी हुई अवस्था में रोगी को श्वास लेने में कष्ट होता है। पारिहार्दिक सूजन में– हृदय में मीठा–मीठा दर्द होता है, नाड़ी तेज चलती है और कभी–कभी ज्वर भी आ जाता है।

अन्तः हार्दिक सूजन में–रोगी छाती में भारीपन अनुभव करता है। मध्यहार्दिक सूजन में– जब रोग बढ़ा हुआ होता है तो हृदय के स्थान पर हल्की पीड़ा और साथ ही साथ हल्का ज्वर भी हो जाता है।

हृदय रोगों के कारण

कारण :– व्यायाम व श्रम का अभाव, चिंता, तनाव, मोटापा अवसाद, अनिद्रा, खान–पान, जीवन में असंयम, जन्मते बच्चों का भार कम होना आदि। हांलाकि विदेशों में मांस, मदिरा, सिग्रेट आदि का प्रयोग होता है। फिर भी वहॉ के पैदा होने वाले बच्चे कम भार के नही होते इसलिए वहॉ पर यह समस्या कम पाई जाती है।

हृदय रोग के प्रमुख कारण निम्नलिखित है :–

1. अधिक गरिष्ठ भोजन।
2. व्यायाम तथा परिश्रम का अभाव।
3. जे उच्च रक्तचाप, मधुमेह, धूम्रपान, वंशनुगत तथा कोलेस्ट्रोल, आदि से पीड़ित होते है। यदि मनुष्य को उपरोक्त में से दो रोग पाए जाते है। तो हृदय रोग होने की एवं तीन रोग हो तो 30 प्रतिशत हृदय रोग की संभावना होती है।

धम्रपान तम्बाकू का सेवन, चाय कॉफी, कोक,आदि पेय पदार्थो का अत्यधिक मात्रा में सेवन हानिकारक है। मदिरापान का सेवन, मोटापा, हृदय रोग का बहुत बड़ा कारण है। मानसिक तनाव, क्रोध और भय, एकांत जीवन, दवाओं का अधिक सेवन रक्त में चर्बी का बढ़ना एवं रक्त वाहिनियों की दीवारों में कोलेस्ट्रोल का जमना, गलत आहार (ज्यादा बसा, प्रोटीन, चिकनाई तथा कार्बोहाइड्रेट) आदि कारण है।

हृदय रोग के कुछ अन्य कारण निम्नलिखित है :– यह पाया गया है कि जिन लोगो के रक्त में युरिक एसिड अर्थात ब्लड यरिया अधिक होता है। हृदय रोगो की आशंका होती है। रक्त में आयरन की मात्रा का अधिक होना भी हृदय रोग का प्रमुख कारण है।

पुरूषों में हृदयरोग महिलाओं की तुलना में अधिक होता है यह भी देखा गया है कि जो लोग मीठे पानी वाले क्षेत्र में रहते है। उन्हे खीरे पानी वाले क्षेत्र में रहने वालों की तुलना में हृदयघात अधिक होता है।

मॉस, मैदा, सफेद चीनी, नशीली चीजे, तेल, खटाई, अचार, मसाले और तली–भुनी चीजें गरिष्ठ होती है। इनमें से प्रत्येक वस्तु हृदयरोग उत्पन्न करने वाली सिद्ध होती है। इन वस्तुओं के सेवन से रक्त ही क्यो? बल्कि शरीर के समस्त रोगों का एक प्रधान कारण होता है। इसके अतिरिक्त अधिक औषधियों का सेवन भी हृदय पर बुरा प्रभाव डालता है। हकीमों के कुश्ते, वैधों के भस्म और एलोपैथी डॉक्टर्स की ज्वरनाशक औषधियों, वेदनाशामक 'सोडा' सैली साईलिट एस्प्रिन, फीनस्टीन,पैरासिटामोल, एनालजिन, डिक्लोनेक आइबूप्रोफेन, आदि जैसी तीक्ष्ण औषधियॉ तथा कथित हृदयरोग निवारक डिजीटेलिस, सिट्रकनिया, फूरासिमाइड आदि औषधियॉ एवं नाना प्रकार के विषैले इंजेक्शन ये सब हृदय पर इतना भयानक दुष्प्रभाव डालते है कि हृदय के ढॉचे को गम्भीर हानि पहुँचाती है।

हृदय रोग के सामान्य लक्षण :– सांस फूलना, बैठे–बैठे पसीना आना, पैरों में सूजन, कमजोरी, हृदय की धड़कन बढ़ना जलोदर होना, यकृत का बढ़ना, हृदय के ऊपरी हिस्से एवं नीचले हिस्से में दर्द होना, बाएँ हिस्से में अधिक दर्द, घूमने दोड़ने में दर्द होना, आराम करने में दर्द पूर्णतः खत्म हो जाना, तीव्र या धीमी गति से चुभन होना रक्तचाप का बार–बार बढ़ना एवं घटना इत्यादि हृदय रोग के मुख्य लक्षण है।

हृदयशूल/एनजाइना के लक्षण :– एनजाइना में होने वाली तकलीफ का संबंध शारीरिक कामकाज से है, प्रायः दर्द शारीरिक काम या थकान के बाद शुरू होता है। दर्द प्रायः 2–3 मिनट तक रहता है आराम करने पर कम हो जाता है।

दर्द की तीव्रता अधिक होने के साथ में कभी–कभी रोगी छाती में भारीपन, जलन, चुभन व छाती जकड़ी हुई बताता है। स्टरनम (छाती के बीचों बीच) के पीछे एकाएक छाती में बहुत तेज दर्द उठता है जो कि छाती के बाई तरफ कमर से होता हुआ बॉए कंधे,गर्दन,व बॉए हाथ तक फैल जाता है। शारीरिक काम–काज के अलावा एनजाइना की तकलीफ मानसिक तनाव या खाना खाने के उपरांत भी हो सकती है। एनजाइना से पीड़ित बहुत से मरीजों को खाली पेट चलने में तकलीफ नहीं होती या कम होती है। परन्तु खाना खाने के बाद चलना मुश्किल हो जाता है।

हृदय की सामान्य जॉच :– हृदय रोगी का जटिल यंत्रों द्वारा परिक्षण करने से पहले हृदय रोग विशेषज्ञ स्टेथेस्कोप द्वारा उसकी जॉच करता है रोगी के शरीर के कई स्थानों पर जैसे कलाई, कोहनी, गर्दन पेट आदि पर नब्ज का स्पंदन महसूस किया जा सकती है नब्ज द्वारा रक्त वाहिनियों में रक्त बहने की स्थिति का पता चलता है। इसके साथ विशेषज्ञ रोगी से रोग का इतिहास भी पूछते है, नाड़ी की गति सामान्य है, तीव्र है या

कभी रूकावट आती है या नही जिसका ज्ञान स्टेथेस्कोप से ज्ञात होता है एक वयस्क व्यक्ति की नब्ज चलने की दर 70–72 प्रति मिनट होती है। महिलाओं की इससे कुछ अधिक 80–82 मिनट बच्चों की 100–120–130 होती है।

सामाय व्यक्ति का रक्तचाप 120 न्यूनतम 80 मि होता है। 40 वर्ष के ऊपर के व्यक्तियों को 140–90 सामानय होता है। 70–110 पुरूषों के लिये 80–120 महिलाओं के लिये 60–65–70 की उम्र में 90–140 सामान्य स्थिति पुरूषों में 85–90 की उम्र में 85–135 तथा 90–140 सामान्य स्थिती महिलाओं में।

हृदय रोग में यौगिक समाधान :– दमित भावनात्मक द्वन्दों से उत्पन्न रोगो के लिए योग एक आदर्श, तथा प्रमाणित समाधान प्रस्तुत करता है। योग एक जीवन शैली दर्शाता है जिससे हृदय अनुकूलतम अवस्था में जीवनपर्यन्त स्वस्थ रहे तथा तनाव और रोगों से भी मुक्ति मिल सके।

हृदय को भारमुक्त करने हेतु सर्वप्रथम भावनात्मक द्वन्द्वों, निर्भरताओं एवं जरूरतों को जानना, स्वीकार करना तथा अभिव्यक्त करना अत्यन्त आवश्यक है, केवल तभी उनके परे जाना सम्भव होगा। भावावेगों की अन्तप्रतिक्रिया को अप्राकृतिक तौर पर दबाया नहीं जा सकता, क्योकि इस दमन से ही तो मनोविकृति उत्पन्न होती है तथा शारीरिक रोग उपजते है। मगर सुव्यवस्थित ढंग से योग मार्ग पर चलने से भावों को पहचानना सम्भव है, तदुपरान्त उनको स्वस्थ सम्पूर्ण तथा प्राकृतिक ढंग से अभिव्यक्त किया जा सकता है। इस प्रकार मुक्त अभिव्यक्तिकरण से ही 'दिल हल्का' होगा। यही भाव स्वास्थ्य की रक्षा करता है तथा हृदय की सुरक्षा कर अकाल मृत्यु से बचाता है।

हृद्–परिसंचारी रोगों के लिए यौगिक कार्यक्रम (उपचार) :– एक बोझ तले दबे तथा थके हुए हृदय की प्राथमिक आवश्यकता है ''आराम'' क्योकि आराम से खोई हुई जीवनीशक्ति का संचय होगा और पुनरूदभवन की प्रक्रिया पुनः प्रारम्भ हो सकेगी। यथोचित आराम के साथ सादगीपूर्ण जीनचर्या, कुद घूमना–फिरना तथा आसन–प्राणायाम इत्यादि को समायोजित करना होगा, तभी पूरा–पूरा लाभ सम्भव होगा। आहार–विहार, विचार और व्यवहार–इन सभी का सन्तुलन स्वास्थ्य की कंजी है।

आसनाभ्यास अति महत्वपूर्ण है, मगर उन्हें अपनें सामर्थ्य से अधिक नहीं करना चाहिए। हृदय पर जरा भी जोर न पड़े तथा जैसे ही यह महसूस हो कि जोर पड़ रहा है या हल्का सा भी दर्द हो तो फौरन आसन बन्द कर शिथिलीकरण का अभ्यास करना चाहिए।

1. **टासन** :– पवनमुक्तासन भाग एक से प्रारम्भ करें। प्रतिदिन प्रातः स्नान, गर्मियों में ठंडे पानी तथा सर्दियों में गर्म पानी से करना चाहिए। इसके बाद आसनों का अभ्यास करें। यदि कही भी कठिनाई महसूस हो या जब भी थकावट महसूस हो, शवासन का अभ्यास करें। अभ्यास जल्दी से खत्म करने का प्रयास कभी न करें योगाभ्यास से आराम, शान्ति तथा शिथिलीकरण प्राप्त होना चाहिए। इस एक घंटे में मिली शान्ति की कालावधि धीरे–धीरे बढ़ती जाएगी और सम्पूर्ण जीवन को रूपान्तरित कर देगी।

निम्नलिखित मुख्य आसन अनुसंशित हैः– वज्रासन शशांकासन, सर्पासन, योग मुद्रा, आसन, भू–नमनासन, गोमुखासन सेतु आसन, चक्रासन, कही चक्रासन, विश्रामन करते हुये सूर्य नमस्कार।

2. **प्राणायाम** :– हृदय रोगी की हालत में सुधार के दरम्यान तथा उसके बाद भी स्वास्थ्यवर्धन एवं पुनरूज्जीवन की प्रक्रिया के दुत बनाने में प्राणायाम का अभ्यास अत्यन्त महत्वपूर्ण है। प्राणायाम फेफड़ों तथा हृदय के लिये कभी कष्टकर नही होना चाहिये यदि ऐसा होता है तो नकारात्मक प्रभाव होने की संभावना है। प्राणायाम से विक्षिप्त मन शान्त होता है। इससे उत्तेजित स्नायुओं का शिथिलिकरण तथा अनियमित हृदय गति का नियमन होता है।

हृदय के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्राणायाम है नाड़ी–शोधन तथा उज्जायी। प्राणायाम करते समय श्वास सामान्य से थोड़ी ही अधिक गहरी होनी चाहिए। अभ्यास में कुम्भक वर्जित है (विशेषतः शुरू में) श्वास जितनी शान्त या ध्वनि रहित तथा प्राकृतिक बनी रहे उतना अच्छा है। श्वास–प्रश्वास का पूरी सजगता से अवलोकन करने का प्रयास करें। श्वास का अवलोकन मन का अवलोकन हे। इस साधारण प्रक्रिया से फौरन ही तनाव एवं चिन्ता से मुक्ति की अनुभूति होने लगती है। ऑक्सीजन की प्रक्रिया अधिक सुचारू होने से हृदय को बहुत लाभ पहुँचता है तथा ऊतक तेजी से पुनरूज्जीवित होने लगते है। नाड़ी शोधन प्राणायाम के दस चक्र तथा दस मिनट तक उज्जायी प्राणायाम अनुशंसित है।

3. **योगनिद्रा** :– आसन कार्यक्रम के दौरान बीच–बीच में शिथिलीकरण करते रहना चाहिए। शावासन,मत्स्य क्रीडासन या अद्वासन में से किसी भी आसन का प्रयोग कर सकते है। योगनिद्रा का पूर्ण अभ्यास दिन में एक बार कभी भी अवश्यक करें।
4. **ध्यान** :– हृदय रोगियों को ध्यान एक नियमबद्ध अभ्यास के रूप में नही वरन् एक आनन्ददायी कार्यकलाप के रूप में सीखना चाहिए। खासकर बीमारी के बाद वाले समय में,

जब बिस्तर से उठ पाना सम्भव नहीं हो अथवा बाद में भी स्वास्थ लाभ के दौरान। ध्यान के द्वारा हृदय, मस्तिष्क और भावनाओं में कहर बरपाने वाले तनावों को जानना लाभदायक अनुभव होगा।

ध्यान की अनेक तकनीकें हैं, जो भावनात्मक तनावों के प्रति सजगता बढ़ाने हेतु अत्यन्त उपयोगी अभ्यास है। सबसे उपयुक्त अजपाजप (सोडहं मंत्र के साथ) तथा अन्तमौन है। ये अभ्यास असुरक्षा तथा चिन्ताओं के प्रति निश्चिन्तता का भाव पैदा करते है। जो मानसिक उद्वेलनों तथा तनावों के मूल कारण है।

5. **षट्क्रियाएँ** :– हृदय रोगियों के लिये जल नेति एक आदर्श अभ्यास है। इसका अभ्यास विस्तर पर बैठे–बैठे ही सीखा तथा किया जा सकता है। मगर उसके पश्चात् भस्त्रिका नहीं करें, नही नासिका को सुखाने के लिए श्वास पर जोर डालें। नेति प्रतिदिन प्रातः करें। कंजल तथा शंख प्रक्षालन तथा योग्य चिकित्सक की सलाह के बाद ही करें अन्यथा न करें।
6. **कर्मयोग** :– हृदय रोगियों को पूर्ण सजगता, सावधानी तथा निःस्वार्थ भावना से कार्य करना चाहिए। जहॉ पर कार्य के बदले में पुरस्कार या लाभ की आशा न हो, ऐसी मानसिकता द्वारा जीवन यापन करने से हृदय रोग सफलतापूर्वक ठीक किया जा सकता है।
7. **जीवनशैली में परिवर्तन** :– हृदय पर तनाव तथा हृदय रोग की परिस्थिति उन्ही लोगों में अधिकतर उत्पन्न होती है, जिनकी मनःस्थिति राजसिक, क्रियाशील एवं प्रतिस्पर्धात्मक है। मुख्यतः व्यावसायी लोग, जो अपने व्यवसाय में एक ही धुन से जुटे रहते है, हृदयघात के प्रति सर्वाधिक प्रवण होते है, क्योकि वे अगों को पुनरूज्जीवित करने वाले 'विश्राम' के लिए समय नही निकाल पाते।

अपने कार्य में इस प्रकार उलझें रहते है कि दैनिक जीवनचर्या में भाग–दौड़ के सिवाय उन्हे फुरसत ही नही रहती। अधिकतर लोग 'विश्राम' की वास्तविकता नही जानते, और इसके बदले उन्होने एक 'रिलैक्स' होने की भ्रामक धारणा पाल रखी है, जो वास्तव में उत्तेजित करने वाली आदते है, जैसे धूम्रपान, मदिरापान, तेज संगीत, पार्टियाँ तथा सामाजिक गतिविधयाँ। ये विश्रांति की बजाय उत्तेजना तथा थकावट उत्पन्न करती है। न केवल मन में वरन शरीर, विशेषतः हृद्परिसंचारी तंत्र में परिश्रांति की अवस्था उत्पन्न हो जाती है। देर रात तक जागना और अधिक मात्रा में गरिष्ठ भोजन बची–खुची कमी पूरी कर देता है।

8. **स्वाध्याय** :– विभिन्न धर्मग्रंथों, उपदेशों, तथा महान व्यक्तियों के जीवन तथा कार्य का अध्ययन करना, जिन्होने अपना सम्पूर्ण जीवन परम सत्य की खोज व सेवा में लगा दिया है। स्वाध्याय हृदय रोगी के लिए एक नयी तनावमुक्त जीवनशैली का रहस्योद्घाटन तथा पथ प्रदर्शन करने वाला होगा।
9. **भक्तियोग** :– भावनात्मक ऊर्जा को व्यक्तिगत विषय वस्तुओं तथा वासनाओं के बन्धनों से परे उच्च चेतना या ईश्वर की ओर अभिमुख करने का विज्ञान भक्ति योग कहलाता है। कीर्तन या भजन हृदयरोगियों के लिये अत्यन्त लाभकारी है, तथा व्यक्तिगत आसक्तियों के जाल में उलझी भावनाओं से भार मुक्ति का एक प्रभावी साधन है।
10. **भोजन** :– भोजन नियमपूर्वक हल्का होना चाहिए। मांस तथा अधिक प्रोटीन युक्त आहार जैसे–दूध तथा दूध से बनी चीजों, तेल अथवा मसालेदार भोज्य पदार्थो का सेवन वर्जित है। उनकी जगह अन्न दालें, फल तथा ताजी हरी सब्जियाँ लें। इससे मोटापा कम होगा जिससे लगातार हृदय पर पड़ने वाला भार कम होता है। भोजन का समय निश्चित नियमित हो आवश्यकता से अधिक मात्रा में भोजन न लें, वस्तुतः दिल का दौरा भारी भोजन के कुद समय बाद ही पड़ता हैं

संध्या का भोजन सात बजे से पहले ही कर लें, क्योंकि यह नियम इस बात से आश्वस्त कर देता है कि पाचन संस्थान पर ज्यादा भार नही पड रहा है और ऊर्जा, पाचन की बजाय रोग को स्वस्थ करने में लग रही है।

दूसरी आवश्यक बात यह है कि हृदय रोगियों को कब्ज नही होना चाहिए, क्योकि इससे आंतो में प्राणिक ऊर्जा का प्रवाह अवरूद्ध हो जाता है। शौच के समय ज्यादा जोर लगाने से भी हृदय पर जोर पड़ता है। इसी कारण तथा उपयुक्त वर्णित अन्य कारणों से हृदयघात के पश्चात व्यक्ति के लियु सुपाच्य पतला भोजन अनुशंसित किया जाता है। हृदय की कार्य क्षमता के ठीक होते समय धीरे–धीरे भोजन सामान्य स्थिति में लाया जा सकता है।

11. **व्यसन** :– मघपान, धूम्रपान, तम्बाकू, सेवन इत्यादि हृदय रोगियों के लिये जहर है। इनका सेवन तुरन्त त्याग दें।

संदर्भ ग्रथ सूची :–

1. क्या खाये और क्यो –डॉ गणेश नारायण चौहान
2. भोजन के द्वारा चिकित्सा–डॉ गणेश नारायण चौहान
3. प्राकृतिक आयुर्विज्ञान – डॉ राकेश जिन्दल
4. क्लीनिकल डायग्नोसिस– डॉ जहान सिंह चौहान
5. आहार एवं पोषण – डॉ. स्वामीनाथन
6. उपवास चिकित्सा–
7. स्त्री एवं बाल रोग चिकित्सा–राजकुमारी गुप्ता
8. रसेदार सब्जियां– मिथिलेश गुप्ता

हृदय रोगों की तात्कालिक प्राकृतिक चिकित्सा :– हृदय रोगों के दौरे में उस समय स्थिति बड़ी विकट एवं नाजुक हो जाती है। तथा रोगी के समक्ष जीवन मृत्यु का प्रश्न आ खड़ा होता है। ऐसी दशा में रोगी को पूर्ण मानसिक और शारीरिक आराम देने के लिए किसी निर्जन, साफ–स्वच्छ, आरामदेह विस्तर पर सिर को ऊँचा रखते हुए लिटा देना चाहिए तथा रोगी के पहने हुए कपड़ो के बटन आदि खोलकर ढीला–ढाला कर देना चाहिए। रोगी के सामने ऐसी कोई भी चेष्टा नहीं करनी चाहिए कि जिससे रोगी की उत्तेजना बढने की आशंका हो। संकट की घड़ी जब तक पूर्णरूपेण टल न जाए रोगी को उपवास करना चाहिए। यदि रोगी बहुत दुर्बल हो तो ऐसी दशा में आवश्यकतानुसार अगूर, अनार, संनतरे अथवा कागजी नीबू का रस दिया जा सकता है। उपवास के दिनों में रोगी को प्रतिदिन गुनगुने पानी का एनिमा देकर पेट साफ कर देना चाहिए। उपवास की समाप्ति पर रोगी को कुछ दिनों तक फलों के रस तथा उसके बाद फल और दूध पर रखना चाहिए। (दूध गाय का) प्रतिदिन 2 बार 15 मिनिट से धीरे–धीरे बडा कर 1 घंटे तक हृदय पर बदल–बदल कर कपड़े की ठन्डी पट्टी रखनी चाहिए। और अन्त में स्थान को फलालेन या रूई अथवा अन्य किसी सूखे हुए साफ स्वच्छ कपड़े से रगड़ कर सुख देना चाहिए। रोगी को श्वास कष्ट हो अथवा कफ का जोर हो तो आंतो को गरम करने के लिए उन पर गरम पट्टी अथवा अन्य कोई गरम कपडा लपेट देना चाहिए। साथ ही हृदय पर ठण्डे पानी से भीगी कपड़े की एक पट्टी अलग से रखकर समूची छाती पर एक घण्टा के लिए भीगी ही पट्टी लगानी चाहिए। इस प्रयोग को 20–20 मिनट के अन्तराल से करना चाहिए एवं प्रत्येक बार जब छाती की पट्टी हटाई जाए तो उस स्थान को सूखे कपडे से रगड़कर सुखा देना चाहिए।

यदि हृदय बैठ रहा हो और धडकन बन्द होने वाली हो तो रीढ़ की हड्डी पर गरम–ठण्डी सेंक करनी चाहिए। और बीच–बीच में स्पंज बाथ अथवा गरम पानी में भिगाई हुई निचोडी पट्टी से हृदय को तब तक सेकना चाहिए जब तक कि हृदय की धडकन अपनी स्वाभाविक अवस्था में नआ जाए। तथा हृदय की हल्क मालिश करनी चाहिए।

हृदयशूल में :– हृदय को पाँच मिनट तक गरम जल में भीगे और निचोड़े कपड़े से सेंककर 15 मिनट उस पर ठण्ड़ी पट्टी का प्रयोग करना चाहिए तथा इस क्रिया को 4–5 बार दोहराना चाहिए अथवा 4 मिनट तक हॉट फुट बॉथ यानि पैरों को गरम स्नान देने के बाद आधा घण्टे तक हाथों एवं पैरों में गरम कपड़ा लपेटकर उन्हे गरम रखना चाहिए ।

हृदय की धड़कन बढ़ने में :– हृदय पर ठण्ड़ी पट्टी आधा आधा घण्टा में 20–20 मिनट के लिए देते रहना चाहिए । पट्टी सम्पूर्ण हृदय और दाहिनी पंजरी तक बढ़ाकर लगानी चाहिए प्रबल स्थिति में मेरूदण्ड़ भी और प्रत्येक बार पट्टी उतरने पर स्थान को सूखे कपड़े से रगड़ रगड़ कर सुखा देना चाहिए।

हृदय के रोगों के साथ यदि पेट की भी तकलीफ हो तो एनिमा के साथ पेट पर मिट्टी की पट्टी का प्रयोग करना चाहिए तथा अजीर्ण रोग की चिकित्सा चलानी चाहिए।

हृदय रोग के साथ यदि ज्वर भी हो तो पेडू पर मिट्टी की पट्टी का ही प्रयोग करना चाहिए अथवा कटिस्नान लेना चाहिए।

यदि हृदय रोग के रोगी को नींद न आती हो तो सोने के पहले 15 मिनट तक सिर पर ठण्ड़े जल से भीगा और निचोड़ा हुआ कपड़ा रखकर पैरों को गरम पानी में रखने से लाभ होता है।

हृदय रोगों की स्थायी प्राकृतिक चिकित्सा :– हृदय के रोगियों को दौरा न होने के समय में रोग को निर्मूल करने के लिए कुछ दिनों तक उपवास करके दिन में 2 बार एनिमा लेकर पेट साफ करना चाहिए। तदुपरान्त 15 दिनों तक फलहार अथवा फल दूध (गाय का) पर रखकर दिन में 2 बार घर्षण स्नान कराने के बाद साधारण स्नान कराना चाहिए अथवा शरीर मर्दन के उपरांत सबेरे के समय कटिस्नान और उष्ण पादस्नान के बाद सायंकाल के समय मेहन स्नान कराना चाहिए। पेट को साफ करने के लिए कमर की भीगी पट्टी भी लगानी चाहिए। बीच–बीच में शरीर शुद्ध करने के लिए एक घण्टे तक पूरे शरीर की भीगी चादर को लपेट लगानी चाहिए। साथ ही जिन कारणों से और कुपथ्यों से हृदय रोग होते है, उनसे बचना चाहिए। तथा उचित चिकित्सा के निर्देशों का पालन करते हुए तथा चिकित्सक के मार्गदर्शन में ही कोई भी चिकित्सा कराना चाहिए।

हमेशा खान–पान व्यायाम आदि का ध्यान रखना चाहिए, नियमित दिनचर्या रखनी चाहिए। प्रातः सांयकाल पैदल चलना चाहिए। अत्यधिक तनाव नही लेना चाहिए। संयमित दिनचर्या रखनी चाहिए। चिकित्सक के निर्देशों का पालन करना अत्यन्त आवश्यक है।

संदभ ग्रंथ सूची :–

क्र.	पुस्तक का नाम	लेखक	पब्लिकेशन	सन्
1.	मानसिक रोग कारण व उपचार	डॉ0 शास्त्री	कैवल्य धाम पुणे	
2.	सच्चा सुख और निरोगीकाया	सुदर्शन भाटिया	कैवल्य धाम पुणे	
3.	हद्य रोग कारण व उपचार	डॉ0 देव शक्ति	कैवल्य धाम पुणे	
4.	आरोग्य जीवन	आचार्य चन्द्रशेखर	कैवल्य धाम पुणे	
5.	मानसिक रोग कारण व उपचार	डॉ0 शास्त्री	कैवल्य धाम पुणे	
6.	समस्या पेटी की समाधान योग का	स्वामी सत्यानंद सरस्वती	योग पब्लिकेशन ट्रस्ट बिहार स्कूल एवं योग मुगेर	
7.	रोग और योग	स्वामी सत्यानंद सरस्वती	योग पब्लिकेशन ट्रस्ट बिहार स्कूल एवं योग मुगेर	1998
8	दमा मधुमेह व योग	स्वामी सत्यानंद सरस्वती	योग पब्लिकेशन ट्रस्ट बिहार स्कूल एवं योग मुगेर	
9.	ध्यान योग	दयांनद वर्मा	स्वामी अरविंद साहित्य	
10..	आसन प्राणायाम	स्वामी आत्म बिन्दु	स्वामी अरविंद साहित्य	
11.	निरोगी जीवन	महामाया	स्वामी अरविंद साहित्य	
12.	आहार ही औषधी है	सुरभि शर्मा	स्वामी अरविंद साहित्य	
13.	आसन प्राणायाम मुद्रा बंध	स्वामी सत्यानंद सरस्वती	योग पब्लिकेशन ट्रस्ट बिहार स्कूल एवं योग मुगेर	2005
14.	आसन कब क्यों और कैसे	ओ.पी. तिवारी	कैवल्य धाम पुणे	2005
15.	घेरण्ड संहता	स्वामी निरंजनानंद	योग पब्लिकेशन ट्रस्ट बिहार स्कूल एवं योग मुगेर	2004
16.	सूर्य नमस्कार	स्वामी सत्यानंद सरस्वती	योग पब्लिकेशन ट्रस्ट बिहार स्कूल एवं योग मुगेर	
17.	स्वस्थवृत विज्ञान	रामहर्ष सिंह	चौखंबा संस्कृत प्रतिष्ठान	1985
18.	योग दर्शन	स्वामी निरंजनानंदा सरस्वती	बि.स्कूल आफ योगा	2004

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

Freedom of trade and commerce in India

Ayushi jain
(L.L.M.), Scholar, Department of law & Government, Jayoti Vidyapeeth Women's University, Jaipur

ABSTRACT :- In this Article title "Freedom of trade and commerce with in the territory of India." I have analyzed the relation the between trade and commerce. The reason for choosing this title, Because I want to explore more and more knowledge regarding trade and commerce.

In this Article I have defined trade and commerce, comparison between trade and commerce. Further my work extent to the object of trade and commerce. Inter relation between Article 301 and 19(1)(g) of the constitution has been discussed. Matter of taxation regarding trade and commerce and regarding compensatory tax of trade and commerce has been also mention in trade and commerce and various case has also mention in my Article. At list the Article for improvement regarding the title. The framer of the constitution though it fit to provide further ad hoc protective covering to the integrity of the country with respect to traffic of people and goods. Part Xlll of the constitution does not know apart between citizen and non citizen. The right given under it are in the form of a prohibition on legislative and executive competence.

Freedom of Trade and commerce with in the territory of India

Trade and commerce:-

Trade:- Trade is an essential part of commerce. All those actions are enclosed in the trade which are helpful for the exchange of goods between the producer and consumer. The exchange of goods directly and indirectly. Those component remove the obstacle in the exchange of goods are included in the scope of trade. Trade involve the transfer of goods or services from one person or entity to another, frequently in exchange for money . A system of web that allows trade is called market. The original form of trade "barter" the direct exchange of goods and services for other goods and services.

Trade can be divided into followings two types:-

a) Internal or Home or Domestic
b) External or foreign or International

Commerce :- Exchange of goods or services for money or in kind, usually on a scale large enough to require transfer from one place to another place or across city, state,or national boundaries is called commerce.

"Commerce is that part of business which is concerned with the exchange of goods and services and considers all those activities which directly or indirectly facilitate that exchange."

Trade and commerce practice in ancient India :- A place of exchange of for trade and commerce in ancient India. Commerce affect the buying and selling, or produced. Greater demand of products necessitated the concentration of ancient India. It also encourage artisans working on a particular trade to live in the same part of the town,which facilitated the obtaining of raw materials or selling the finished products to merchant .The ancient India merchant went for village to collect for cotton, thread from the spinners or cotton cloth from the weaver and to sell them in village where they were in condition ancient merchants attained a profit through with supplying the goods acquired. Metallurgy is as old as per-historic times. Production of metals was known as even in pre-vedic period and during the harappa period various metails like copper, leads, silver were in use.

Kautilya asked the king to develop measures to stop impediment of the trade

itineraries by his favorite men (Vallabhas). Proper rule of conduct of trade were laid by the head of trade guilds known as sarthavath. Kalidas portraits a good view of the down market and trade transaction. The Divyavadana refers to the science of testing gems.

Www. Important .com
Www.ycmglobal.co
Business Dictionary
Https://www.quora.com
Https://www.important.com

Comparison between trade and commerce :- Business action are classified into two broad classes. Industry and commerce is obsessed with facilitating the exchange of goods and services in system many things that trade and commerce word are same term. But the fact is both the term are various from each other . Trade merely means buying and selling of goods and services in return for money and money worth.

(1)Trade concern the transfer of goods form one person to another and commerce connected with exchange of goods and service.
(2)The scope of trade is slender and in commerce the scope is deep.
(3)In trade nexus between buyer and seller and in commerce nexus between producer and consumer.
(4)Trade coordinate the both demand and supply and commerce typify only the demand.
(5)Trade require more capital but in commerce require less capital.

Difference between trade and commerce :- Following are the major differences between trade and commerce:

1. Trade is selling and buying of goods and services between two or more parties in consideration of cash. Commerce includes the exchange of goods and services along with activities viz. banking, insurance, advertising, transportation, warehousing, etc. to complement the exchange.

2. Trade is a narrow term that merely includes the selling and buying whereas commerce is a wider term that includes exchange.

3. Trade is mostly done to satisfy the need of both the seller and the buyer which is more of a social perspective. Whereas the commerce is more economical in nature because of the involvement of several parties whose primary aim is to generate the revenue.

4. Trade is mostly a single time transaction between the parties that may or may not reoccur. Whereas in commerce the transactions are regular and occur again and again.

5. The trade regards two parties the seller and the buyer who facilitates the exchange without employing anyone in between. Whereas in commerce exchange is done with the support of several departments thereby giving them employment opportunities.

6. Trade provides a link between the seller and the buyer, the direct parties involved in the exchange. Whereas the commerce provides a link between manufacturer and the ultimate customer, who are not direct parties, with the help of several aides of distribution.

7. Trade corresponds both the lateral of demand and supply where both the parties know what is demanded and what is to be supplied. Whereas in commerce only the demand side.

Www.quora.com

Freedom Trade and commerce with in the territory of India :- Some other federations chapter. 14 of the Indian constitution contain the provision relating the freedom, trade, commerce and intercourse .

Article 301 of the Indian constitution state :- ”Subject to the other provision of the part ,trade,

commerce and intercourse throughout the territory of India shall be free.

The word 'Free' used in the Article has been held to mean not absolute freedom but freedom from all restriction except those provide for in the other Article of part 14 similarly, the world 'Intercourse' has been used to give the world "freedom" in Article 301.The freedom provide for by article 301 does not entered across the board to all types of trades and professions. The court held that business and other activities such as gambling, trafficking in woman other forms of prostitution, employing hired assassins or things to carry over illegal act.

"1An order restricting the sale of liquor for two 'dry days' after every 'wet work' was valid and those involved in the liquor trade could not avail of the protection afforded under Article 301.

Article 302 states :" Parliament may by law impose such restriction on the freedom of trade, commerce and intercourse between one state and another or with in any part of the territory of India as may be required in public interest"

"2 Where restricting impose a direct burden on freedom of trade and commerce under Article 301it would will be constitutionally valid if it were deemed to be in public interest. Article 301 in favor of public interest. Article 302 relaxes the restrictions imposed by Article 301 in favor of parliament."

Article 303 states:- provide for restriction on the legislative power of Union and the commerce . This article exception to Article 302 and essentially lay down that parliament shall not pass any law giving any preferences to any state over another. Or discriminate between the state of any entry relating to trade and commerce in any of the three list.

"3The limitation introduce in Article 303(3) cannot circumstance or otherwise affect the construction and scope of Article 301".

Article 304 states :- provide restriction on trade, commerce and intercourse among state . It is an exception to article 301and 303 and first clause allows taxes to be imposed on any goods that are imported into a state from states or Union territories.

Article 307 states:- "Parliament by law appoint such authority as it considers appropriate for carrying out the purpose of Article 301,302,303,304 and confer on the authority so appointed such power and duties ."It has been suggested by many that a body consisting of economists, businessman and the lawyers would be able to do much better job in this area that court having merely legal expertise. State of tamilnadu v. Sitalakshmi mils, 1974 AIR 1505 PN. Kausal v. UOI, 1978 AIR 1457

Object of trade and commerce :-

(1) To study develop of various fundamental principal of economy implication of business investments so that they may understand as to how to do business and how to make investment in business and trade.
(2) To study recognize the services rendered national and international trade and commerce.
(3) To study Doubts various business practice and procedure.
(4) To study the trade can help boost development and reduce poverty by generating growth through increased commercial opportunities and investment.
(5) To study the Trade enhance aggressiveness by helping countries reduce the coat of inputs, acquires finance through investment increase the value added of their products and more up the global value.
(6) Trade expands choice and lowers price for consumer by broadening supply sources of goods and services and strengthening competition.

Inter-Relation between Article 301and Article 19(1)(g) :- The statement trade means buying or

selling of the goods while the word commerce includes all forms of transportation by land,air water . The term intercourse means the motion of goods from one place to another.

Article19(1)(g), a fundamental right talk about on the citizens the right to carry any occupation trade and business . Deal with the right of individual, whereas Article 301 provides safeguards for carrying trade as a whole distinguished from individual right to do the same. Supreme court has announced the theory that article 301 guarantees freedom "In abstract and not on the individual" Incodocs.com,Indiankanoon.org

Tax on trade and commerce :- Tax is a compulsory endeavor and is the self-governing conception of the state based on the principle of **No quid pro qua.** Taxation is accumulation of revenue and public expenditure is the application of the revenue so collected.

Tex is essential for the functioning of every economy of the would, without it all the duties and the obligation of the state will be undone and power unused. Article 302 authorized parliament to impose restrictions in the public interest. Article 303 prohibit state preferences on discrimination regional basis ,but make an exception for parliament in order to meet a situation of scarcity in any part of country.

Article 304 prohibits the state from making any discrimination against goods 'imputed ' from other states in taxing them.

Article 305 removes the laws as they existed on January 26,1950 and later at the commencement of the 4 amendment, 1955 from the operation of Article 301and 303.

A tax levied by the state of Assam on the carriage of tea by road or inland waterways was held bad for as a restriction on the freedom of trade, commerce and intercourse and was not held as a regulatory taxation or measure.

Freedom of trade and commerce and intercourse is a wider concept than that of an individual freedom of trade guaranteed by Article19 (1)(g). Article19(1)(g) can be taken advantage by the citizen whereas the freedom of trade and commerce and intercourse can be invoked by a corporation and even by state an complaint of discrimination as under 303.

Compensatory tax and it's connection to freedom of trade and commerce :- Globalization industries necessitate large market as a country we can not develop .If we try and break up every state and give liberty to them to impose entry taxes . Further central government needs to guarantee. Implementing Goods and Services Tax (GST) that state cannot levy and entry tax on goods received with in state for ingestion, utilization or sale therein.

State declare these types of tax as compensatory and regulatory by saying that the imposition of tax is for facilitating the trade and commerce by providing facilities like maintenance of roads, traffic, lights etc.

Andhra sugars ltd v. state of A.P. AIR 1968 SC ,599 state of M.P. v. Bhallal bhai AIR 1964 SC 1006 https://www.quora.com

Conclusion :- Hence it can be concluded that trade is the division of commerce that deals in only the exchange of goods and services whereas commerce are the all-inclusive term that excludes all the major activities that assist the exchange and creates the revenue for all. Thus, we can say commerce is the subdivision of business that keeps everything together and makes the successful windup of the distribution of goods and services.

1)Taxes have been held to be generally outside the advertisement of Article 301 unless the tax is shown to be a mere pretext designed to injure-state trade, commerce, etc.
2)Every state has power to enforce taxes to compensate it for the service,benefits and facilities provided by it.

3)The word 'restriction' in article 304(b) has been held not to exclude regulation .Therefore, taxes or other measure which are regulatory will not come within article 304(b).

4 “Tax was imposed on sale of tobacco leaves, manufactured tobacco and tobacco used for bid i manufacturing and it was payable at the point of sales.”

5 “The validity of section 21 of the A.P. Sugarcane required for use, consumption or sale in a factory and hence petitioner challenged the tax as that it was violated Article 301”.

https://www.legalbites.in/freedom-trade-commerce-intercourse/

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

स्वतंत्रयोत्तर भारत में महिला सशक्तिकरण : मंडला जिले के आदिवासी महिलाओं के संदर्भ में

डॉ. मनीष कुमार दुबे

सृष्टि की मेरूदंड में नारी का विश्व में किसी राष्ट्र की संस्कृति की मुख्य मापदंड माना गया है। नारी चाहे ग्रामीण हो, शहरी हो या आदिवासी, विभिन्न संस्कृतियों में निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान देने वाली नारी की स्थिति में सदैव परिवर्तन होते रहते है,उनकी यही अस्थिरता प्रत्येक युग के समाज व्यवस्थाकारों ने किए प्रश्न चिन्ह के रूप में चिंतन का प्रधान विषय रही है। सशक्तिकरण अपने आप में एक व्यापक अवधारणा है। सशक्तिकरण का अर्थ पुरूष की बराबरी करना नहीं है,समाज में ग्रामीण, शहरी या आदिवासी नारी सशक्त हो रही है। सशक्तिकरण को तीन भागों में बाँट सकते हैः–

1. अधिकार के प्रति सजगता 2. आर्थिक क्षेत्र में सशक्तिकरण 3. सामाजिक क्षेत्र में सशक्तिकरण।

नारी जाति को सशक्त करने के लिए आवश्यक है कि आदिवासी महिलाओं की जीवनशैली में परिवर्तन हो स्वालंबन की प्रकृति आदिवासी महिलाओं में प्रारंभ से ही पाई जाती है। वह घर–घर के साथ जीविकोपार्जन हेतु बाहर भी कार्यरत रहती है। खासी थारु झील जैसी जनजातियों में महिला का महत्व पुरुषों से ज्यादा समझा जाता है परंतु शिक्षा के अभाव एवं जागरूकता की कमी के कारण आदिवासी स्त्रियां अपने उचित मुकाम को नहीं पा सकी ळें महिला सशक्तिकरण को किस दिशा में सरकारी एवं गैर सरकारी प्रयासों के बाद आज महिलाओं की आर्थिक स्थिति में सुधार हुआ हैं। स्वयं के रोजगार पशुपालन मधुमक्खी मुर्गी पालन व्यवसाय अपना रही है राजनीति के क्षेत्र में भी आदिवासी महिलाएं अपने पैर जमा रही है प्रारंभिक अवस्था में अवश्य अवश्य कठिनाइयों का सामना कर रही है परंतु वह दिन दूर नहीं जब भारत वर्ष में सशक्त महिलाओं का वर्चस्व होगा।

यद्यपि मध्यप्रदेश में आदिवासियों की संख्या एक करोड़ से अधिक है जो राज्य की एक तिहाई जनसंख्या का निर्माण करते हैं । इनका कोई निश्चित क्षेत्र नहीं है वह सामान्य जनसंख्या का निर्माण करते हैं इनका कोई निश्चित क्षेत्र नहीं है यह सामान्य जनसंख्या के साथ ही निवास करती है। इनकी मुख्य जनजातियां गौंड़, बैगा, भील, संथाल आदि शहडोल मेवाड़ झाबुआ धार छिंदवाड़ा बैतूल मंडला के पहाड़ी बस जंगली प्रदेश में निवास करती हुई भिन्न–भिन्न बोलियां बोलती हैं । प्रदेश की उन्नति हेतु इनका सर्वांगीण विकास अत्यंत आवश्यक है।जिसका मूलमंत्र है शिक्षा यदि नारी सजग व शिक्षित है तो संपूर्ण समाज विकसित होगा। जैसा चीन में कहा जाता है –

"If you want to plan for a year plan wheat. If you wish to plan for ten years grow trees but if you want to plan for 100 years educate your women."

स्वर्गीय इंदिरा गांधी को सभी के जीवन का महत्वपूर्ण आधार बतलाते हुए कहा था कि शिक्षा मानव को बंधनों से मुक्त करती है और आज के युग में तो यह लोकतंत्र की भावना का भी आधार भी है। जन्म और अन्य कारणों से उत्पन्न जाति या वर्गगत विषमताओं से दूर करते हुए मनुष्य को इन सबसे ऊपर उठाती है।

आजादी के लगभग 70 वर्ष बाद भी आदिवासियों की स्थिति अत्यंत दयनीय है आज भी 32 प्रतिशत से अधिक व्यक्ति गरीबी रेखा से नीचे जीवन जीने हेतु बाध्य है जिन का मूल कारण शिक्षा का अभाव है। यदि समय रहते इस दिशा में पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया तो आदिवासी महिला विकास के सारे प्रयास अधूरे रह जाएंगे। 73वें संविधान संशोधन के माध्यम से जिला पंचायत तक महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण देकर निश्चय ही उनके महत्व को स्वीकार किया है लेकिन शिक्षा के अभाव में महिला जनप्रतिनिधि केवल रबर स्टैंप बनकर रह जाएंगी । इसी तरह संसद एवं विधानसभा सीटों का आरक्षण भी शिक्षा के अभाव में ग्रामीण आदिवासी महिलाओं के लिए व्यर्थ साबित होगा जिनका लाभ केवल शहरी महिलाएं ले लेंगे।

विश्व के देश आज सशक्त एवं समृद्धशाली है वह पुरुष केवल स्त्री शिक्षा और संस्कार के बल पर ही आगे बढ़े और विकसित हैं। यदि हम भी अपने समाज को समृद्ध शक्तिशाली और आर्थिक रुप से सुदृढ़ देखना

चाहते हैं तो ग्रामीण आदिवासियों महिलाओं को शिक्षित व संस्कारित करना ही होगा अन्यथा हमारा महिलाओं के विकास का सपना सपना ही रह जाएगा। अतः महिलाओं को विकास की मूल धारा में सम्मिलित करने और उन्हें सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक, प्रशासनिक तथा राजनीतिक दृष्टि से अभी तक किए गए प्रावधानों कानूनो व्यवस्थाओं योजनाओं एवं कार्यक्रमों में शामिल करना जरूरी है।

जनजाति अर्थव्यवस्था मूल रूप से प्रकृति से केंद्रित रही हैं। उत्पादन संबंधी समस्त कार्य नातेदारी व्यवस्था,गोत्र, भ्राता समूह अथवा परिवारों के मध्य संबंधों द्वारा शासित एवं निर्धारित होते हैं। आर्थिक विकास की चाहे कोई भी अवस्था हो जनजाति स्त्रियां वर्तमान समय तक एक लेबर मशीन की भांति अपना योगदान परिवार की अर्थव्यवस्था में देती आई हैं। भोजन संग्रह, शिकार,मछली पकड़ना, चारागाह, स्थान परिवर्तन कृषि, स्थाई कृषि, हाथकरघा, अन्य लघु उद्योग, व्यापार अथवा वाणिज्य कृषि औद्योगिक श्रमिक कार्य जनजातियों की प्रमुख आर्थिक जीवन से संबंधित हैं।

आदिवासी क्षेत्रों में औद्योगिक विकास के फलस्वरुप पर्याप्त संख्या में आदिवासी स्त्रियां भी उद्योग तथा संबंधित व्यवसाय को अपना रहे हैं परिणामस्वरुप श्रम बाजार में उनकी स्थिति में परिवर्तन आया है इस प्रकार अनेक जनजातियां समाजों में स्त्रियों ने पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर कार्य करने की प्राचीन परंपरा को वर्तमान समय तक बनाए रखा है। आर्थिक विकास की विभिन्न अवस्थाओं में उत्पादन व्यवसाय के विभिन्न क्षेत्रों में उनका योगदान एवं भागीदारी सराहनीय प्रतीत होती है। यहां तक कि औद्योगिकीकरण के क्षेत्र में भी उन्होंने इस रफ्तार को बनाए रखने का प्रयास किया है यद्यपि उद्योग के क्षेत्र में कार्यरत आदिवासी स्त्रियों में भूमिका का दबाब अधिक बढ़ गया है तथा साथ ही साथ नए कार्य और कार्य क्षेत्रों के साथ सामंजस्य की समस्या बढ़ गई है ।

कुल मिलाकर यह बात स्पष्ट है कि जनजाति समाजों की अर्थव्यवस्था में स्त्रियों की भूमिका सर्वत्र ही महत्वपूर्ण रही है। यद्यपि कहीं उन्हें अधिक मान्यता प्रदान की गई है तो कहीं कम। सशक्तिकरण एक प्रक्रिया है जिसमें सबसे पहले इसके अंदर महिलाओं को जागरुक कर उनको आर्थिक सामाजिक या राजनीतिक संसाधनों उपलब्ध कराया जाए। तत्पश्चात महिलाओं को एक प्लेटफार्म पर लेकर उनकी शक्ति और एकता को मजबूत बनाकर सामूहिक कार्य के लिए प्रेरित किया जाए।

महिलाओं को पुरुषों के समान दर्जा प्रदान करने के लिए अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी अनेक सम्मेलन होते रहे हैं। संयुक्त राष्ट्र का महिलाओं के लिए दशक सन 1995 में समाप्त हुआ तब यह निष्कर्ष निकाला गया कि विकास कार्यों में महिलाओं के संपूर्ण एकीकरण के बिना जीवन को सामान्य गुणवत्ता में सुधार कर पाना संभव नहीं है। विश्व सम्मेलन में यह माना गया था कि स्त्री और लड़कियों की जनसंख्या विश्व की जनसंख्या के आधे के बराबर है।

शिक्षा मनुष्य को स्वाभिमानी और स्वावलंबी बनाती है। यही प्रगति और विकास का मार्ग है और जीवन का लक्ष्य है। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा है– ''एक लड़की की शिक्षा एक व्यक्ति की शिक्षा है, परंतु एक लड़की की शिक्षा संपूर्ण परिवार की शिक्षा है।'' शिक्षा का अभाव ग्रामीण महिलाओं के आर्थिक विकास में सबसे बड़ी बाधा रहा है । ज्यादतर महिलाएं अशिक्षित है ।

आर्थिक स्वावलंबन के लिए परिवार की भूमि, धन व संपत्ति में महिलाओं की हिस्सेदारी अदा महिलाओं द्वारा स्वयं सहायता समूह का गठन करके, स्वयं आगे आने के लिए रोजगार के अवसर जुटाए। पंचायती राज्य व्यवस्था के तहत महिलाओं के लिए एक तिहाई पदों के आरक्षण से भी महिलाएँ सक्रिय भूमिका निभाने लगी है। यूनिसेफ ने सुझाव दिया है कि ग्रामीण महिलाओं में राजनीतिक नेतृत्व क्षमता में वृद्धि करने के लिए महिलाओं की चुनाव लड़ने की आयु सीमा कम कर दी जाए। उच्च माध्यमिक शाला में अध्ययनरत बालिकाएँ चुनाव लड़े और ये बालिकाएँ ज्यादा योग्यता और उत्साह से काम करेंगीं। अध्ययन बताते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में पहली कक्षा में प्रवेश लेने वाली शॉप बालिकाओं में से केवल 13 ही आठवीं कक्षा तक पहुंच पाती है और केवल एक ही बारहवीं कक्षा के स्तर को पार करती है।

हमारे संविधान में किए गए संशोधनों में यद्यपि महिलाओं को अधिकार संपन्न बना दिया है लेकिन ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण का प्रयास तभी सफल होंगे जब मैं ग्रामीण महिलाओं को और आदिवासी महिलाओं को अधिक साक्षर कर उन्हें महिला विकास के प्रति और अधिक जागरूक बनाया जाएगा अभी भी काफी कुछ किया जाना बाकी है।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

Health Care Financing in India : Trend, Variability and Implications

Manoj Kumar Sial

Abstract :- In spite of India's impressive performance on economic front in the post 1990s after adoption of new economic policy, its ranking in human development index has been very abysmal. Development of health status of the people constitutes a major determinant of development of human capital. But this sector has been grossly ignored in the planning process since decades. Even after reforms also the trend remained more or less the same. Universal coverage of health care services along with providing quality care to large sections of people is the major areas where the country has failed miserably. Making services available is a necessary condition for health service utilization. Evidence suggests that supply-side barriers are as important as the demand side factors in deterring patients from obtaining treatment. This paper examines the interstate and intra-state variations in public health expenditure in 15 major states during the period 1991-92 to 2009-10. The analysis depicts a deceleration in health expenditure in the major poor states leading to low level of human development. Thus, it is apparent that economic reforms have largely ignored the health sector. India, Health expenditure, Economic Reforms, Trend growth, Relative Variability JEL Classification: I10, I18, I19.

1. Introduction :- Health is essential for the realization of basic human needs and to attain a status of better quality of life (WHO, 2001). To attain the same, health care has emerged as a basic concern in all nations, though the problems of the developing world are radically different. The major issue in most of the Developing and third world is how best to deliver basic health care to the majority, most of whom are poor, living in remote rural and inaccessible area (Mazumdar and Guruswamy, 2009). In fact, the commission on Macroeconomics and Health of the WHO (2001) argues that the provision of better health care is the key to improve health and economic growth in developing countries. Though there has been much public debate and academic interest in India on the quality and importance of human life, but the focus has largely been on the performance of the economy as a whole and not on the level of enhancement on the quality of human life. Since the last two decades, because of the initiation of economic reforms and consequent fiscal stringency which have led in several countries to a reduction in the levels of expenditure incurred by the government on health and education which had direct adverse impact on social Indicators (Stewart, 1992; Jayarajah et al, 1996). India entered into the path of economic reforms in July 1991. Despite of India's impressive economic performance after the introduction of economic reforms in the 1990s, progress in advancing the health status of Indians has been slow and uneven (Baru et al, 2010). Since then there have been negative projections that the adverse repercussions of associated policies may undermine the low level of human development in the country. After the initiation of economic reforms the most effected sector was the public financing of social sector and most importantly Health and Education.

There have been so many studies conducted on the public expenditure on social services, most of the studies like Guhan (1995) and Prabhu (1996) stated to a decline in government allocations to social services across Indian states whereas Tulasidhar (1993) found to a similar trend in health expenditure. In the same way Sarkar and Prabhu (2001) empirically studied the real per capita social service expenditures in the 15 states from 1974-75 to 1995-96 found that the declining trend in these expenditures started even before economic reforms began in 1991. Their study

revealed that there is a deceleration in real per capita state government expenditure on social services in the majority of Indian states. As against a general picture of deceleration in overall social services expenditure, the situation with respect to health was worst as compared to education. Yuko Tsujita (2005) examined social sector expenditures in fifteen Indian states between 1980-81 and 1999-2000. He found that Economic reforms did not have a major negative impact on expenditures. It is clear that state revenue procurement was sluggish from the mid 1980s which was a major determinant of social service expenditures in each state. Again, there is absolutely a dearth of research when it comes to the variations in Health expenditure. In this paper we tried to bridge that gap by analyzing the interstate and intra-state variations in public health expenditure in case of major fifteen Indian states. The rest of the paper is arranged as follows. The next section depicts the importance of the public health expenditure. Section 3 deals with methodologies and data sources. The section four is devoted to the analysis of main characteristics of public health expenditure**.** The fifth section reveals the explanation and discussions on the results. The sixth section or the last section finally concludes with some policy implications.

2. Health financing in the public sector :- Financing is one of the most critical determinants of how well the health sector will perform. The nature and pattern of financing to a large extent determines the effectiveness of service delivery and at the same time it defines the boundary and capability of the system to achieve its objective. In 1978, the thirtieth world health assembly decided that the main social target of governments and the World Health Organization in the coming decades should be “attainment by all citizens of the world by the year 2000 of a level of health that will permit them to lead a socially and economically productive life. In 1978, with a view to support the above stated goal, the international conference on primary health care which took place at Alma Ata adopted the declaration that primary health care was the key to obtain the target of “Health for all” by the year 2000. The above stated declaration has led most of the governments including developed and less developed countries to give much more priority to their health care system through higher allocation and better utilization of resources in order to improve the quality of health care services. India too has been attempting towards this end. To achieve the above stated goal for “health for all” WHO recommended an outlay of 6 percent of the GDP for India (Gill and Kavadi, 1999). In a developing country like India the public role in providing and financing health services assumes greater importance from the perspective of social welfare as well as ensuring equity (Guruswamy et al. 2008). The 1983 National Health Policy (NHP) was committed in providing health services to all by 2000. In 1983 health care expenditures varied greatly among the states and union territories. Although government health care spending progressively grew throughout the 1980s, such spending as a percentage of the Gross National Product (GNP) remained fairly constant. In the meantime, health care spending as a share of total government spending decreased. In 2007, according to WHO’s World Health Statistics, India ranked 184 among 191 countries in terms of public expenditure on health as a percent of GDP. During the same period, private-sector spending on health care was about 1.5 times of government spending.

Table-1: Pattern of Central Allocation (Total for the Country and Union MOHFW)

Period		Total Plan Investment Outlay (All Heads of Devp.) of country	Health Sector			Natonal Rural Health Mission (NRHM)	Natonal Aids Control Organi-zat- ion (NACO)	Health Re-search	Total	% Outlay (Rs. in crores)
			Health	Family Welfare	AYUSH1					
1	2	3	4	5	6				7	8
First Plan	(Actuals)	1960.0	65.2	0.1	-				65.3	3.4
(1951-56)			(3.30)	(0.10)						
Second Plar	(Actuals)	4672.0	140.8	5.0	-				145.8	3.1
(1956-61)			(3.00)	(0.10)						
Third Plan	(Actuals)	8576.5	225.9	24.9	-				250.8	2.9
(1961-66)			(2.60)	(0.30)						
Annual Plans	(Actuals)	6625.4	140.2	70.4	-				210.6	3.2
(1966-69)			(2.10)	(1.10)						
Fourth Plan	(Actuals)	15778.8	335.5	278	-				613.5	3.9
(1969-74)			(2.10)	(1.80)						
Fifh Plan	(Actuals)	39426.2	760.8	491.8	-				1252.6	3.1
(1974-79)			(1.90)	(1.20)						
Annual Plan	(Actuals)	12176.5	223.1	118.5	-				341.6	2.8
1979 - 80			(1.80)	(1.00)						
Sixth Plan	(Actuals)	109291.7	2025.2	1387	-				3412.2	3.1
(1980-85)			(1.80)	(1.3)]						
Seventh Plar	(Actuals)	218729.6	3688.6	3120.8	-				6809.4	3.1
(1985-90)			(1.70)	(1.40)						
Annual Plan	(Actuals)	61518.1	960.9	784.9	-				1745.8	2.9
(1990-91)			(1.60)	(1.30)						
Annual Plan	(Actuals)	65855.8	1042.2	856.6	-				1898.8	2.9
(1991-92)			(1.60)	(1.30)						
Eighth Plan	(Outlays)	434100.0	7494.2	6500	108				14102.2	3.2
(1992-97)			(1.70)	(1.50)	(0.02)					
Ninth Plan	(Outlays)	859200.0	19818.4	15120.2	266.35				35204.95	4.09
(1997-02)			(2.31)	(1.76)	(0.03)					
Tenth Plan	(Outlays)	1484131.3	31020.3	27125.0	775				58920.3	3.97
(2002-07)			(2.09)	(1.83)	(0.05)					
Eleventh Pla	(Outlays)	2156571.0		136147.0	$3988.0				140135.0	6.50
(2007-12)				(6.31)	(0.18)					
Annual Plan	(Outlays)			27127µ	990.00	20542.00	1700.00	660.00	30477.00	
(2012-13)										

Sources: Health Information of India, 2011, CBHI, MOHFW, GoI

Recently India has entered into a high growth rate trajectory of 9 per cent. This high rate of growth, however, is not accompanied by a high level of social development. For example, public expenditure on health services as a percentage of Gross Domestic Product (GDP) in India is less than 1 per cent likely to be one of the lowest across the globe (Rao et al. 2005). Recently Dr. Kurian stated that the health care system in India pre–dominantly is catered to by the private sector and a minuscule contribution through external flows. Expenditure in the private sector contributes to 78.05% of total health expenditure, public sector accounts for 19.67% and external flows 2.28%. In totality, health expenditure formed 4.25% of Gross Domestic Product (GDP)[1]. It could be seen from various plan documents that the expenditure on health sector has declined during the post-independence period. The outlay has decreased from 3.3% in the first plan (1950-56) to 3% in the second plan, 2.6% in the third plan (1961-66) ,2.1% in the fourth plan (1969-74) ,1.9% in the fifth plan (1974-79) ,1.8% in the sixth Plan (1980-85) and 1.7 % in the seventh plan (1985-90) and what is more, public spending on health as a percent of GDP in India has stagnated in the past two decades, from 1990–91 to 2009–10, varying from 0.9 to 1.2 percent of GDP[2]

Public expenditure on health as percent of government expenditure has been declining

[1] Dr N.J. Kurian "Financing healthcare in India", The Hindu, January15, 2010

[2] World Health Statistics 2012, WHO and Rao and Chaudhury (2012) "Health Care Financing Reforms in India" NIPFP, Working Paper No: 2012-100, March- 2012.

over the years. The total expenditure on health by the Centre, states and Union territories was Rs. 65.2 crore which was 3.33 percent of the total plan expenditure during the first five-year plan. Though the absolute figure went on increasing and swelled up to Rs 31020.3 in the tenth plan period in percentage terms it has decreased to 2.09 percent. On the other hand, expenditure on Family Welfare has been increasing at a slow and steady rate from first five-year plan to tenth five-year plan. And it was surprisingly high in the latest eleventh five-year plan which is around 6.3 percent as compared to 1.83 percent in the tenth plan period (Table-1).

Now, the proportion of health expenditure is below the average of low income countries and even sub-Saharan Africa (Audibert and Mathonnat, 2012). On the other hand private expenditure has grown from strength to strength because there is a vast demand which must be met. The government has failed to meet this demand but the private sector has served it, whatever the manner and quality.

The Table 2 clearly depicts the health status outcomes in case of India and major Indian states. It is evident that some states are well-off and performing better than the national average of health outcomes (South-Indian states, Punjab, Maharashtra, West Bengal etc.) and some states are performing very much worst (Uttar Pradesh, Orissa, Madhya Pradesh, Bihar, Rajasthan, Assam etc.) as compared to other Indian states. Like the health outcomes, in case of population growth, these under-developed states show higher exponential growth of population as compared to the developed states.

Table 2: Selected health status outcomes in India and major Indian states

Area	Life expectancy at Birth, average for 2002-06 years	MMR 2007-09	IMR 2009	Under 5 mortality Rates, 2008-09 (per 1000 live births)	Sex Ratio(Females per 1000 males) 2011 Census	Child Mortality Rate (0-4)	C.B.R. (Crude Birth Rate), 2009	C.D.R. (Crude Death Rate), 2009	T.F.R. (Total Fertility Rate) 2009	Population (in 000's) 2011	Annual Exponential G.R(%) 2001-11
Andhra Pradesh	64	134	43	52	992	12	18.3	7.6	1.9	84,666	1.06
Assam	59	390	55	87	954	19	23.6	8.4	2.6	31,169	1.58
Bihar	62	261	44	70	916	15	28.5	7.0	3.9	103,805	2.26
Gujarat	64	148	41	61	918	14	22.3	6.9	2.5	60,384	1.77
Haryana	66	153	44	60	877	13	22.7	6.6	2.5	25,353	1.83
Karnataka	65	178	35	50	968	11	19.5	7.2	2.0	61,131	1.47
Kerala	74	81	12	14	1084	3	14.7	6.8	1.7	33,388	0.48
Madhya Pradesh	58	269	59	89	930	21	27.7	8.5	3.3	72,598	1.87
Maharashtra	67	104	25	36	925	7	17.6	6.7	1.9	112,373	1.49
Orissa	60	258	57	84	978	18	21.0	8.8	2.4	41,947	1.32
Punjab	69	172	30	46	893	10	17.0	7.0	1.9	27,704	1.30
Rajasthan	62	318	52	74	926	17	27.2	6.6	3.3	68,621	1.96
Tamil nadu	66	97	22	33	995	7	16.3	7.6	1.7	72,139	1.46
Uttar Pradesh	60	359	57	85	908	20	28.7	8.2	3.7	199,581	1.85
West Bengal	65	145	32	40	947	8	17.2	6.2	1.9	91,348	1.31
India	64	212	44	64	940	14	22.5	7.3	2.6	1,210,193	1.64

Source: Family Welfare Statistics, 2011, Moh & FW, GoI

From the above table it is known that achievement in health indicators have been far less promising than expected in terms of current health status. If we look into the Mortality, Fertility and Life expectancy Indicators, it becomes clear that the IMR of under 40 per 1000 live births is seen only six out of fifteen major states that were under studied and maternal mortality remains high and continues to be high except Kerala and Tamil Nadu where it is below 100. And only in five states the fertility rate is below 2 percent. In case of life expectancy the performance of the major big states like Madhya Pradesh, Uttar Pradesh, Rajasthan, Orissa, Bihar and Assam are still below the national average.

3. Data and Methodology :- The data on government expenditure on health used in this exercise were compiled from Reserve Bank of India's annual report on State Government Finances published in the Reserve Bank of India Bulletin. The data pertain to both revenue and capital expenditure, as they constitute the total expenditure on the specified sectors. State specific deflators were calculated from the series on State Domestic Product at 1980-81, 1992-93, 1999-00 and 2004-05 prices obtained from the Central Statistical Organization. The study has taken the data from 1991-92 to 2009-10 in order to examine the growth and instability of public health expenditure. Annual population figures were compiled from various reports of Selected Socio-Economic Statistics India 2006 & 2011, Central Statistical Organization, Government of India. The choice of study period is guided by the data availability for all the study variables at the time of analysis. Basically the study has taken the time series data from 1991-92 to 2009-10 for GSDP, Health Expenditure and Population. In order to avoid the price changes, the public health expenditure have been considered at constant prices with reference to 2004-05 as the base year. By using GDP deflator[3] method, expenditure on current prices has been converted to constant prices. In case of states, we have used their respective Gross State Domestic product deflators[4]. Using data on population and state specific SDP deflators, real per capita expenditure was computed for Health Expenditure. In order to analyze the above issue of public health expenditure, the present study disaggregated the public health expenditure into three components i.e., (1) Medical and public health (2) water supply and sanitation (3) family welfare. The details component wise as well as aggregated trends of public health expenditure have been examined at both revenue and capital expenditure heads of account. Revenue expenditure mostly comprises recurrent expenditure on salaries, supply of equipment and drugs, public health programmes, medical education and training, and general operating expenses. Capital expenditure involves non-recurrent expenditure on physical assets and infrastructure, and one-time capital investment in disease control and public health programmes. Further the revenue and capital heads include both plan and non-plan items of expenditure. Plan expenditure includes expenditure incurred on different programs and scheme outline in the five year plans while non-plan expenditure includes all government expenditure on salaries, interest payment, office expenses and other day to day expenditure of the government. The analysis was confined to 15 major Indian states that accounted for 85.5 percent of area and 90 percent of population Sarkar and Prabhu (2001) and Bhat and Jain (2004).

4. Main Characteristics of Public Health Expenditure :- The mean, Standard Deviation and coefficient of variation (CV) of total health expenditure as well as Revenue and Capital expenditure on health for the years 1991-92 to 2009-10 are presented in Table 3, 4, 5 and 6 respectively. It may be observed from the table

[3] GDP deflator is the ratio of nominal GDP in a given year to real GDP of that year. The deflator measures the change in prices that has occurred between base year and the current year.

[4] In case of GSDP deflator it is the ratio of nominal GSDP in a given year to real GSDP of that year.

that intra- states variation for each state were lower than inter-state variations pointing to the fact that year to year variations in government expenditure within a state seemed to be relatively stable, though the magnitude of variations across states was relatively high (Table 4). The states also varied a great deal with respect to social sector attainments (Table 2). The low income states of Bihar, Uttar Pradesh, Orissa and Madhya Pradesh that had particularly low levels of social indicators also reported low levels of per capita expenditure on Health care services. But the performance of Rajasthan although impressive in case of per capita health expenditure, the social sector attainments are very low and quite similar with the above underdeveloped states. The average per capita health expenditure incurred by Kerala, Punjab, Tamil Nadu, Gujarat and Haryana during 1991-2009 were 320.73, 333.69, 322.29, 317.39 and 424.26, while Bihar and Uttar Pradesh incurred an expenditure of only 154.31 and 166.94 respectively (Table 3). Among all the major states, all the southern states have been performing well in the social sectors attainments as well as in per capital health expenditure. The low attainments states of Bihar and Uttar Pradesh recorded nearly half the levels reported in these states and even as Andhra Pradesh, Odisha and Madhya Pradesh, three other low attainment states. In Rajasthan and Haryana, the higher level of per capita health expenditure (i.e. 431.01 and 424.26) was mainly on account of higher expenditure on water supply and sanitation mainly from the capital account of health expenditure (Table 6). And among all the states Kerala has performed exceptionally better in all the social sector indicators.

Table 3: Intra-state Variations in Health Expenditure: 1991-2009

State	Health Expenditure		
	Mean	SD	CV
Andhra Pradesh	271.57	79.89	29.42
Assam	249.92	78.90	31.57
Bihar	154.31	37.83	24.52
Gujarat	317.39	96.49	30.40
Haryana	424.26	140.69	33.16
Karnataka	306.77	91.65	29.88
Kerala	320.73	74.38	23.19
Madhya Pradesh	240.43	28.06	11.67
Maharashtra	275.29	53.39	19.40
Orissa	233.32	67.60	28.97
Punjab	333.69	70.39	21.09
Rajasthan	431.01	109.85	25.49
Tamil Nadu	322.29	72.96	22.64
Uttar Pradesh	166.94	50.91	30.50
West Bengal	218.68	59.50	27.21
India	275.76	69.41	25.17

Sources: RBI Bulletin on State Government Finances and CSO, Govt. of India

The data indicate that as compared to initial levels, the real per capita expenditure have increased over time for all the states. However, the rate of increase varied from state to state. The variations in health expenditure were also high and more than the national average for the states like Haryana, Uttar Pradesh, Gujarat, Assam, Karnataka, Andhra Pradesh, Orissa and West Bengal respectively. On the other hand the variation was lowest in case of under developed State like Madhya Pradesh i.e. 11.67. However, the inter-state variation (CV) in case of health

expenditure has increased and even more than the average of intra-state variation during 1991 to 2009, which shows significant differences in health expenditure incurred by different states (Table 4).

An inter-state analysis of the share of revenue and capital expenditure in total health expenditure indicated some interesting features (Table 5 and 6). It is seen that, Kerala recorded the highest proportion of revenue expenditure of total Health expenditure. Kerala was followed by Punjab, Haryana and Rajasthan. Like the total Health expenditure; in case of revenue expenditure also Bihar (129.43) and Uttar Pradesh (145.77) recorded lowest share in total revenue expenditure on Health care services. The inter-state variation in revenue expenditure was quite less than the variation in capital expenditure.

Table 4: Inter-State Variations in Health Expenditure

Year	MEAN	SD	CV
1991	206.739	45.385	21.953
1992	214.676	50.644	23.591
1993	216.040	48.086	22.258
1994	231.543	67.342	29.084
1995	221.927	58.711	26.455
1996	232.129	68.650	29.574
1997	247.702	71.816	28.993
1998	278.296	87.833	31.561
1999	286.369	84.197	29.402
2000	294.626	89.645	30.427
2001	275.520	87.402	31.723
2002	276.329	90.127	32.616
2003	277.877	98.281	35.368
2004	290.708	105.018	36.125
2005	310.207	96.875	31.229
2006	323.028	105.745	32.736
2007	363.642	121.668	33.458
2008	414.079	133.090	32.141
2009	442.935	146.143	32.994
MEAN	284.441	87.192	30.089

Source: Same as Table 3

There was no systematic pattern in the variation in the revenue expenditure of health care services. There were some states which had more variation as compared to the all India figure of (17.11%) like Andhra Pradesh, Assam, Orissa, Haryana, Kerala, West Bengal, Bihar, Gujarat, Uttar Pradesh ,Maharashtra, Rajasthan and very few states which were below the national variation, like Karnataka, Tamil Nadu, Punjab and Madhya Pradesh.

Table 5: Intra-state Variations in Revenue Expenditure on Health: 1991-2009

State	Health Expenditure		
	Mean	SD	CV
Andhra Pradesh	236.64	66.91	28.27
Assam	246.20	70.74	28.73
Bihar	129.43	25.74	19.88
Gujarat	224.57	43.12	19.20

Haryana	304.08	70.09	23.05
Karnataka	244.55	35.15	14.37
Kerala	310.02	72.10	23.26
Madhya Pradesh	213.10	33.29	15.62
Maharashtra	264.60	49.86	18.84
Orissa	201.29	48.73	24.21
Punjab	307.53	46.86	15.24
Rajasthan	295.53	52.69	17.83
Tamil Nadu	257.22	34.13	13.27
Uttar Pradesh	145.77	28.23	19.36
West Bengal	196.52	39.91	20.31
India	228.81	39.15	17.11

Sources: RBI Bulletin on State Government Finances and CSO, Govt. of India

Table 6: Intra-State Variations in Capital Expenditure on Health: 1991-2009.

State	Health Expenditure		
	Mean	SD	CV
Andhra Pradesh	16.99	27.37	161.05
Assam	25.40	44.50	175.22
Bihar	24.88	19.66	79.02
Gujarat	92.83	60.63	65.32
Haryana	120.18	77.65	64.61
Karnataka	62.21	70.08	112.65
Kerala	10.71	3.55	33.17
Madhya Pradesh	27.34	27.43	100.35
Maharashtra	10.69	12.54	117.33
Orissa	32.03	26.52	82.80
Punjab	26.16	43.82	167.53
Rajasthan	135.49	67.12	49.54
Tamil Nadu	65.07	59.65	91.67
Uttar Pradesh	21.17	25.47	120.31
West Bengal	22.15	29.12	131.47
India	46.96	31.34	66.74

Sources: RBI Bulletin on State Government Finances and CSO, Govt. of India

Like the revenue expenditure, in case of capital expenditure, also there was severe inter-states variation in the share of capital expenditure of health services. In this share, Rajasthan recorded the highest proportion of capital expenditure on health care, mainly on account of higher expenditure on water supply and sanitation. Rajasthan (135.49) was followed by Haryana (120.18) and Gujarat (92.38) occupied the second and third position respectively. On the other hand Maharashtra and Kerala recorded the lowest proportion of expenditure in total capital expenditure. Some of the other developed states like Tamil Nadu (65.07); Karnataka (62.21) had fared well as compared to the all India average (46.96) of capital expenditure. Except above states, all other states were below the all India average of capital expenditure on Health care

services. There was severe variation in this capital expenditure of health services, the states like Assam, followed by Punjab, Andhra Pradesh, West Bengal, Uttar Pradesh, Maharashtra, Karnataka, Madhya Pradesh registered extreme variation and lowest variation found in Kerala followed by Rajasthan, Haryana and Gujarat.

5. Towards an Explanation :- The deceleration in health expenditure of a large number of Indian states, particularly in states with low level of attainments after the introduction of economic reforms has not received the attentions by many academicians. One question that arises is what the reasons for this observable fact are? One of the factors that could have contributed to this common pattern is the fiscal crisis that the states have been facing since the mid-1980s. Sato (1988) analyzed fiscal transfers from the central government to the states between 1972 and 1984, and he was able to explain the structural reasons why the state governments had to level off or reduce social service expenditures. Fiscal transfers from the central government favored infrastructure investment especially in states with high per capita state domestic product (SDP). Meanwhile, the use of these transfers to raise state social service expenditures was restricted; therefore state governments generally did not increase social service expenditures at the cost of increased revenue deficits. Under this fiscal transfer system, states with low per capita SDP were less likely to increase social service expenditures, while states which strived to maintain high social service expenditures as a matter of state government policy were likely to experience overdraft problems and revenue deficits. Even before the far-reaching economic reforms began in 1991, social service expenditures were particularly vulnerable to budget cuts (Harris-White 1999:303) which generally affected state government social service expenditures. An empirical study by Prabhu and Sarkar (2001) that examined the real per capita social service expenditures in the 15 states from 1974-75 to 1995-96 found that the declining trend in these expenditures started even before economic reforms began in 1991. By examining a longer time frame, their article found that economic reforms were not the turning point for changes in expenditures, although they examined only up to the mid-1990s. Rao and Sen (1993) identified the two reasons that could have contributed to the worsening of the fiscal situation of states. Those are :

(1) The pressure to increase expenditure on quasi-public goods, subsidies, and transfers following the high expenditure growth at the central level and

(2) Proliferation of centrally sponsored schemes since the early 1980s that has required the states to commit resources to such schemes.

There are mainly three reasons why state government started reducing social services expenditures in the 1980s. Firstly, Because of the new overdraft scheme introduced by RBI in January 1985, the states were not allowed to maintain overdrafts with RBI for more than 7 consecutive days which enforced the states to go for borrowing from institutional and financial agencies. Moreover the cost of such funds was higher. The fiscal stringency faced by the states since the mid-1980s is similar to the situation at the Centre since mid-1991. This could have had an adverse effect on the spending on social services in real per capita terms. Secondly, state governments increased civil servant salaries and pensions in the mid-1980s following the recommendation of the Fourth Central Pay Commission. This increase coupled with rising interest payments on the states' growing debt issues meant that development expenditures had to be reduced in order to pay for salaries and pensions in non-development expenditures. As already pointed out, most of the states started to reduce development expenditures in the mid-1980s, which means that social service expenditures specifically health and education, have been sacrificed since the mid-1980s. Thirdly, the reduction of transfers from the central government since the mid-1980s has also played a role in the decline of social service expenditures.

6. Conclusions :- Despite India's impressive economic performance after the introduction of economic reforms in the 1990s, progress in advancing the health status of Indians has been slow and uneven. Most surprisingly, the backward states of India have been lagging behind other states in achieving the goal of "health for all". Although all the states in India have the responsibility to spend more on health and education but unfortunately they had not given enough importance to these sectors after 1990's and even before because of the fiscal crisis with relatively low level of political commitment to social sectors. There is interdependence between human development indicators and the level of health expenditure of the government, so the main emphasis in this paper has been examining the variations in real per capita health expenditure incurred by various state governments in India.

The analysis has revealed that there is a deceleration in per capita government expenditure on health expenditure in a majority of under developed states of India. Regarding the pattern of health expenditure, there were severe differences in the allocation of health expenditure in terms of both revenue expenditure and capital expenditure of health care services. There were also significant differences in the allocation of various components of health expenditure i.e. expenditure on Medical and public health, Family Welfare and Water Supply and Sanitation. As already observed that intra- states variation for each state were lower than inter-state variations in health expenditure. Regarding the variations in health expenditure, the capital account of health expenditure showed more fluctuations in resource allocation then the revenue account. The analysis indicates varied of experience of Indian states. While southern states of Kerala, Karnataka, Tamil Nadu and Andhra Pradesh showed a constant increasing pattern of health expenditure after the introduction of economic reforms. They have continued to give high priority to finance human development; other relatively high expenditure states such as Punjab, Haryana, and Gujarat have not hesitated to slash funds for health expenditure despite none too encouraging performance on the human development front. The deceleration of health expenditure in the low income and low human development states of Bihar, Madhya Pradesh, Uttar Pradesh, Assam and Odisha implied that the cherished goals of "Health for all" remain subtle as ever. Recently these low income states have registered a steady increase in health expenditure but the WHO stated goal is far away to achieve.

References :-

Baru el al. (2010), "Inequities in Access to Health Services in India: Caste, Class and Region", Economic and Political Weekly 45(38), 49-58.

Boyce James K. (1986), "Kinked Exponential Models for Growth Rate Estimation", Oxford Bulletin of Economics and Statistics, 48(4), 385–391.

Gill, S. and Kavadi, S. N. (1999) "Health Financing and Costs: A Comparative Study of Trends in Eighteen Countries with Special Reference to India", Foundation for Research in Community Health.

Guhan, S. (1995), "Social Expenditure in the union Budget", Economic and Political Weekly XXX (19), 1095-1102.

Gumber, A. (1997), "Burden of disease and cost of ill health in India: Setting Priorities for Health Interventions during the Ninth Plan", Margin, 29(2), 133–72.

Guruswamy, M, Sumit Mazumdar and Papiya Mazumdar (2008), "Public Financing of Health Services in India: An analysis of Central and State Government Expenditure," Journal of Health Management, 10(1), 49-85.

Jayarajah, C., William Branson and Binayak sen. (1996), social dimensions of adjustment: World Bank Experience 1980-93, World Bank Operations Evaluation Study, World Bank, Washington D C.

Joshi, D. K., Bhide, S and Sood A. (2001), Finances of the Northern States in the New Millennium: Status and Prospects, National Council of Applied Economic Research, New Delhi.

Majumdar, S. and Guruswamy, M. (2009), "Demand and willingness to pay for health care

services in rural West Bengal", Social change, 39 (4), 568-585.

Martine Audibert and Jacky Mathonnat (2012) "Access to Healthcare, Healthcare Funding and Performance low-income countries: a contribution to the debate", Field Actions Science, Reports Special Issue 8. Available at http://factsreports.revues.org/2069

Paltasingh, K. R. and Goyari, P. (2013) "Analyzing Growth and Instability in Subsistence Agriculture of Odisha: Evidence from Major Crops" Agricultural Economics Research Review, 26(67-78).

Prabhu, K S (1996), The impact of Structural Adjustment on Social Sector Expenditure: Evidence from Indian States', in C H Hanumantha Rao and Hans Linnemann (ed), Economic Reforms and Poverty Alleviation in India, Sage Publications, New Delhi, 228-254.

Rao, M Govinda. (2002). "State Finances in India: Issues and Challenges," Economic and Political Weekly, Vol. 37(31): 3261-3271.

Rao, S. K., Selvaraju, S., Nagpal, S. and Sakthivel, S. (2005) "Financing and Delivery of Health Care Services in India", National Commission on Macroeconomics and Health, Ministry of Health & Family Welfare, New Delhi, Government of India.

Report of the Eleventh Finance Commission for 2000-2005, (2001), Ministry of Finance, Government of India

Report of the Twelfth Finance Commission for 2005-2010, (2004), Ministry of Finance, Government of India

Reserve Bank of India (2010), Handbook of Statistics on Indian Economy 2010, Reserve Bank of India, Various years, Finances of state government, Government of India.

Sarker P. C. and Prabhu K. S (2001), "Financing Human Development in Indian States Trends and Implications (1974/75- 1995/96)", The Asian Economic Review, 43 (1), 36-60.

Stewart, Frances, (1992), "The many faces of adjustment', in P.Mosley (ed), Development Finance and Policy Reform, Martin's Press, New York, 176-231.

Tsujita, Y. (2005), "Economic reform and social sector expenditures: a study of fifteen Indian states 1980/81-1999/2000", Discussion paper no. 31, Institute of Developing Economies (IDE), JETRO, Japan.

Tulasidhar, V B, (1993), 'Expenditure Compression and Health Sector Outlays', Economic and Political Weekly, XXVII (45), 2473-77.

World Health Organization (2001), Private Sector Involvement in City Health Systems, proceedings of a WHO conference meeting 14-16 February Dunedin, New Zealand, Available at http://www.who.int.

World Health Report (2000), Health System: Improving Performance, World Health Organization, Geneva.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

राजस्थान की कला में लोक देवी–देवता एक जन चेतना

डॉ. दिनेश कुमार वर्मा
असि. प्रोफेसर (चित्रकला), राजकीय महाविद्यालय, बून्दी, जिला बून्दी (राज0)

सारांश :– प्राचीन काल से कलाकार तत्कालीन सांस्कृतिक, सामाजिक मूल्यों, अवधारणाओं, रीति–रिवाजों व लोकाचारों एवं धार्मिक आस्थाओं व मान्यताओं को रूप–स्वरूप आकारिद करता रहा। वह रंग व रेखाओं व निर्मल सहज मिट्टी तथा पत्थरों को कांट–छांट कर अपने भावों– अनुभावों को मूर्त रूप प्रदान करता रहा। कला में लोक देवी–देवताओं के रूपाकारों को रचकर कलाकार अपने सांस्कृतिक विचारों को पोशित करता रहा। आदिम काल से लोगों में लोक देवी–देवताओं के प्रति धार्मिक आस्था और विश्वास रहा है। ऐसे व्यक्ति जिन्होंने अपने शोर्यपूर्ण कार्यो से त्याग, आत्म बलिदान, गायों की रक्षा, परोपकारी जीवन, वचनपालना आदि से लोगों के प्रति अपनी आस्था, विश्वास पैदाकर लोक देवता का स्थान प्राप्त किया और समाज में जनचेतना का संचार किया। समाज में जनमानस ने ऐसे लोगों के प्रति धार्मिक आस्था, विश्वास रखते हुए इनकी पूजा अर्चना करने लगे। सांस्कृतिक और धार्मिक विचारधारा ने कला का प्रचार–प्रसार किया और कला ने धर्म के गूढ़तम रहस्यों व लक्षणों को समझने में सहयोग प्रदान किया। निःसंदेह, कला में लोकान्मुख विचारो की सृजना से समाज में जनचेतना का प्रचार–प्रसार होता रहा।

प्रस्तावना :– राजस्थान में सांस्कृतिक विचारधारा का प्रवाह स्पष्ट दिखाई देता है। वेद काल से लेकर मध्यकाल तक की धार्मिक और दा" र्निक आस्था से अनुप्राणित लोक रंजकता यहाँ के जन मानस में आज भी बरकरार है। यहाँ के लोक देवी–देवताओं के रूपांकन लोक जीवन और उनसे जुड़ी कथा, कहानी, सांस्कृतिक परम्पराओं और जीवन दर्शन को दर्शाती है। कला में लोक देवी–देवताओं के रूपाकारों का अपना निजी महत्व है। चूंकि इसका आधार लोक जीवन की मान्यता, धार्मिक आस्था और पारम्परिक विचार धारा है। इसलिए जन साधारण के लिए अधिक ग्राह्य है। लोकान्मुख देव आकृतियों की परम्परा लोक हृदय से अद्भूत वह निर्मल धारा है जो सामाजिक परम्पराओं और लोगों की आस्था को अभिव्यक्त कर जन चेतना को जागृत करती है।

राजस्थान की कला में लोक देवी–देवताओं के रूपाकारों की एक समृद्धिशाली परम्परा रही है। यहाँ कलाकारों ने भित्ती, कपडा, कागज, केनवास, लकड़ी, मिट्टी और पत्थरों को कांट–छांट कर कला सृजन के लिए माध्यम बनाया है। कलाकार के कला सृजन में माध्यम नवीनता को दर्शाता है जिसे निम्नांकित भागों में विभाजित कर समझ सकते हैं।

1. भित्ति चित्र :– आदिम काल से कलाकार कला का सृजन करता रहा। आदिम मानव के चित्र संरचना में भय, जादू–टोना व धार्मिक प्रेरणाओं की अभिव्यक्ति है। निःसंदेह, आदिवासी लोग अपनी कुल देवी एवं स्वास्तिक की पूजा देवी–देवताओं के रूप में करते थे। इनके देविय रूप निर्विकार है जो उनकी आस्था के प्रतीक है। राजस्थान के गाँव–कस्बों में लोक देवी–देवताओं के छोटे–बड़े मन्दिरों में भित्ति चित्रांकन होता रहा। यहाँ रामदेवजी के मन्दिरों में पेन्टर द्वारा रामदेवजी के चित्र बनते रहे हैं।

2. काठ चित्रांकन :– राजस्थान में खाती, खेरादी, सुथार जाति के लोग लकड़ी पर कारीगरी करते है। वे लकड़ी का घरेलू सामान के अतिरिक्त लोक देवी–देवताओं के निर्माण में भी सिद्धहस्त हैं। राजस्थान के भीलवाडा से कुछ दूर बस्सी नामक ग्राम में लकड़ी की कलात्मकता के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ रामदेवजी, पाबूजी आदि देवी–देवताओं के रूपाकारों का निर्माण किया जाता रहा। रंगों में धोकडे का गोंद या अलसी का तेल मिलाकर लकड़ी को रंगा जाता है। कभी–कभी वार्निश (लोबान व फूल चपडी मिली हुई) का इस्तेमाल किया जाता है।

राजस्थान के गाँवों में पथवारी बनाने का रिवाज है। पथवारी को पथ का रक्षक माना जाता है, ऐसी मान्यता गाँवों के लोगों में विश्वसनीय है। बस्सी गाँव के खैरादियों का पुश्तैनी धंधा कावड़ बनाने का रहा है। साधारणतया एक फीट की कावड़े बनायी जाती है। लेकिन डॉ महेन्द्र भानावत के मुताबिक कावड़े चार–पाँच फीट तक भी बनाई जाती है। कावडों पर रामदेवजी के चित्र अंकित होते हैं। पाँच फुट लम्बे और तीन फुट चौड़े चौरे के चारों ओर चित्र बने रहते हैं। एक ओर काला–गोरा, भैरू जी तथा दूसरी ओर कावड़िया, वीर (श्रवण कुमार) व एक ओर गंगाधर तथा घट के दोनों ओर दो आँखें इन्हें सजीवता प्रदान करती

है।[1] राजस्थान के जैसलमेर जिले के रूणिचा में रामदेवजी का मेला लगता है। यहाँ अनेक श्रृदालू कावड़ लेकर पैदल तीर्थ यात्रा करते हैं। कावड़ के अतिरिक्त तलवार के आकार के खाण्डों पर बने रामदेवजी के चित्रांकन राजस्थानी लोक संस्कृति तथा सामाजिक परिवेश की विशिष्ट प्रस्तुति के प्रतिक रहे हैं।[2] खाण्डों का उपयोग अक्सर होली पर किया जाता रहा है।

3. देवरे :– आदिवासी, दलित लोगों ने अपने देवरे स्वयं बनाये। राजस्थान के गाँव कस्बों में यत्र–तत्र स्थापित देवरों में लोक देवी–देवताओं के रूपांकन देखे जाते हैं। रामदेवजी, भैरूजी, तेजाजी, माताजी, शौम्याजी आदि के रूपांकन धर्म व आस्था के प्रतीक है। मेवाड़ क्षेत्र में देवरों पर मोलेला की मूर्तियों को भी स्थापित किया जाता है। राजस्थान में प्राय यह भी देखा जाता है कि कई जगहों पर चौकोर या आयताकार पत्थर पर कामी लगाकर चिकना व चमकिला पेपर (वर्क) चिपका दिया जाता है और कहीं–कहीं इनकों कांट–छांट कर आँखें, कान व कान में कुण्डल इत्यादि से उसे सजाया जाता रहा है। गाँवों के घरों एवं देवरों की दीवारों पर विभिन्न प्रकार के मांड़ने बनाये जाते रहे हैं। धार्मिक भावनाओं के तहत गणेशजी, लक्ष्मीजी के पग्ल्या, स्वास्तिक आदि भाुभ प्रतीकों को मांडना के रूप में बनाये जाते हैं। मांड़ना रूपांकन के लिए गैरू, खड़िया का प्रयोग करते हैं। लोक देवी–देवताओं के रूपांकन में लोक जीवन, धर्म–कर्म, आस्था, मान्यताऐं और आशा–विश्वास के कई गुण–धर्म मौजूद है। मंन्दिरों और देवरों में लोक–आलोक थरपित किये गये। जनमानस में लोक देवताओं की मान्यता पराम्परिक विचारों के तहत सहज पीढ़ी दर पीढ़ी और भारतीय लोक चेतना की अन्तःकरणी उजास की प्रकृति से अनुप्राणित है। आज लोक देवी–देवताओं की आराधना तो पारम्परिक विचारों की लीक से जुडी हुई है। मसलन, रामदेवजी व तेजाजी के थानकों पर आज भी हर वर्श मेला लगता रहा है।

4. कपडे पर निर्मित चित्र :– राजस्थान के भीलवाडा व भााहपुरा में 500 वर्श पुरानी फड़ (पड़) चित्रण की परम्परा मौजूद है। छीपा जाति के जोशी परिवारों ने आज भी इस अनूठी लोक भौली फड़ के चित्रांकन की परम्परा को बरकरार रखा है। लोक कथाओं को आधार बनाकर फड़ चित्रण किया जाता है। फड़ चित्र भोपों के लिए बनाये जाते हैं, जो उनके जीविकार्पाजन का साधन है। भोपें मूलतः जैसलमेर, बीकानेर, नागौर जिले के निवासी है जो जोशी चित्रकारों से फड़ बनवाने आते रहते हैं। शोपें गाँव–गाँव घूमकर लोक कथाओं पर आधारित चित्रांकित फड़ का वाचन करते हैं। यह चारण भोपे गुर्जर, जाट, कुम्हार, बलाई जाति के होते हैं।

फड़ चित्रण के लिए सर्वप्रथम मोटे हाथ कते सूती कपडें पर गेहूँ या चावल के मांड में गोंद मिलाकर कलफ लगाया जाता है। सतह तैयार होने पर उसे घोटी से घोट–घोट कर समतल कर लिया जाता है। सतह तैयार होने के उपरान्त कथाओं के आधार पर रेखांकन व उनमें रंगाकन किया जाता है। गैरू, हिरमिच, हरताल, जंगाल, प्योडी, हिंगूल, सिंदूर, नील, चूना व काजल आदि रंगो का प्रयोग किया जाता है। लोगों में लोक देवी–देवताओं, लोक नायकों जैसे पाबूजी, देवनारायणजी, रामदेवजी, गोगाजी, हडबूजी, तेजाजी तथा माताजी की फड़ प्रचलित रही है। इनमें देवताओं के जीवन की चमत्कारी धटनाओं और लोकान्मुख विचारों को चित्रित किया जाता है। रंगो का प्रतिकात्मक प्रयोग भावाभिव्यक्ति पूर्ण है। देवियां नीली, देव लाल और सिंदूर रंगों से रूपायित है। सिंदूर, लाल रंग भौर्य व वीरता के द्योतक है।

देवनारायण की फड़ सबसे पहले बनायी गई। यह 13 से 25 हाथ तक लम्बी होती है। इस फड़ को गुर्जर भोपें जन्तर नामक वाद्य के साथ बांचते है। पाबूजी की फड़ को नायक भोपे रावण हत्था को बजाते हुये राग स्वरूप गाते हैं। इसके वाचन के साथ शोपिनि भी रहती है जो अपने हाथ में दीवट के लिए शोपे के गाथा बोलों को झेला देती है। पाबूजी के पड़ में रावण और ऊँटों के चित्र होते हैं। पाबूजी अपनी भतीजी को दहेज में देने के लिए रावण से लड़कर लंका से ऊँट लाए थे, यह ऊँट ही पाबूजी की पड़ का मुख्य प्रतीक है। चित्रों में पड़ गायों के बचाने की कथा के कारण गायों के झुण्ड पाबूजी और देवनारायण दोनों के कथा चित्रों में देखे जा सकते हैं।[3] भीलवाडा के श्रीलाल जोशी फड़ चितेरों में सबसे विख्यात है। इन्होंने अनेक देवी–देवताओं की फड़ का मनमोहक चित्रांकन किया। श्रीलाल जोशी ने बाबा रामदेव की पड़ का चित्रण किया तथा यह पड़ काफी प्रचलित हो गई है।[4] कल्याण जोशी ने पाबूजी की फड़ का रसमय चित्रण किया है। पड़ चित्रकारों में शहपुरा के श्री दुर्गेश जोशी को राश्ट्रपति पुरस्कार मिल चुका है तथा श्रीलाल जोशी को राश्ट्रपति का दो बार मेरिट अवार्ड मिला है।[5] श्रीलाल जी की हाथ की बनी फड़ विदेशों में पेरिस, अमेरिका, इंग्लेण्ड, हॉलेण्ड, जापान, फ्रांस, पाकिस्तान, बांग्लादेश,

आस्ट्रेलिया आदि में वहाँ के संग्रहालयों तथा प्रतिष्ठित संस्थाओं की शोभा बनी हुई है।

फड़ चित्रण से प्रेरित होकर राजस्थान के आधुनिक कलाकार रामे" वर सिंह ने लोक देवी–देवताओं जैसे रामदेवजी, देवनारायणजी, गोगाजी, पाबूजी, माताजी की फड़ को चित्रण का आधार बनाया है इन्होने लोक देवी–देवताओं के इन फड़ चित्रों को अर्न्तमन में मथकर नवीन रूपों के साथ संयोजित किया। फड़ चित्रण के आकारीकरण की संवेदनाओं का सरलतम रूप विशयानुकूल आबद्ध है। वे आकृति मूलकता में लोक जन जीवन की धार्मिक भावना की उस लय को प्रस्तुत करते है जो वर्शो से सामाजिक परम्पराओं की वाहक बनी हुई है। इनके चित्रों में रूपायित आँखें राजस्थान के उन दर्शनीय लोक देवी–देवताओं को दर्शाती है जो यत्र–तत्र स्थापित लोक स्थानकों की देव आकृतियाँ में सुशोभित है।

5. कागज पर चित्र :– लोक जीवन की सुसंस्कारी वृत्तियों ने लोक कला को आधार प्रदान किया। राजस्थान के विभिन्न उत्सवों व त्योहारों के अवसर पर विभिन्न देवी–देवताओं की विधि विधान पूर्वक पूजा अर्चना करने की मान्यताऐं आज भी है। वैसे तो मानव दैनिक पूजा पाठ अपने–अपने घरों में भी करते हैं। कागज पर बने लोक देवी–देवताओं के चित्र (पाने) भुभ समृद्धि व आनन्द के द्योतक है। रामदेवजी, गोगाजी, तेजाजी, श्रवण कुमार, धर्मराज, देवनारायणजी, माताजी आदि के पाने प्रचलित है। इनमें गुलाबी, लाल, काले, सिंदूर रंगो का प्रयोग किया गया है। रामदेवजी के पाने में उनके पग्ल्ये, भाक्ति अवतारी रूपी घोडे पर सवार रामदेवजी, पास में डाली बाई और सुगना बाई आरती करती हुई दिखाई गई है। तेजाजी के पाठे में नाग द्वारा तेजाजी को डंसते हुये द" ार्या गया है। धर्मराज के पाठे में हरी घोडी पर लाल पो" ाक धारण किये धर्मराज को आकर्शक रूप में और इनके दोनों ओर काला–गौरा भैरूजी संयोजित है। इसी प्रकार हंस की सवारी में हंसमाता, भोर की सवारी पर नारासिंघी माता, उनके आगे गोरा तथा पीछे काला भैरु, ऊँट पर रेबारी देव एवं उनके साथ दो लाल, एक गुलाबी, दो हरे तथा एक आसमानी ऊँट दिखाये जाते है।[6] गाँव व कस्बों के लोगों में लोक देवी–देवताओं के पाने आज भी प्रचलित है।

6. मृण शिल्प :– राजस्थान के मोलेला गाँव का करीब 500 वर्ष पुराना इतिहास है। मोलेला में मृण शिल्प बनाने का पुश्तैनी धंधा वहाँ के कुम्हार परिवारों में आज भी बरकरार है। कुम्हार परिवारों के वंशजों के मुताबिक अमराजी और पद्माजी नामक कुम्हारों को यहाँ मूर्ति शिल्प प्रारम्भ करने का श्रेय दिया जाता है। आज लगभग 35 प्रजापति परिवार यहाँ मृण शिल्प का कार्य कर रहे हैं। खेमराज, नवलजी, मोहनलाल, चतुर्भुज, डालचन्द, गोपीलाल आदि शिल्पकारों ने मोलेला के मृणशिल्पों का निर्माण कर ख्याति अर्जित की। खेमराज जी को सन् 1981 में राष्ट्रपति पुरस्कार मिला था। इसी प्रकार स्वर्गीय श्री चतुर्भुज को राज्य स्तरीय पुरस्कार मिला और मोहनलाल जी को पद्मश्री सम्मान। आज हिम्मत, लक्ष्मीलाल, जमनालाल, भयामलाल, मुकेश आदि कलाकार लोक देवी–देवताओं के मृणशिल्पों के साथ–साथ अन्य शिल्पों का निर्माण कर जीवन यापन कर रहे हैं।

कला समाज का दर्पण है। लोक देवी–देवताओं ने सामाजिक समरसता की स्थापना कर अपने आचरण से मानव का सुसंस्कार किया। सभ्यता एवं सांस्कृतिक विचारधारा के तहत लोक देवी–देवताओं का वही स्थान है जो भारीर में आत्मवि" वास का। अनादिकाल में जब मानव जीवन में सांस्कृतिक उद्बोध हुआ तब से लोक देवी–देवताओं की धार्मिक आस्था और जनचेतना उनकी सहचरी रही। इस रुप में मोलेला के कलाकार मृणशिल्पों का निर्माण कर सांस्कृतिक विचारधारा, धार्मिक आस्था और जनचेतना का संचार कर रहे हैं। सदियों से आर्थिक–विभीशिकाओं से संघर्शरत ये लोग धार्मिक भावनाओं से अभिभूत हो लोक देवी–देवताओं के मृणशिल्पों के निर्माण के माध्यम से एक विशिष्ट जीवन्त संस्कृति में जी रहे हैं।[7] मृणशिल्पों के निर्माण में कलात्मक दक्षता और लोक जीवन की विभिन्न आस्थाओं, विश्वासों का संगम है।

मृण शिल्प निर्माण के लिए कुम्हार आस–पास के तालाब की मिट्टी लाकर उनमें लगभग एक चौथाई गधे की लिद का मिश्रण करते है। मिट्टी को लोचदार बनाकर मृण शिल्प का निर्माण करते है। मृण शिल्प के पूर्णतया सूखने के उपरान्त उनको भट्टी में पकाते हैं। तत्पश्चात आवश्यकतानुसार उन पर रंगांकन करके आकर्शक बना देते हैं। कलाकार विभिन्न लोक शिल्पों के रूप में रामदेवजी, गोगाजी, तेजाजी, देवनारायण जी, कल्लाजी, भैरूजी, नागदेवता, धर्मराज तथा देवियों के रूप में कालका, अम्बा, दुर्गा, रतनारायका, हंस माता आदि के मृण शिल्प के अतिरिक्त विभिन्न लोक शिल्पों का निर्माण करते रहे हैं। इन लोक कलाकारों के देवी–देवता भी अपनी स्वयं की वि" ोशताओं को लिए हैं और उनके बारे में कई कथाएँ एवं कहानियाँ भी

प्रचलित हैं, जैसे–तकाजी, कालाजी–गोराजी, रतना रेबारी, धर्मराज बगड़ावत, महिशासुर मर्दिनी (नाहर पाड़ा), अम्बामाता, गोर किया माता, भान माता, गुणामेन्दु, हंसी माता (सरस्वती), गजगोर, सुहारवा, सुअर माता, पंखालु घोड़ा, मच्छी माता, मत्छयाकार रामदेव, इत्यादि लोक देवी–देवताओं की मृण–प्रतिमाओं के अतिरिक्त ये कलाकार जनसाधारण की आव" यकता की पूर्ति हेतु विविध रुपों में खिलौने भी तैयार करते रहते हैं।[8]

देवी–देवताओं को पारलौकिक दर्शाने हेतु उनके चार हाथ बनाये गये हैं एवं उनके सिर पर अलंकृत मुकुट सु" ोभित है। उनके वाहन जैसे ,घोड़ा, भोर, हाथी, भैसा, ऊँट आदि पर सवार दर्शाये गये हैं। यहाँ की दर्शनीय मृण शिल्पों में गोगाजी, तेजाजी, रामदेवजी को घोड़े पर सवार महापुरूषों के रूप में रूपायित किया गया है। दलित व आदीवासी लोग लोक देवी–देवताओं की पूजा करने हेतु इन मूर्तियों को यहाँ से खरीद कर ले जाते हैं। मघ्य प्रदेश के इन्दौर व आसपास के क्षेत्रों से श्रद्धालुजन मोलेला तक पद यात्रा करके मूर्तियों को खरीदने के लिए आते हैं तथा वे लोग सिर्फ मोलेला की बनी मूर्तियाँ ही पूजते हैं। यहाँ की बनी कालका, अम्बा, रतनारायका इत्यादि देवी मूर्तियों को भील व मीणे तथा नाग देव व धर्मराज की मूर्तियों को गडरियें इत्यादि पूजते हैं।[9] इतना ही नहीं, लोक देवी–देवताओं में गहन आस्था रखने वाले व्यक्ति इनको अपनी–अपनी बस्तियों में प्रतिष्ठापित करने के लिये यहाँ से लेकर जाते हैं। इन लोक देव–प्रतिमाओं की पूर्ण सम्मान एवं आदर के साथ विशिष्ट समारोह के अन्तर्गत देवालयों, पूजागृहों व देवरों में प्रतिष्ठापना होती है।[10] लोक देवी–देवताओं के प्रति आस्था देश के दलित, आदिवासी लोगों में आज भी बरकरार है।

7. मूर्ति शिल्प :– लोक देवी–देवताओं के आध्यात्मिक रूपाकार अधिकतर धर्मपीठों, मन्दिरों में स्थापित किये गये हैं। जन समाज में इनका धर्म और आस्था के रूप में प्रचलन रहा है। रामदेवजी, तेजाजी, गोगाजी, देवनारायणजी, पाबूजी राठौड और विभिन्न देवीयों के छोटे–बड़े मंदिरों में मूर्तियाँ स्थापित है। यह कलात्मक प्रतिमाऐं लोगों के सामाजिक, धार्मिक एवं सास्कृतिक जीवन से जुड़ी विभिन्न परम्पराओं, आस्थाओं, अंधविश्वासों की सरल स्वभाविक विचारों को दर्शाती है।

प्राचीन काल से राजस्थान में वृक्ष पूजा का प्रचलन रहा। पीपल, खेजडा, तुलसी, ऑवला, आम, बरगद, आदि वृक्षों का पूजन करना आम जनता में धर्म व आस्था का प्रतीक रहा है। इसी प्रकार जलाशयों व नदियों को पूजने की परम्परा प्राचीन काल से जन साधारण में प्रचलन रहा है। राजस्थान में पहाड़ियों तथा नदियों के किनारे छोटे–बड़े मन्दिर बनवाये गये जिनमें स्थापत्य कला के साथ–साथ मूर्तियों को कलात्मकता के साथ तराशा गया हैं। देवी–देवताओं के बाहरी भागों में अक्सर यक्ष–यक्षिणियों की मूर्तियाँ उकेरी गई है। आदिम लोग वृक्ष, नदियों के साथ–साथ यक्ष–यक्षणियों की मूर्तियों को लोक देवी–देवताओं के रूप में पूजने लगे। यक्ष पूजा की भांति नाग पूजा भी बड़ी प्राचीन है, जो आर्येतर प्रभाव का परिणाम है। राजस्थान में गाँवों में नागों के फलकों का अर्चन पुराने जमाने से प्रचलित हैं। विशेष रूप से पशुओं की रक्षा की सम्भावना इनके पूजन से सम्बन्धित मानी गई है।[11] लोगों की सदियों पुरानी आस्था, परम्पराओं और विचारधाराओं में बदलाव आने लगा। आदिवासी और दलित लोगों ने ऐसे लोक देवी–देवतओं की आराधना प्रारम्भ की जिन्होंने महापुरूषों के रूप में नैतिक और लोकोपकारी जीवन यापन करते हुये त्याग तथा आत्म बलिदान से अपनी कर्म भूमि की सेवा को समर्पित हो गये। इतना ही नहीं, इन सांस्कारिक लोगों ने जनता का उत्थान एवं पशुओं की रक्षा हेतु प्राणोत्सर्ग किया। इनमें गोगाजी, तेजाजी, पाबूजी, रामदेवजी आदि मुख्य थे जिनके भौर्य आत्मोत्सर्ग तथा लोक हितकारी कार्यो से अभिभूत होकर राजस्थान की जनता ने इन्हें आराध्य जैसा पूज्य दान किया।[12] लोक देवी–देवताओं की मूर्तियाँ तराश कर मन्दिरों में स्थापित की जाने लगी। वैसे तो राजस्थान में लोक देवी–देवताओं की मूर्तियाँ कई स्थानों पर बनने लगी है। झालरापाटन व झालावाड़ में सिलावटों के कई घर हैं जो अपने घर पर ही विभिन्न कलात्मक छतरियों के अलग–अलग भागों का शिल्पांकन कर दूसरे स्थान पर उनको आसानी से रोपा जा सकता है अर्थात लगाया जा सकता है। ये सलावट पशु–पक्षियों के खिलौने, देवी–देवताओं में गणेशजी, माताजी, रामदेवजी, तेजाजी की मूर्तियाँ बनाकर मेलों में बेचते हैं।[13] मूर्तिकारों से लोग पूजा के लिये मूर्तियाँ बनवाते रहे हैं।

बीकानेर क्षेत्र में 14वीं सदी के राजपूत वीर गोगाजी चौहान थे इन्होंने एक योगी की भांति जीवन यापन किया। आक्रमणकारियों से गो रक्षा में अपने प्राण न्यौछावर कर दिये जिससे वे लोक देवता के रूप में पूजे जाने लगे। भाद्रपद कृश्णा नवमी को पूजा करना तथा गोगा मेडी आदि स्थानों पर उनके नाम के मेले भरना लोक देवत्व का प्रमाण है। गोगाजी की सर्प

आकृति की मूर्तियों का स्थल अक्सर खेजड़ी के वृक्ष के नीचे हेता है। गोगाजी को सांपों के देवता के रुप में पूजते हैं। लोक विश्वास है कि गोगाजी की पूजा करने वाले व्यक्ति को सर्प काटने पर विश नहीं चढ़ता है गोगाजी का जाहिर पीर (साक्षात् देवता) कहकर पूजने से सर्प दंश का विश प्रभावहीन हो जाता है।[14] गोगाजी की भांति पूर्व मध्यकालीन राजस्थान के तेजाजी, पाबूजी, मल्लिनाथ, देवजी आदि भी लोकदेव हुए हैं जिन्होने अपने आत्मोत्सर्ग द्वारा तथा सादा और सदाचारी जीवन बिताने के कारण अमरत्व प्राप्त किया।[15] पाबूजी राठौर मारवाड के ऐसे वीर थे जिन्होंने गायों की रक्षार्थ वीर गति पाई। 14वीं सदी के इस वीर का मन्दिर करौली के पास बना हुआ है। मेहाजी मांगलिया तथा उनके पुत्र हरभू उसी प्रकार सिद्ध योगी और महापुरूष माने जाते है जिस प्रकार तंवर वंशीय अजमाल जी के पुत्र रामदेव। ये सभी मारवाड़ (जैसलमेर, पोकरण आदि) क्षेत्र के पन्द्रहवीं सदी के वीर थे और अपने अलौकिक कृत्यों से 'पीर' की तरह पूजे जाने लगे।[16] अनुसूचित जातियों के लोगों में इनकी बहुत अधिक मान्यताऐं हैं। पोकरण के पास रूणेचा गॉव में इनकी समाधि स्थल पर हर वर्श भादवा में मेला लगता है। इसी प्रकार मारवाड में नागौर के गोरक्षक तेजाजी वीर हुये। यह जाटव समाज के लोक देवता है जिनके नाम से सांप काटने पर डोरा बांधा जाता है।

राजस्थान में अनेक स्थानों पर देवनारायण जी के मन्दिर है। गुर्जर समाज के लोग इनकी पूजा अर्चना करते है। कछवाहों की कुल देवी जमवाय माता, महाकाली मानी जाती है। हांलाकि जनसाधारण लोग भी इनकी पूजा अर्चना करते है। करौली की कैलादेवी और दे" ानोक (बीकानेर के निकट) की करणी माता ऐसी ही लोक देवीयाँ थी जो अब दुर्गा के रूप में पूजित हैं। करणी माता चारणों की लोक देवी थी, किन्तु अब अन्य वर्ग भी इन्हें दुर्गा के अवतार के रूप में पूजते हैं।[17] इनकी मान्यता श्रद्धालुओं में इतनी है कि राजस्थान से ही नहीं बल्कि देश के अनेक स्थानों से भी इनके दर्शन करने आते है। लोगों का विश्वास है कि कैलादेवी के आ" ावाद से पुत्र प्राप्ति और सौभाग्य शाली जीवन की कामना पूर्ण होती है। सकराय माता का मन्दिर सीकर जिले में स्थित है। अकाल पीड़ित जनमानस को बचाने और उनकी रक्षा के लिए इन्होंने फल–सब्जियों, कंदमूल उत्पन्न किये थे, इसलिए यह देवी भााकाम्भरी भी कहलायी। यहाँ रूद्राणी और ब्रह्माणी के रुप में देवी जी की दो मूर्तियाँ विराजमान है।[18] इसी प्रकार अरावली पर्वतमाला की उपत्यका में जीण माता का मन्दिर स्थापित है जो भोखावाटी की लोक देवी के रुप में प्रसिद्व है। कहा जाता है कि यहाँ जीण माता ने तपस्या करके देवत्व सिद्वि प्राप्त की तथा साधना और ब्रह्मचार्य के बल पर दुर्गा का सम्मान प्राप्त किया। दसवीं भाती में निर्मित जीण माता का मन्दिर स्थापत्य कला तथा मन्दिर के मुख्य मंड़प के स्तम्भों और छत पर उत्कीर्ण वाममार्गी मूर्तियों की कलात्मकता का प्रतीक है। इस मन्दिर में आठ भुजाओं वाली देवी की आदमकद प्रतिमा है।[19] यह मन्दिर वर्शों से तान्त्रिकों की आराधना स्थली रहा है। यहाँ वर्श के दोनों नवरात्रों चैत्र और आ" वनी के भाुक्ल पक्ष में मेले भरते हैं। मेले में देश के विभन्न समुदाय के लोगों की द" ानीय आस्था और भावनात्मक एकता देखी जाती है।

निष्कर्ष एवं भावी शोध संभावनाएं– राजस्थान में लोग लोक देवी–देवताओं की आराधना लोक जनजीवन में रची बसी है। कला का परिवेश भी मानव के जन्म के साथ ही इस दुनिया में प्रतिबिम्बित होने लगा है। ज्यों–ज्यों समाज में पारम्परिक विचारधाराऐं बनती गई त्यों–त्यों जनमानस में उनकी विचारधाराओं और मान्यताओं के अनुकूल लोक देवी–देवताओं की आराधना की जाने लगी। मैनें राजस्थान की कला में लोक देवी–देवता एक जन चेतना विशयगत इस भाोध पत्र के माध्यम से एक संक्षिप्त प्रकाश डालने का प्रयास किया है। राजस्थान के लोक देवी–देवताओं के रूप में सामजिक समरसता के प्रतीक बाबा रामदेवी पीर, पाबूजी राठौड, देवनारायणजी, कल्लाजी राठौड, रूपनाथजी, मांगलिया मेहाजी, बिग्गाजी महाराज, तेजाजी, हरबूजी सांखला, करणी माता, दुर्गा माँ, आमलकी एकादशी, मंशा देवी, कछवाहों की कुल देवी जमवाय माता, महाकाली आदि किसी न किसी चमत्कार के कारण अलौकिक व शक्तिशाली माने जाते हैं। कला में इन लोक देवी–देवताओं का विषयगत अध्ययन तो संभव है ही वहीं माध्यमगत तकनीकि और क्षैत्रीय लोक कला एक भावी भाोध संभावनाओं को उजागर करती है।

संदर्भ ग्रन्थ :–

1. संपादक :– नीरज, डॉ. जयसिंह, शर्मा, डॉ भगवतीलाल : राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर, पृष्ठ, 93
2. सम्पादकः– सुमहेन्द्र : आकृति 80, राजस्थान ललित कला अकादमी जयपुर, पृश्ठ, 57
3. सम्पादकः– उपाध्याय, विद्यासागर : आकृति, रजत जयंति अंक, राजस्थान ललित कला अकादमी जयपुर, पृश्ठ, 24

4. वही, पृष्ठ, 23
5. वही, पृष्ठ, 24
6. सम्पादकः– सुमहेन्द्र : आकृति 80, राजस्थान ललित कला अकादमी जयपुर, पृश्ठ, 57
7. सम्पादकः– उपाध्याय, विद्यासागर : आकृति, लोक कला विशेशांक, राजस्थान ललित कला अकादमी जयपुर, पृष्ठ, 20
8. सम्पादकः– उपाध्याय, विद्यासागर : आकृति, लोक कला विशेशांक, राजस्थान ललित कला अकादमी जयपुर, पृष्ठ, 23
9. सम्पादकः– सुमहेन्द्र : आकृति 80, राजस्थान ललित कला अकादमी जयपुर, पृष्ठ, 14
10. सम्पादकः– उपाध्याय, विद्यासागर : आकृति, लोक कला विशेशांक, राजस्थान ललित कला अकादमी जयपुर, पृष्ठ, 21
11. शर्मा, डॉ. गोपीनाथ : राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर, पृष्ठ, 108
12. ढाका, डॉ. सुमन : राजस्थान के लोक देवी–देवता एक जन चेतना, राज पब्लिशिंग हाउस ,जयपुर, पृष्ठ, 52
13. सम्पादकः– उपाध्याय, डॉ. विद्यासागर : आकृति, हाड़ौती कला विशेशांक, राजस्थान ललित कला अकादमी जयपुर, पृष्ठ, 41
14. ढाका, डॉ. सुमन, : राजस्थान के लोक देवी–देवता एक जन चेतना, राज पब्लिशिंग हाउस ,जयपुर, पृष्ठ, 55
15. शर्मा, डॉ गोपीनाथ : राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर, पृष्ठ, 109
16. संपादक :– नीरज, डॉ जयसिंह, शर्मा, डॉ भगवती लाल : राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर, पृष्ठ, 32
17. वही, पृष्ठ, 31
18. ढाका, डॉ. सुमन, : राजस्थान के लोक देवी–देवता एक जन चेतना, राज पब्लिशिंग हाउस ,जयपुर, पृष्ठ, 61
19. वही, पृष्ठ, 64

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

तनाव प्रबंधन मं भ्रामरी प्राणायाम का प्रभाव

साकेत मोहन मिश्रा
शोध छात्र योग विभाग महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्व विद्यालय, चित्रकूट, जिला सतना, म.प्र.

प्रस्तावना :– योग विद्या के सतत विकाश से चिकित्सा विज्ञान की अवधारणाये भी बदल रही है। आज चिकित्सा विज्ञान की विभिन्न पद्वतियॉ यह स्वीकार करती है कि शरीर व मन के तनाव को नियंत्रित या सामान्य करने की कोई औषधि उन के पास नही है। बल्कि योग ही एक ऐसी चिकित्सा प्रणाली है जिस के अंगो के माध्यम से तनाव का प्रबंधन किया जा सकता है इच्छा मानसिक व्याधियों की मूल है जिस की पूर्ति न होने के फल स्वरूप विभिन्न मानसिक व्याधियो का उदय होकर वह प्रभाव स्वरूप शरीर पर दृष्टि गोचर होती है। व्याधि के मूल कारणों में संस्कारो का अभाव अमानुषिक आहार कुचेस्टाऐ आदि के साथ ही प्रारब्ध भी माना जाता है तनाव रूपी व्याधि के उदय उपरांत शरीर असंतुलित होने के साथ ही शरीर स्थित विभिन्न अन्तःश्रावी ग्रंथियॉ रसो का असंतुलित स्त्राव करने लगती है। जिस कारण इन पर आधारित विभिन्न अंगो की कियाशीलता बाधित होकर शरीर मे रासायनिक व असंतुलनीयता कारण व्याधियों का उदय हो जाता है तनाव मानव शरीर की व मन की मूल व्याधि है जिस का प्रबंधन आहार तथा योग के यम नियम उपांगो के तथा भ्रामरी प्राणायाम मे प्रयुक्त आसनो के साथ ही मुख्य भूमिका में प्राणायाम के भेद भ्रामरी के माध्यम से प्रबंधन का रूप दिया गया है जो इस शोध का मुख्य विषय है इस शोध के समय जलवायु स्थान के साथ ही मानव के कार्य स्वभाव शारीरिक संरचना अवस्था के साथ दिनचर्या को ध्यान मे रखते हुये इस व्याधि के लक्षण व कारणों को समझकर शोध विषय मे मानसिक विकारो के संदर्भ मे तनाव तथा उस का परिचय व परिणाम के साथ ही योग में प्राणायाम का परिचय परिभाषा भेद के साथ आहार लाभ तथा हानियों का उल्लेख करते हुये भ्रामरी की उत्पत्ति अर्थ परिचय के साथ ही उस के विविध प्रयोगो के साथ तनाव में प्रबंधन तथा प्रभाव के साथ ही अंत मे उपसंहार का प्रतिपादन किया गया है मुझे आशा ही नही पूर्ण विश्वास है कि तनाव प्रबंधन में भ्रामरी प्राणायाम का प्रभाव सम्बधित विषय को ध्यान मे रखकर आगे भी शोधार्थियों की इच्छाओ को पूर्ण करने मे यह शोध सहयोगी होगा।

तनाव का परिचय :– वर्तमान समय में विश्व की अधिकांश आबादी मानसिक व शारीरिक रूप से तनाव ग्रस्त है जब व्यक्ति के समायोजन के सभी मार्ग बंद हो जाते है तब व्यक्ति तनाव युक्त हो जाता है। तनाव एक बहुआयामी प्रक्रिया है जो देहिक व मनोवैज्ञानिक कार्यो को विघटित करती है या विघटन का खतरा उत्पन्न करती है। अविद्या जनित इच्छाओं की पूर्ति न होने के फल स्वरूप तनाव का जन्म होता है। कियो कि इच्छा ही मानसिक व्याधियों की मूल है इस प्रकार के तनाव से विभिन्न प्रकार की व्याधियों की उत्पत्ति होती है जिन में चिंता, क्रोध, भय, भ्रम, मानसिक अवसाद विखडित मानसिकता, व्यामोह,चेतना शून्य अवस्था, बिषादात्मवाद प्रतिक्रियाये, उन्माद,स्वप्न मानसिक दुर्बलता,स्नायुदौर्बल्य आदि व्याधियॉ प्रभावी की आयु अनुरूप व परिवर्तित भी हो सकती है लेकिन मनोवैज्ञानिक लक्षणो के स्वभाव जानने से पूर्व मानसिक प्रक्रिया जानलेना भी आवश्यक है क्योकि मानसिक स्वास्थ्य का सामान्य होना मन की अवस्था पर भी निर्भर करता है जो कि मन की चेतन और अचेतन ज्ञान और अज्ञान तथा सत्य और असत्य के बीच स्थिरता ही है क्योकि व्यक्ति के नित्य के अनुभवो तथा दबाव के साथ–साथ इच्छाओं तथा उनसे संतोष जो व्यक्ति के संतोषप्रद सामजस्य कम से कम सीमा के अन्दर भी हो सकता है पर निर्भर करता है अन्यथा व्यक्ति के मानसिक उलझने उत्पन्न हो जाती है मन कार्यो का अधिष्ठाता है मन के अतिरिक्त कोई भी शक्ति नही है जो कर्मो संचालन करती हो और मनुष्य का जन्म ही कर्मशील प्राणी के रूप मे हुआ है मनुष्य कर्म की ही धुरी है शुभकर्म व अशुभ कर्म तथा शुभ अशुभ मिश्रित कर्म और निष्काम कर्म इन विभिन्न में से निष्काम कर्म को मनुष्य नही भोगता इस के अतिरिक्त शुभ अशुभ,शुभ अशुभ मिश्रित इन सभी कर्मो को जीव को भोगने की लिये जन्म लेना पड़ता है शुभ कर्म तनाव का कारण नही बनते पूर्व जन्म के संचित अशुभ कर्मो के फल के द्वारा या अविद्या जनित कर्मो का परिणाम भोग ही मानसिक तनाव को जन्म देता है तनाव एक बहुआयामी प्रक्रिया है। जो असेवको के मूल्यांकन के बाद उस के प्रति की गई एक प्रकार की अनुक्रिया है सामान्यतः हम तनाव को इस प्रकार जानते है या समझते है कि तनाव

जीवन के नकारात्मक घटनाओं या दुर्भाग्यपूर्ण अवस्था के परिणामों से होता है लेकिन सत्य यह है कि तनाव स्वीकारात्मक घटनाओं से भी व्यक्ति मे उत्पन्न होता है। जीवन की स्थिति परिवर्तन से भी तनाव की उत्पत्ति होती है तनाव को दो प्रकार से देख सकते है। एक स्वीकारात्मक तनाव तथा दूसरा नकारात्मक तनाव इन कारणो से तनाव को एक बहुआयामी प्रक्रिया कहा गया है। तनाव के कुछ कारणो में कुछ परिस्थितियॉ ऐसी होती है। जिनसे तनाव उत्पन्न होता है वे व्यक्ति के नियंत्रण के बाहर होती है। यदि किसी विशेष कारण से परिस्थिति व्यक्ति के नियंत्रण में हो जाती है तब तनाव कम हो जाता है तनाव मे मनौवैज्ञानिक व देहिक दोनो प्रकार की अनुक्रियाये होती है इसे हम इस प्रकार भी समझ सकते है कि तनाव में व्यक्ति मानसिक रूप से तथा शारीरिक दोनो ही रूप से क्षुब्धता अर्थात विचलित होने का अनुभव करता है। तनाव उत्पन्न करने वाली घटनाओं अर्थात परिस्थियों पर भी निर्भर करता है कि तनाव थोडे समय पश्चात समाप्त हो जायेगा या लम्बे समय तक चलेगा इसलिये हम कह सकते है। कि तनाव परिस्थिति या घटना का मूल्यांकन करने के पश्चात उस के प्रति की गई एक विशेष अनुक्रिया होती है जिसमें व्यक्ति अपने मानसिक व शारीरिक कार्यो को विघटित होते हुये पाता है 75 प्रतिशत व्याधियों का मूल तनाव है इससे कई जान लेवा रोगो का भी उदय होता है।

तनाव का भौतिक परिचय :– आज सम्पूर्ण विश्व में किसी न किसी कारण वश बालक युवा वृद्व शरीरिक व मानसिक तनाव से ग्रस्त है तथा इस तनाव के कारण विभिन्न प्रकार के शरीरिक व मानसिक रोगो की उत्पत्ति है किसी को किसी अन्य की प्रगति का तनाव है किसी को अपनी अवनति का तनाव है किसी का पढ़ाई का तनाव है किसी को इच्छानुसार आहार न मिलने का तनाव है अन्य को उस श्रेष्ठ सेवा सुर्षा के अभाव का तनाव है सम्पूर्ण जीवन किसी न किसी का तनाव में ही बीतता है इस तनाव के कारण दिनचर्या अस्तव्यस्त हो जाती है भूख नही लगती, नींद नही आती,अपच,अजीर्ण,कब्ज आदि की शिकायत होती है। इन विभिन्न समस्याओं से निजात हेतु इसके मूल कारणों पर जाना होगा तभी इस समस्या का समाधान मिलेगा। क्योंकि यह मानव जीवन बड़े भाग्य से मिलता है इस को प्राप्त करना देवताओं के लिये भी दुर्लभ माना गया है। तनाव के शरीर में या मन में व्याप्त होने से विभिन्न प्रकार की व्याधियों का भी उदय होता है। जिस में चिन्ता,उन्माद,अनिन्द्रा तथा तनाव से आज सबसे अधिक मधुमेह व्याधि का स्तर बढ़ता जा रहा है संयुक्त राष्ट्र संघ की सर्वे के आंकडो के अनुसार मधुमेह व्याधि से ग्रषित मरीजो मे विश्व में प्रत्येक पांचवा व्यक्ति भारत का है। इसलिये भारत मधुमेह की राजधानी है। यह कहना अनुचित नही होगा समय रहते उचित नियंत्रण के उपायो पर विचार नही किया गया तब भयावह स्थिति के भविष्य में आसार है क्योकि आज तनाव के कारण भारत के निवासियों मे मोटापा व्याधि सबसे अधिक है। जिस का मुख्य कारण मानसिक तनाव शरीरिक परिश्रम का अभाव तथा भारतीय परिवर्तन जीवन शैली जो कि विदेशों की नकल है जिस के प्रभाव से उच्चरक्तचाप,हृदय,मायग्रेन ये व्याधियॉ दूषित आहार विचार व क्रिया शैली के कारण है। ऐसे तनाव को व्याधियों की मूल कहा गया है जबकि सामान्य तनाव में शरीर की मांसपेशियॉ तथा स्नायुतंत्र अल्प समय के लिये प्रभावित होता है फिर भी अचानक असमय कोई अप्रिय सूचना मिलने पर भी शरीर के समस्त अवयव प्रभावित होकर अपना कार्य विपरीत स्थिति में करने को बाध्य हो जाते है जिस का मुख्य कारण शारीरिक व मानसिक तनाव ही है शरीर के तनाव को व मन के तनाव को सामान्य रखने मे किसी चिकित्सा पद्वति की पहुॅच नही है मात्र योग चिकित्सा पद्वति है जिसके द्वारा तनाव को नियत्रंण में रखा जा सकता है। तनाव के कारण विभिन्न मानसिक विकारो की उत्पत्ति होती है। जैसे शिजोफ्रेनियॉ इसे बिखडित मानसिकता के नाम से जाना जाता है इस की उत्पत्ति में तनाव की भूमिका मुख्य है अन्य कारणों मे किसी कार्य को करने मे असमर्थ रहना या चिरकारी संताप कुछ रोगी तो इस रोग मे स्तब्ध व मूर्तिरूप में भी देखे जाते है। तनाव से अल्जाइमर व्याधि का भी उदय होता है। इस व्याधि में मस्तिष्क की कार्यक्षमता का क्रमशः क्षय होता है भूलना इस का मुख्य लक्षण है तनाव से मानसिक दबाववश अवसाद की अवस्था का उदय भी होता है जीवन मे उदासीनता इस का मुख्य लक्षण है इससे शरीर व मन दोनो प्रभावित होते है तनाव के कारण नाडी डिस्माफिर्क डिस्आर्डर के कारण शरीर की व चेहरे की कभी बदसूरती के कारण युवक व युवतियॉ विचलित होकर दुखी हो जाते है और इस कमी के बारे में हमेशा सोचने के कारण तनाव ग्रस्त रहकर घोर निराशा मे जीने लगते है इस का मुख्य कारण मस्तिष्क के रसायनो का असतुंलन व व्यक्तित्व विकार है। तनाव के कारण सूक्ष्म शरीर पहिले प्रभावित होता है उस के बाद ही भौतिक शरीर प्रभावित होता है। हमारा मस्तिष्क शरीर की समस्त कार्य प्रणाली को नियंत्रित करता है शरीर में जो भी हलचल होती है उस के

संकेत मस्तिष्क में ही पैदा होते है हमे हमारी दुनियॉ से अपनी इन्द्रियों द्वारा जो भी संवेदनाये या संकेत प्राप्त होते है उन का आकलन मस्तिष्क में ही होता है हमारे मस्तिष्क का सेरेब्रल कार्टेक्स क्षेत्र मुख्यतः दो भागों में बटॉ होता है आगे वाले भाग को मोटा क्षेत्र कहते है यह शरीर मे होने वाली विभिन्न प्रकार की हरकतों को नियंत्रित करता है। शरीर के विभिन्न भागों की गतियों के लिये मस्तिष्क में अलग–अलग निश्चित क्षेत्र होते है। और इन क्षेत्रों में पैदा होने वाले संकेत ही तंत्रिका तंतुओ के द्वारा इन अंगो में पहुंचकर गतिपैदा करते है इसी प्रकार मस्तिष्क का पिछला सेरेब्रल कार्टेक्स क्षेत्र तंत्रिका तंतुओ के द्वारा शरीर के विभिन्न भागो से संकेत प्राप्त करता है तथा उन का आकलन एवं विवेचना करता है मस्तिष्क के इस भाग में भी शरीर के विभिन्न भागो के लिये अलग–अलग निश्चित क्षेत्र होते है। हमारे मस्तिष्क की महत्वपूर्ण बात यह है कि मस्तिष्क का दायां भाग शरीर के बाये भाग को नियंत्रित करता है अतः मस्तिष्क के वाये भाग में कोई विकार पैदा होने से शरीर का दाया हिस्सा क्षतिग्रस्त होगा सामान्यतः हमारे मस्तिष्क में लगातार विघुत संकेत पैदा होते रहते है अशांत अवस्था ही तनाव को जन्म देती है। मन की अति क्रियाशीलता के कारण शरीर की अवस्था रूग्ण होने लगती है योगिक प्रक्रिया भ्रामरी प्राणायाम को अपना कर मन को शांत अवस्था प्रदान कर शरीर को तनाव से बचाया जा सकता है । जीवन में भ्रामरी प्राणायाम का श्रेष्ठ महत्व है। अशांति व निराशा के इस युग मे मानसिक शांति तथा तनाव के सामजस्य के लिये योग से बढ़कर अन्य औषधि नही है।

हठ प्रदीपिका मे भ्रामरी का वर्णन :– भ्रमर की ध्वनि के समान घोष करते हुए तेजी से सांस लीजिये और भ्रमरी के समान ध्वनि करते हुये उसे मंद–मंद छोडिये साधक का चित आनन्द मे लीन हो जाता है।

प्रणाली :–

1 प्राणायाम के लिये स्थिति ग्रहण कीजिये
2 पूराश्वांस कीजिये।
3 श्वास छोडते समय भ्रमरी की भाति गुजन कीजिये पूरे शरीर में ध्वनि–तरंगो के अनुभव को बाधा पहुचाये बिना श्वास और ध्वनि को बिना किसी प्रयास के जितना अधिक संभव हो दीर्घ कीजिये।
4 श्वास रूकने पर केवल कुम्भक का और पूरे शरीर में अनुगुंजन करती ध्वनि तरंगो का अनुभव कीजिये मन की इस सुखद स्थिति का आनन्द कीजिये।
5 जब श्वांस अन्दर आना आरम्भ करे तथा श्वांस के साथ उच्चनाद युक्त भ्रमर की ध्वनि उत्पन्न करें इसे भ्रामर प्राणायाम भी कहा जाता है इस को करते समय पूरे शरीर मे उच्च घोष युक्त अनुनाद की अनुभूति होनी चाहिए।
6 श्वांस मंद होती हुई सहज ही रूक जाती है उच्च नाद मंद कोमल होता हुआ बाहर तो रूक जाता है लेकिन सम्पूर्ण शरीर के अनुसार ध्वनि तंरगित होती रहती है केवल कुंभक की स्थिति को यथा सम्भव दीर्घ करते हुये इस का आनन्द लीजिये।

अनुवाद भ्रामरी का आधार– भ्रामरी प्राणायाम के अभ्यास के सर्वाधिक महत्वपूर्ण पक्ष है श्वसन प्रश्वसन दोनो में अनुनाद ध्वनि–तंरगो को उत्पन्न करना अनुनाद की विलक्षणता को वैज्ञानिक रूप से उन्नीसवी शताब्दी के आरम्भ मे समझा गया था।

तंत्री युक्त वाद्ययंत्र का जब सुर मिलाया जाता है तब उससे उत्पन्न होने वाला अनुनाद इस का प्रत्यक्ष उदाहरण है और अनुनाद की उपयोगिता को प्रकट करता है। वीणा या वायलिन या सितार को प्रभावोत्पादक रूप से सुस्वर किया जाता है तब एक सिरे पर तार की झंकार सुन्दर अनुनाद को जन्म देती है और उस के कम्पनों को वाद्ययंत्र के हर हिस्से में अनुभूत किया जा सकता है।

भ्रमरी और भ्रमर ध्वनियॉ :– यह बात शास्त्र सम्मत है कि मनुष्य जाति मे नारी–स्वर पुरूष स्वर की अपेक्षा अधिक उच्च तार युक्त या आवृत्ति वाला होता है। इस के अतिरिक्त नारी–स्वर अप्रशिक्षण और अपरविकार की स्थिति मे भी पुरूष की तुलना में अधिक मधुर होता है।

भ्रामरी प्राणायाम मे दो स्थितियॉ होती है–

अ. प्रश्वसन के दोरान उत्पन्न ध्वनि भ्रमरी की तरह होती है उच्चारण और आवृत्ति मे मंद और नीची।
ब. श्वसन के समय उत्पन्न ध्वनि भ्रमर की तरह होती है तारत्व और आवृत्ति मे उच्च इन दोनो के बीच स्वाभाविक कुम्भक इस प्राणायाम का मन पर सुन्दर व शांत प्रभाव होता है जो मन को लय अथवा विलयन मे ले जाता है और तब समाधि तक पहुंचा जा सकता है।

भ्रामरी मे अवस्थाऐ – भ्रामरी का निरंतर अभ्यास न केवल सुन्दर त्रि–विभीप अभिज्ञा मे ले जाता है बल्कि चेतना की सूक्ष्म और उच्चतर स्थितियॉ भी प्रदान करता है भ्रामरी के अभ्यास से अनेक आन्तरिक अनुभव प्राप्त होते है।

भ्रामरी प्राणायाम

परिचय :– इस प्राणायाम को भ्रामरी प्राणायाम के नाम से इसलिए जाना जाता है क्योंकि इसे करते समय जो ध्वनि उत्पन्न होती है वह कुछ इस प्रकार होती है कि जैसे भ्रमरी गुंजन कर रही हो।

विधि :–

1. किसी भी सुखासन में बैठ जाते है। हाथ का प्रयोग किए बिना दोनों नासिकाओं से पूरक करते है। त्रिबन्धों के साथ यथा शक्ति कुम्भक करते है और बन्ध हटाकर रेचक करते है।
2. ग्रंथो के अनुसार पूरक करते समय भंवरे जैसी आवाज उत्पन्न होती है और रेचक करते समय भी भ्रंवरी जैसी आवाज आती है।

सावधानियां :–

1. जोर लगाकरदोनों नासिकाओं से पूरक करते है। उस समय भंवरे जैसी आवाज उत्पन्न होनी चाहिए और रेचक करते समय भंवरी जैसी आवाज आनी चाहिए।
2. इस प्राणायाम को हमेशा एकान्त में करना चाहिए किसी भी प्रकार की बाहरी आवाज नही आनी चाहिए।

लाभ :–

1. पूरक तथा रेचक करते समय जो ध्वनि निकलती है उस ध्वनि से मन बंध जाता है जिससे मन की चंचलता दूर होती है और मन एकाग्र हो जाता है
2. माईग्रेन में भ्रामरी प्राणायाम लाभदायक होता है।

उपसंहार :– इस शोध में तनाव के ऐसे रोगियों का चयन किया गया जो प्रतिवल से ग्रसित थे। लेकिन किसी घातक व्याधि से ग्रसित नहीं थे। तनाव के रोगी के शारीरिक व मानसिक आदि लक्षणों को ध्यान में रखते हुये पदमासन, सिद्वासन, भद्रासन, स्वास्तिकासन आदि में भ्रामरी प्राणायाम की चिकित्सा के माध्यम से उन रोगियों की दिनचर्या को शास्त्रोक्त पथ को शोध समय में अनुसरण कराके मन मस्तिष्क में परिवर्तन लाकर भ्रामरी प्राणायाम की विभिन्न विधियों को अपनाने हेतु प्रेरित किया इस कारण प्रतिबल से प्रभावित व्यक्तियों की जीवन शैली प्रभावित हुई क्योंकि तनाव व्याधि का सीधा संबंध मूलरूप से मन से है और मन को प्रभावित करने वाला तत्व आहार है आहार और विहार से विचारों का सृजन होता है जो जीवन शैली को प्रभावित करता है इसलिये शोध में इन समस्त पहलुओं को ध्यान में रखकर भ्रामरी प्राणायाम की प्रक्रिया से इस तनाव व्याधि का प्रबंधन किया गया। फिर भी मेरा मत है कि तनाव से ग्रसित व्यक्ति को वेदिक विधान को अपनाने की परम आवश्यकता है श्रेष्ठ आचरण के साथ सम्यक आहार विहार तथा विभिन्न ध्यानात्मक आसनो में भ्रामरी प्राणायाम को आत्म सात करने की आवश्यकता पर इस शोध में बल दिया गया है। तनाव का सीधा सम्बन्ध मन से है इसलिये अंत को जीवित (अंकुरित) अवस्था में लेकर ऊर्जा का अधिक संचय किया जाता है। भोजन में फाइवर युक्त आटा हरी सब्जियॉ हरी भाजी मठा सलाद फल कंद मूल जो पाचन में श्रेष्ठ होते है। मन को शांत कर मोन धारण कर भूख से आधा भोजन तथा भोजन के 40 मिनिट पश्चात् पर्याप्त जल ग्रहण किया जाये भोजन में अस्सी प्रतिशत क्षारीय पदार्थ व बीस प्रतिशत अम्लीय पदार्थ हो साथ ही आहार मोसम अनुसार हो क्योंकि ऋतुअनुसार आहारीय पदार्थ प्रकृति के द्वारा अनुमोदित होते है जो ग्रहण करने में श्रेष्ठ है। इस शोध का प्रांरभ प्रस्तावना से होकर तनाव का मनोवैज्ञानिक के संदर्भ में तनाव का परिचय कारण लक्षण परिणाम तथा योग के संदर्भ में तनाव परिचय कारण लक्षण परिणाम व प्राणायाम का परिचय अर्थ परिभाषा प्रकार नियम भोजन लाभ हानि तथा भ्रामरी प्राणायाम का परिचय अर्थ उत्पत्ति विभिन्न योग पद्धत्तियों में भ्रामरी प्राणायाम की तकनीक व तनाव प्रबंधन में भ्रामरी प्राणायाम के प्रभाव का उपयोग कर यह शोध कार्यपूर्ण हुआ ईश्वर परम मार्ग दर्शक रहा।

संदर्भित ग्रंथों की सूची :–

क्रमांक	लेखक का नाम	प्रकाशन का वर्ष	ग्रंथ का नाम	प्रकाशक का नाम
1	शर्मा डॉ. बाबूलाल	1999	शिवसंहिता	विजया हिन्दी पुणे महाराष्ट्र
2	रोग और योग	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती	योग पब्लिकेशन ट्रस्ट बिहार स्कूल ऑफ योग, मुंगेर बिहार	1998

3	'अष्टांग योग रहस्य घेरण्य संहिता'	पं. रामकृष्ण शर्मा	रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार	2011
4	'शरीर रचना एवं क्रिया विज्ञान',	डॉ. राजेश दीक्षित	भाषा भवन हालनगंज कच्ची सड़क, मथुरा,	2011
5	'आसन, प्राणायाम, मुद्रा, बंध',	स्वामी सत्यानन्द सरस्वती	योग पब्लिकेशन ट्रस्ट बिहार स्कूल ऑफ योग, मुंगेर बिहार,	2005
6	'स्वस्थवृत विज्ञान',	रामहर्ष सिंह	चौखंबा संस्कृत संस्थान, दिल्ली,	1985
7	'स्वाध्याय एवं योग चिकित्सा',	डॉ. दत्तात्रेय रामचन्द्र बझे	डॉ. दत्तात्रेय रामचन्द्र बझे, बी. – 4 राहुल नगर, कोषरूड पुणे, महाराष्ट्र,	2004
8	'यम–नियम',	श्रीराम शर्मा	श्रीराम शर्मा – 'यम–नियम', प्रकाशक – युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट गायत्री तपोभूमि मथुरा उ.प्र.	2009
9	'पातंजलि योग का तत्व दर्शन',	पं. श्रीराम शर्मा	युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट गायत्री तपोभूमि मथुरा उ.प्र.,	2008
10	'प्राणायाम',	स्वामी कुवल्यानंद	कैवल्य धाम पुणे,	1994
11	'ध्यान साधना',	नंदलाल दशोरा	रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार,	2004
12	'पातंजलि योग सूत्र',	श्री श्री रविशंकर जी	श्री श्री पब्लिकेशन ट्रस्ट,	2011
13	'कितना क्या कब और कैसे खायें',	डॉ. अरूणा फल्टा	म.प्र. हिन्दी अकादमी,	2000

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

उत्तम स्वास्थ्य की आवश्यकता एवं योग

डॉ. एल.जे. पचौरी
पूर्व विभागाध्यक्ष योंग एवं प्रकृति चिकित्सक, शा. होम्योपैथिक मेडिकल कॉलेज, भोपाल

मानव ज्ञानेन्द्रिय युक्त प्राणी है। इस हेतु वह स्वयं उत्तम स्वास्थ्य की अभिलाषा रखता है। मानव का जन्म शेष कर्मों का अनुपालन हेतु होता है। साथ ही जीवन के उदय काल से ही चारों पुरूषार्थों का पालन करना ही उस का धर्म है। मनुष्य के उत्तम स्वास्थ्य के लिए आहार जिसे भोजन तथा जल व वायु के रूप में मानते हैं। साथ ही उत्तम स्वास्थ्य के लिए निद्रा, ब्रम्हचर्य संयम भी उतने ही आवश्यक हैं। जितने कि आहार। आहार को स्वास्थ्य की महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में स्वीकार किया गया है। जबकि अस्वस्थ व्यक्ति न ही धर्म का पालन करने में समर्थ है और न ही अर्थ उपार्जन कर सकता है और काम का आनन्द योजना तो संभव ही नहीं है। तब रही बात मोक्ष की जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। जबकि जीवन की सार्थकता उत्तम स्वास्थ्य के अलावा कुछ नहीं है। हम देखते हैं कि उत्तम स्वास्थ्य में जितना सुख है। उतना सुख हजारों सांसारिक श्रेष्ठ पदार्थों में नहीं है। संसार में धन, वैभव, बुद्धि, विद्या, कीर्ति, मान और उपाधि की प्राप्ति में वह सुख नहीं मिलता। जो उत्तम स्वास्थ्य में है। शारीरिक उत्तम स्वास्थ्य वाला व्यक्ति यदि भिक्षा भी मांगता है। तो वह एक धन संपदा, वैभव, विलासिता से युक्त व्यक्ति से ज्यादा सुखी है। व्यक्ति यदि स्वस्थ नहीं है। तो सारे श्रेष्ठ साधन उस के किस काम के। स्वस्थ व्यक्ति सुख की नींद सोता है क्योंकि संतोष उस के पास है। जबकि अस्वस्थ व्यक्ति के लिए श्रेष्ठ व्यंजन भी आहार है। जिससे कि वह श्रम भी नहीं कर सकता, सांसारिक भोग भी नहीं कर सकता तथा उत्तम निंद्रा भी उससे दूर है। इसलिए संसार के समस्त भोगों को भोगने के पूर्व अपने उत्तम स्वास्थ्य को बनाये रखना अति आवश्यक है। जीवन का सार ही उत्तम स्वास्थ्य है। हमारे प्राचीन भारतीय ने दानिक ग्रंथों में मानव सभ्यता के उदय काल से ही जीवन की व्यवस्था को बनाये रखने के लिए उत्तम आरोग्यता का महत्व दिया गया है। हमारे पूर्वज ऋषि उत्तम स्वास्थ्य को ही मानव का धर्म स्वीकार करते थे। इसलिए मानस जैसे ग्रंथों में कहा कि ''सब नर करहि परष्पर प्रीति, चलहि स्वधर्म निरत श्रुति रीति'' परिणाम स्वरूप ''अल्प मृत्यु नहि कवनेउ पीरा सब सुन्दर सब विरूज शरीरा, नहि दरिद्र कोउ दुखी न दीना, नहि कोउ अपुध न लक्षण हीना। हमारे देश का जो आदि सनातन साहित्य है। उसमें स्वास्थ्य साधन के नियम भी धार्मिक आचरण का अंग होकर स्पष्ट रूप से अंकित है। साथ ही भारतीय जीवन विज्ञान का उद्देश्य ही जन सामान्य के स्वास्थ्य रक्षा करना तथा व्याधि से प्रभावित जन की व्याधि का परिमोक्षण करना है लेकिन वर्तमान समय में प्रतिस्पर्धा की अंधी दौड़ में कामना की गठरी लेकर मोह के बाजार में व्यक्ति दुकान लगाकर बैठा है और वह सुख तक शांति रूपी ग्राहक के आने का इंतजार करता रहता है। लेकिन ग्राहक की अनुपस्थिति पर वह क्रोधित होकर अज्ञानता में सब कुछ भूलकर अधर्म रूपी ग्राहक को दुकान पर बिठाकर स्वयं व्यसन का आहार ग्रहण करने लगता है। व्यसन रूपी आहार के परिणाम से उत्पन्न ऊर्जा उसे जीवन पर्यन्त के लिए अस्वस्थ कर देती है और वह संसार में सब कुछ होते हुए भी हाथ मलता रह जाता है। यह स्थिति अति विचित्र व सोचनीय है। प्रत्येक मनुष्य को सुख प्राप्ति की कामना तो है लेकिन स्वास्थ्य के यथार्थ आधार से वह अपरिचित है या यों कहें कि स्वास्थ्य के प्रति सुरूचि एवं संचेष्ठता का प्रायः अभाव ही उसे दिखाई देता है। लोग स्वास्थ्य युक्त शरीर के प्रति अपना इतना ही कर्त्तव्य मानते हैं कि जब अस्वस्थ हों तभी चिकित्सक के पास जाकर उस व्याधि को दबा दे और इति श्री कर फिर भोज मस्ती कदाचरण का मार्ग अपनायें बस शरीर को काम चलाने लायक बनाये रखें। इस वृति के कारण लोगों की जीवनी शक्ति निर्बल होती जा रही है। आज लोग अस्वस्थता के पूर्ण शिकंजे में है। प्रातः उठते ही मन में अस्वस्थ हैं हमें ऐसे विचारों का सृजन होने लगता है। आज हमारी सरकारें चिकित्सा साधनों पर प्रतिवर्ष अरबों रूपये का बजट पास कर इति श्री कर लेती हैं। लेकिन फिर भी नित्य प्रति नवीन व्याधियों की चपेट में समाज आता जा रहा है। वैज्ञानिक नित्य प्रति नवीन विषाणु की खोज कर उसके द्वारा उत्पन्न व्याधि का प्रचार प्रसार कर हमारे भारतीय समाज में भय का वातावरण निर्मित करते जा रहे हैं। आज हमारे देश में अधिकतर लोक भय और भूख से असमय काल कलवित हो रहे हैं। चिकित्सक समाज सेवी न होकर व्यवसायी होकर रोगियों में भय व्याप्त कर उन्हें लूट रहे हैं। सरकार मौन है साथ ही प्रतिवर्ष अनेकों चिकित्सा

महाविद्यालय व चिकित्सालय खोले जा रहे हैं। दिन प्रति दिन दवाओं की खपत में वृद्धि हो रही है। नित्य नई–नई दवाऐं बाजार में आ रही हैं लेकिन इस तरह चिकित्सा का बजट बढ़ाने तथा साधन जुटाने से व्याधियों का अन्त व आरोग्यता की स्थापना कभी नहीं हो सकती। क्योंकि स्वास्थ्य सुविधाओं की वृद्धि के साथ ही समाज का प्रत्येक व्यक्ति स्वाभाविक स्वास्थ्य साधन के प्रति उदासीन बनता जाएगा। जबकि व्याधि निवारण हेतु चिकित्सा व औषधि नितांत आवश्यक है लेकिन स्वस्थों की स्वास्थ्य दिनचर्या पर तथा समाज में फैली कुरीतियों संयम और नियम पर तथा योग के यम व नियम पर जब तक सरकार के साथ समाज जागरूक नहीं होगा तब स्वास्थ्य की कामना अधूरी रहेगी जब तक आहार विहार विचारों में निर्मलता नहीं आयेगी। सदाचारी दिनचर्या ऋतुचर्या रात्रिचर्या का ज्ञान आचार विचार व्यवहारों में सुचिता नहीं आयेगी तब तक व्यक्ति शारीरिक व मानसिक व्याधियों से ग्रसित रहेगा। इस के लिए सरकार को योग केन्द्रों की स्थापना करनी होगी। शारीरिक व मानसिक व्याधि से निवृति का एक मात्र साधन योग है। जो सीधे मनुष्यों की वृतियों में व्याप्त अविद्याजनित संस्थानों का नाश करता है। साथ ही जीवन में सदाचार की शिक्षा श्रेष्ठ आहार की शिक्षा उचित व्यवहार की शिक्षा देकर समाज के प्रत्येक व्यक्ति को अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रम्हचर्य, अपरिग्रह की शिक्षा प्रदान कर शारीरिक व मानसिक सुचिता जीवन में संतोष, परिश्रम हेतु जागरूक कर स्वाध्याय के साथ कर्मों को परमात्मा को समर्पित करने के विधान की शिक्षा देता है। जब तक मनुष्य स्वस्थता का महत्व नहीं समझेगा तब तक दवाओं से स्वस्थता नहीं मिल सकती। औषधि पर आश्रित रहने की अपेक्षा स्वाभाविक रूप से पूर्ण स्वस्थ रहने के प्रति स्वरूचि सम्पन्न जागरूक और सचेष्ठ होना होगा।

उत्तम स्वास्थ्य की प्राप्ति के लिए उत्तम स्वास्थ्य रक्षा के नियमों तथा सिद्धांतों का ज्ञान प्रत्येक मनुष्य के लिए जरूरी है लेकिन ज्ञान होने से भी आवश्यक है कि उस ज्ञान का जीवन में आचरण व व्यवहार में सदुपयोग स्वास्थ्य का महत्व हृदयगत करके उसके अनुकूल आचरण करने से ही उत्तम स्वास्थ्य के स्थान की प्राप्ति होगी। आचरण प्रवृत्ति भावना का उदय धारणा से होता है इसलिए प्रत्येक मनुष्य को बाल्यावस्था से ही यह दृढ़ भावना निर्मित करनी चाहिए कि जीवन में पूर्ण स्वस्थ रहना सबसे बड़ी सफलता है। यही समस्त सफलताओं का आधार है। स्वस्थ ही श्रेष्ठ धर्म है। अस्वस्थ ही अधर्म है और पाप है यही व्याधि आरोग्य को नष्ट करती है।

जनमानस की धारणा रहती है कि भारी भरकम शरीर को धारण किये व्यक्ति ही स्वस्थ हैं या रोगाणु रहित शरीर ही श्रेष्ठ स्वास्थ्य है लेकिन यह सोच उत्तम स्वास्थ्य के प्रति असत्य है। आयु के प्राचीन ग्रंथों के अनुसार जिस शरीर में वात अर्थात स्नायुमंडल तथा पित्त अर्थात जठराविन तथा रक्त कण आदान प्रदान एवं कफ अर्थात ''जीव शक्ति'' ओज व मनोत्सर्ग यह तीनों की अवस्था की स्थिति सम हो अर्थात निश्चित अवस्था में हो, मतलब समान हो तथा शरीर के तीनों संस्थान उचित रूप से काम करते हों जिससे आहार के रूप में ग्रहण किये हुए पदार्थों का पाचन उचित अवस्था में हो रहा है। जिससे सप्त धातुओं का उचित अवस्था में निर्माण हो रहा हो और जिस शरीर में मलों का विसर्जन समय पर विधिवत हो रहा हो। अर्थात मल विसर्जन प्रणाली का कार्य उचित विधि से हो रहा हो अर्थात मल, मूत्र, श्वेद, श्लेष्मा यथा समय विसर्जित हो रहे हों तथा जिस से आत्मभाव में व मन में तथा इन्द्रियों में प्रसन्नता हो एवं सदैव संतोष की स्थिरता हो, वही स्थिति श्रेष्ठ स्वास्थ्य की परिचायक है। प्राचीन ग्रंथों में प्रकृति तत्वों के साथ ही मन की भी गणना होती है क्योंकि यह प्रधान व सूक्ष्म इन्द्रिय है इसलिए स्वस्थता में अन्तःकरण का स्वरूप होना भी आवश्यक है। दृश्य में उत्तम गात को धारण करने वाला व्यक्ति स्वस्थ दिखेगा। परन्तु उसका अन्तःकरण अशांत है। तब वह स्वस्थ कैसे कहलायेगा। स्वस्थ वही होगा जिस शरीर में स्वस्थ मन (चित्त) स्थित है। मन का शांत होना निर्विकार व निर्मल होना स्वास्थ्य की मुख्य उपलब्धि है क्योंकि पूर्ण स्वास्थ्यधारी मनुष्य की परिभाषा में मानसिक प्रसन्नता का स्थान प्रथम है क्योंकि जीवन विज्ञान में आदि समय से ही मानसिक दोषों के लिए चित्त की वृतियों को दोषी माना है।

वायुः पितं कफश्चेति शरीरो दोष संग्रहः।

मानसः पुनरूदिष्टो रजश्च तम एवच।।

अर्थात जिस प्रकार वात, पित्त, कफ को शरीर दोषों में गिना जाता है। उसी प्रकार रज और तम चित्त की वृत्ति मानसिक दोषों के लिए उत्तरदायी है। इन रज और तम की असमानता ही काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मात्सर्य को जन्म देती है। इन के लक्षण स्वरूप भय, विषाद, चिंता, उन्माद, स्नायु दौर्बल्य आदि शरीर पर परिलक्षित होते हैं। भौतिक जगत में कामना, वासना,

तृष्णा, संग्रह (परिग्रह) की प्रवृति से भी मानसिक असंतुलन को जन्म मिलता है। वर्तमान में मानसिक असंतुलन में नित्य प्रति वृद्धि हो रही है। यही वजह है कि पूर्ण हमारे पूर्वज ऋषि एक ही स्थान पर हमेशा निवास न करके स्थान बदलते रहते थे। इसलिए संग्रह की प्रवृति स्थाई घर नहीं कर पाती थी और वह मनोविकारों से रहित स्थिति में जीवन परम उत्तम स्वास्थ्य के साथ बिताते थे क्योंकि उनकी आवश्यकताऐं सीमित थी इसलिए संतुष्ट शांत मन रहा करते थे। समय परिवर्तन के साथ वह यायावर स्थिति को त्याग कर मनुष्य समूह रूप में निवास करने लगा और इच्छाओं में वृद्धि हुई और जो ग्राम व नगर निर्मित हुए उनमें ग्राम्य दोष निर्मित हो गये। मनुष्य परिश्रम से पलायन कर आलसी प्रवृति में आ गया और ग्रह प्रवृति आकर मानसिक दोष उत्पन्न होने लगे। उस नियमित श्रम के अभाव में शारीरिक सौष्ठव का अभाव होकर संग्रह प्रवृति का लोभ उत्पन्न हो गया। जिससे मन अस्वस्थ हुआ। इस का विषय वर्णन चरक संहिता वैदिक ग्रंथ में विस्तार से अंकित है। योग विज्ञान के दिशा निर्देशानुसार अपरिग्रह प्रवृति के पालन से इस दोष को दूर किया जा सकता है या जीवन में आवश्यकताओं की सीमितता से मनुष्य मनोविकारों से दूर रह सकता है लेकिन हमारे देशवासियों ने पश्चिम की रीति नीति को अपने जीवन में उतारा है। तभी से मनोविकारों में वृद्धि हुई है यद्यपि हम भौतिकता से अछूते नहीं रह सकते। परन्तु हमें अंधे अनुकरण से बचना होगा। पाश्चात्य सभ्यता की उन्हीं बातों को हमें मानना चाहिए जो हमारे देश की स्थिति, जलवायु तथा परम्परा एवं सामाजिक जीवन से तारतम्य रखती हो ऐसा करने से हमारा समाज मनोविकारों से बच सकता है।

आत्मतत्व को दृष्टिगत रखना :– मनोविकारों से प्रभावित होने का मुख्य कारण वासना में सुखानुभूति की प्रतीति यह मृगतृष्णा सदृश है। यह आत्म तत्व के विपरीत आचरण है। जब मन, वचन व कर्म की एक विखण्डित हो जाती है तब मानव अंदर से अशांत व दुखी रहने लगता है। आत्म तत्व के विपरीत आचरण करने से मनुष्य की सहनशीलता समाप्त हो जाती है। तब इस बेचैनी, घबराहट, व्याकुलता का उदय होता है। जिस कारण वह कहना कुछ चाहता है, मुख से निकलता कुछ और है। जब मानव आत्म तत्व की आवाज सुन नहीं पाता तब उसका अचेतन अधिक समय तक उस अन्याय को सहन न कर पाने के कारण मनुष्य का चैन उस से पृथक हो जाता है। क्योंकि आत्म तत्व प्रबल शक्तिशाली है। इसके प्रबल विरोध के परिणाम में मानव के अन्तःकरण में द्वंद्व की उत्पति हो जाती है और वह दुखी हो जाता है और यह दुख, अशांति, असंतोष ही अस्वस्थता का मूल कारण है। तृष्णावान मनुष्य के आत्मतत्व के विपरीत कार्य करना होता है। इसी कारण वह आन्तरिक रूप से दुखी रहते हैं। उन के आत्म तत्व की प्रसन्नता प्रायः लुप्त हो जाती है। जिस कारण स्फूर्ति का अभाव होने से वह थकान ग्लानि पराजितता के भाव से भर जाता है और ऐसे लोग प्रसन्नता प्राप्ति के लिए कृत्रिम साधनों का सहारा लेकर सुख प्राप्ति की चेष्टा करते हैं और यही अपनाई गई चेष्टा व्यसन का रूप ले लेती है। तब वह अपने दुखी मन को बहलाने के लिए चित्रपट, उपन्यास, मद्यपान, नाटक या व्यभिचार करना तथा चाय, तंबाकू, गांजा, भांग या अन्य मादक दृश्य पीना यह सब अस्वाभाविक प्रसन्नता प्राप्ति के कृत्रिम उपक्रम हैं और ऐसे साधन मन को पूर्ण संतुष्ट या शांत करने में सफल नहीं होते और इन साधनों से मन धीरे–धीरे और अशांत होने लगता है और आत्म तत्व की शिक्षा से वह और दुखी रहने लगता हैं। यही अज्ञानता का आचरण है। जिससे दुख सृजित होते हैं और मनोविकारों में वृद्धि होती है। कुछ विचारक अतृप्त वासना को मानसिक विकारों का कारण भी मानते हैं और कहते हैं कि वासना तृप्ति से मानसिक विकार दूर होते हैं। कुछ विद्वानों ने स्त्री के प्रति पुरूष का आकर्षण या पुरूष के प्रति स्त्री का आकर्षण यह प्रकृति की देन है। यह सृष्टि सृजन का मूल है अर्थात प्रेम का कारण काम वासना मात्र है और कहते हैं कि इस पश्चात ही संबंधों तथा मर्यादाओं ने जन्म लिया है। लेकिन यह धारणा सामाजिक सांस्कृतिक विचारधारा के एकदम उल्टी है। जबकि रसखान ने कहा है कि दम्पति, सुख और विषय रस पूजा निष्ठा ध्यान इससे परे बखानिये सुद प्रेम रसखान। प्रेम में स्वार्थ नहीं होता और लेने व देने की भावना है वह वास्तविक प्रेम नहीं है। भाई बहन पिता पुत्री माता पुत्र इनके पवित्र प्रेम हैं। एक दूसरे के प्रति प्राण न्यौछावर करते हैं फिर यह सच कैसे हो सकता है कि विरोधी योनि वालों के आपस में प्रेम का मूल कारण कामवासना मात्र है।

भारतीय सिद्धांतों तथा हमारी मान्यताओं में वात्सल्य, स्नेह, पवित्र, मनोभाव का स्थान है। हमारे समाज में कामवासना को एक मर्यादिन स्वरूप प्रदान किया गया है। पाश्चात्य विद्वानों का मत हमारे भारतीय मनीषी स्वीकार नहीं करते। जननेन्द्रियों का सुख चिर स्थाई नहीं है। इसके अनुगमन से कभी भी संतुष्टि प्राप्त नहीं होती। इसे हमारे समाज में संतान उत्पत्ति हेतु

मर्यादित आनंद की संज्ञा दी है। जब कि इसकी अति से स्नायुदौर्बल्य के साथ अन्य मनोविकारों का जन्म होता है। जो मनुष्य की मृत्यु के कारण बनते हैं। इच्छा का दमन अभिप्रेत नहीं है। लेकिन ऐसी मनःस्थिति का निर्माण अभिप्रेत है। जिससे काम वासना अति प्रबल न हो। जबकि हमारे वैदिक निदान ग्रंथ मानसिक व्याधियों का मूल कारण रज व तम दोषों को मानते हैं। इनके असंतुलन से ही अनेकों मानसिक व्याधियां जन्म लेती हैं। इनका जन्म मनुष्य का प्रज्ञापराघ है।

ईर्ष्याशोषत भय क्रोध मान द्वेषादश्च पे।
मनोविकारस्तेऽप्युक्ताः सर्वे प्रज्ञापराधजाः।।

जो भी मन के अपराध हैं उन सभी का मूल प्रज्ञापराध है अतः मानसिक रोगों से बचने के लिए प्रज्ञापराधों से बचना चाहिए। मानसिक निरोगणता की प्राप्ति का सर्वोपरि साधन यही है कि इच्छाओं से अधिक आशक्ति न रखकर जीवन की आवश्यकताओं को सीमित करें व साधन बाहुल्यता एवं संग्रह की प्रकृति से पृथक रहें। तब निश्चित ही संतोष व संयम मानसिक प्रसन्नता के प्रति उत्तरदायी होंगे। हमारे शास्त्रों में कहा भी गया है कि –

सतु भवति दरिद्रो यस्य तृष्णा विशाला।
मनसि च सन्तुष्टे कोऽर्थवान को दरिद्रः।।

अर्थात मन के संतोष से धनवान व दरिद्र का भेद नहीं रहता बल्कि तृष्णावान धनवान दरिद्र से बुरा है और तृष्णाविरत निर्धन धनवान से अधिक सुखी है व स्वस्थ है। मन संतोषी होने पर उस से विकार उत्पन्न होने का कारण ही नहीं।

ध्यायवो विषयान पुंसः संगस्तेषूपजायते।
संगात्संजायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते।।
क्रोधाद्र भवति सम्मोहः सम्मोहात स्मृतिविनम्रः।
स्मृतिग्रंशाद बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणतिश्य।।

विषयों पर निरन्तर ध्यान रखने व मनन करने से वह मन में रम जाते हैं। विषयों एवं मन के आपसी समन्व्य से कामवासना की उत्पत्ति होती है। जिसमें तनिक भी व्यवधान उत्पन्न होने पर क्रोध की उत्पत्ति होकर कर्तव्याकर्तव्य की अज्ञानता उत्पन्न होती है। जिस कारण स्मृति का नाश हो जाता है और यह समझ में नहीं आता कि किस आचरण से यह हानि हुई या फिर किस खाद्य पदार्थ के भक्षण से यह हानि हुई उसे समझ में नहीं आता साथ ही अज्ञानतावश बारम्बार वह भूल करता है। यही स्मृति नाश है इससे बुद्धिनाश होती और फिर सर्वनाश ही निश्चित है।

आहारशुद्धौ सत्वशुद्धिः सत्वशुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः।
स्मृतिलाभे सर्वग्रन्थीनां निप्रमोक्षः।। ''योगासूत्र''

खानपान की शुद्धि अर्थात मिताहारी सात्विक आहार ग्रहण करने से मन की शुद्धि होती है। सत्व शुद्धि से स्मृति अर्थात बुद्धि संतुलित होती है और स्मृति शुद्धि से आत्मज्ञान बढ़ता है। जिससे मानसिक ग्रंथियों का पराभव होता है।

आहार संयम के अलावा मानसिक आरोग्यता के लिए मनोनिग्रह और यह मनोनिग्रह विषयाशक्ति से छुटकारा मिलता है। मनोनिग्रह के लिए आचरणों में श्रेष्ठ प्रार्थना, संध्यावंदन, अग्निदोष, ध्यान, जप, दान आदि आदर्श प्रवृतियां है। उनका सम्बन्ध शरीर से शरीर का अभिन्न सम्बन्ध मन से है और मन का अभिन्न सम्बन्ध प्राण से है तथा प्राण का सम्बन्ध बुद्धि से है तथा बुद्धि का सम्बन्ध आनन्द से है जप की प्राप्ति पर सम्पूर्ण दोष अर्थात व्याधियों का नाश हो जाता है और पूर्ण उत्तम स्वास्थ्य के साथ परम तत्व से साक्षात हो जाता है। मानसिक स्वास्थ्य ही हमारे जीवन का आधार है क्योंकि स्वस्थ मन के बिना स्वस्थ तन सम्भव नहीं क्योंकि शरीर का संचालन मन ही है यही मस्तिष्क है शरीर तो इस का आचरण है। मन का प्रतिबिम्ब शरीर पर पड़ता है अर्थात मन तो बीज है। बीज के अनुसार ही वृक्ष व फल प्राप्त होते हैं। शरीर स्वस्थता के लिए मन स्वस्थ होना आवश्यक है। संयम व श्रेष्ठ आचरण का नित्य अभ्यास जो आध्यात्म भावना से ओत–प्रोत है। सम्पूर्ण समय आत्म अवलोकन में बीते अर्थात स्वाध्याय में जो सत्य साहित्य के पढ़ने से प्राप्त होगी। जीवन में अहिंशा, सत्य, अस्तेय, ब्रम्हचर्य, अपरिग्रह का भाव धारण कर आचरण में लेना। शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर प्रणधन का अनुकरण नित्य दिनचर्या में सम्मिलित करना ही स्वास्थ्य प्राप्ति का एक मात्र साधन है। आहार, निद्रा, ब्रम्हचर्य इन त्रय स्तम्भ के आचरण मात्र से भी स्वस्थता की प्राप्ति सम्भव है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

क्र.	पुस्तक का नाम	लेखक	पब्लिकेशन	सन्
1.	मानसिक रोग कारण व उपचार	डॉ0 शास्त्री	कैवल्य धाम पुणे	
2.	सच्चा सुख और निरोगीकाया	सुदर्शन भाटिया	कैवल्य धाम पुणे	
3.	हद्य रोग कारण व उपचार	डॉ0 देव शक्ति	कैवल्य धाम पुणे	
4.	आरोग्य जीवन	आचार्य चन्द्रशेखर	कैवल्य धाम पुणे	
5.	मानसिक रोग कारण व उपचार	डॉ0 शास्त्री	कैवल्य धाम पुणे	
6.	समस्या पेटी की समाधान योग का	स्वामी सत्यानंद सरस्वती	योग पब्लिकेशन ट्रस्ट बिहार स्कूल एवं योग मुगेर	
7.	रोग और योग	स्वामी सत्यानंद सरस्वती	योग पब्लिकेशन ट्रस्ट बिहार स्कूल एवं योग मुगेर	1998
8	दमा मधुमेह व योग	स्वामी सत्यानंद सरस्वती	योग पब्लिकेशन ट्रस्ट बिहार स्कूल एवं योग मुगेर	
9.	ध्यान योग	दयांनद वर्मा	स्वामी अरविंद साहित्य	
10..	आसन प्राणायाम	स्वामी आत्म बिन्दु	स्वामी अरविंद साहित्य	
11.	निरोगी जीवन	महामाया	स्वामी अरविंद साहित्य	
12.	आहार ही औषधी है	सुरभि शर्मा	स्वामी अरविंद साहित्य	
13.	आसन प्राणायाम मुद्रा बंध	स्वामी सत्यानंद सरस्वती	योग पब्लिकेशन ट्रस्ट बिहार स्कूल एवं योग मुगेर	2005
14.	आसन कब क्यों और कैसे	ओ.पी. तिवारी	कैवल्य धाम पुणे	2005
15.	घेरण्ड संहता	स्वामी निरंजनानंद	योग पब्लिकेशन ट्रस्ट बिहार स्कूल एवं योग मुगेर	2004
16.	सूर्य नमस्कार	स्वामी सत्यानंद सरस्वती	योग पब्लिकेशन ट्रस्ट बिहार स्कूल एवं योग मुगेर	
17.	स्वस्थवृत विज्ञान	रामहर्ष सिंह	चौखंबा संस्कृत प्रतिष्ठान	1985
18.	योग दर्शन	स्वामी निरंजनानंदा सरस्वती	बि.स्कूल आफ योगा	2004

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

A STUDY OF CUSTOMER SATISFACTION OF INDIAN COFFEE HOUSE WITH SPECIAL REFRENCE TO JABALPUR SOCIETY

Aveet Kaur Chhabra
Research Scholar, RDVV University, Jabalpur

Abstract : Consumer is one who purchases or buys a product or service for final consumption. Consumer is the sole reason behind the success and growth of any business. Customer satisfaction concept is growing popularity and is becoming the hottest academic and practical topic in the business field. In fact due to the increased competitive environment customer satisfaction is crucial and has become an Indian Coffee House for firm performance. In this paper, attempt has been made to evaluate customer satisfaction level, factors that influence and motivate customer and the ways to improve them.

Key words : Customer, Satisfaction, Indian Coffee House, Factors influencing and Motivation.

Introduction : Customer satisfaction is a marketing term that measures how products or service supplied by a company meet or surpass a customer expectation. Customer satisfaction is important because it provides marketers and business owners with a metric that they can use to manage and improve their business. Customer satisfaction is the degree of satisfaction provided by the goods or service of a company as measured by the number of repeat customers.

Indian Coffee workers cooperative society, Jabalpur has a long history of past 60 years in which Indian Coffee House the society has faced and gone through many phases of downfall, success and growth. The society is affiliated to All India coffee workers co-operative society, the federation. There are 7 societies which are the members of the federation and work under the umbrella. The head office of federation is situated in Delhi. Jabalpur society got registered on 11th April 1958.

History of coffee house : Indian coffee houses were run by the British government from the year 1940 to 1957. By the end of 1957 the British government decided to close down all the coffee houses and retrenched the employees. But Late Shri A.K. Gopalan took a stand for all the retrenched employees and decided to re-establish the coffee houses again with the support of the employees. He along with other renowned personalities of that time met the then prime minister of India Pt. Jawaharlal Nehru. With the support of the prime minster the coffee houses were restarted with few members as a cooperative society. The branches were reopened with a new name from India Coffee house to Indian Coffee house.

The society has to face many ups and down in its history of 60 years. But with the support and unconditional support of hard working and dedicated members the society has achieved miracles in its journey. At present there are 135 coffee houses and canteens and 8 lodges working under it throughout the country. Over the years the coffee house has become a symbol of fraternity a meeting place of the Indian Coffee House and poor, young and old, all kinds of professionals and cross section of the society. It has become a noble abode for artists, scholars, writers and all others, a common place for discussion and enjoyment. Indian coffee house has become a second house for many customers who have been visiting the restaurant from past many years. They have many memories with Indian Coffee House as they have been visiting the branch on continuous basis.

Review of literature : Vibhor Mohan, "Storm in the Coffee Cup" in Nanded City, March 2012 conducted a study in the city to know the

perceptions of consumers on the growing popularity of Indian Coffee House. He concluded that it provided a relaxing ambiance with eye-catching crockery and bright décor. The growth of these specialty and gourmet coffee shops was a result of the economic and demographic changes, higher disposable incomes, increases number of working and exposure to global trends.

Anuradha Shenoy researched on "Branded coffee houses a rage in India" on July, 2005 and revealed that the menu displays not just a range of coffees, but an ever increasing list of soft drink concoctions, food items, south Indian food, veg./non-veg. and other beverages mingling with snacks and mini-meals. According to a 2005 research report by the United Nations Food & Agriculture Organization, India's coffee consumption has been chugging along at 22% p.a.

M.A.Winter: research topic was "An Indian Sector on the Upswing: Coffee Shops" (13 Nov, 2007) showed clearly, despite coffee consumption stagnating, coffee houses are finding it lucrative to add value activities, social activities, merchandize, and food as the main plug. Drink to that! Their research topic was "An Indian Sector on the Upswing: Coffee Shops" (13 Nov, 2007). Winter revealed that they are focusing primarily on knowledge building and management and expertise that are chefs and staff brings to the table.

The hindu paper sep23 2002 "more than just coffee 'n snacks", Indian Coffee House, over the past 44 years, has been the most sought - after coffee nook in Kochi. Primarily for the pure taste of its coffee, and then it's club-like ambience alive with smoke and small talk, where one can sit comfortably chatting and cracking jokes. Founded by Kerala's legendary communist leader AKG in 1958 in Thrissur, the Indian Coffee Workers Co-Operative Society Federation today has 52 coffee shops and 1,809 employees in Kerala. And its strong presence across India, especially in Calcutta, has gained Indian Coffee House a nation-wide recognition among tourists.

Objective of the Study :

1) To identify customer satisfaction level.
2) To identify the influencing factors that drives the customer towards Indian Coffee House.

Research Methodology :

The study has applied both the primary as well as the secondary method. The primary data has been collected with the help of a questionnaire whIndian Coffee House was prepared keeping in view the research objectives. The questionnaire was filled by 250 customers of Indian Coffee House at various branches in Jabalpur. The secondary data was collected from various sources like articles, internets, journals and other source.

Understanding the Study :

Coffee house has always been a place of relaxing and gossiping apart from just a restaurant. To understand the customer satisfaction level the questionnaire was filled by the customers of age group between 25-35 and 35-50 years in two parts to understand the perception of various customer with different age group. It was found that the customer choose Indian Coffee House due to its affordability, influence by the family, and the most important value for their money. Another driving force is the wide variety of product range in the menu of the Indian Coffee House that attracts all the age group.

Data Analysis and Interpretation

Sale

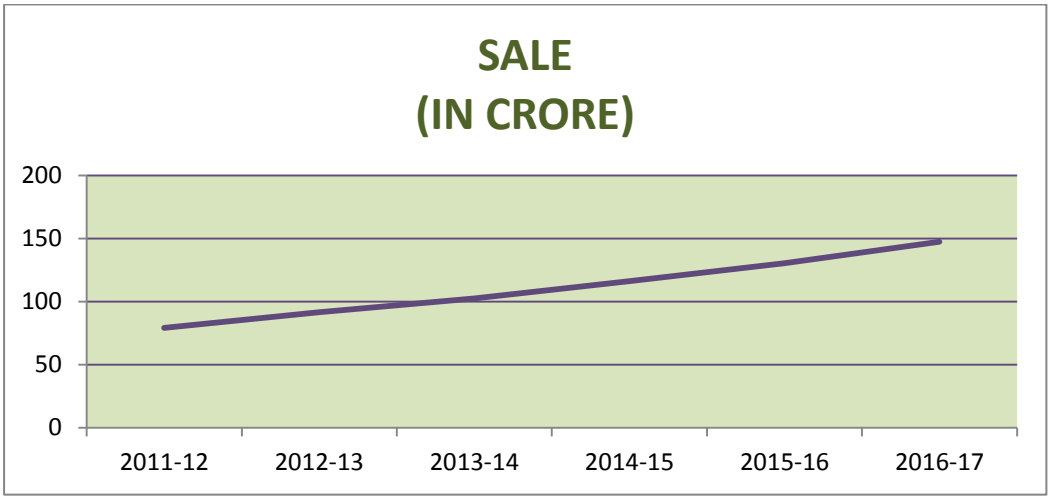

Source: Tabulated from the audited account of Indian Coffee Workers Cooperative Society, Jabalpur.

The above graph clearly depicts the rise in the sale of the Indian Coffee Workers Society of Jabalpur. The graph shows the total sale made by all the branches working under the society. The total sales figure includes the sale made by catering, meals and coffee powder collection. This clearly shows the acquirement of the society in the food market. It shows that the society has been able to increase the number of customer visiting the branches and also increase in their frequency of Indian Coffee House has resulted in the increase of the sale.

Reason for choosing Indian Coffee House

Taste	20%
Quick Service	10%
Value for Money	50%
Food Variety	20%

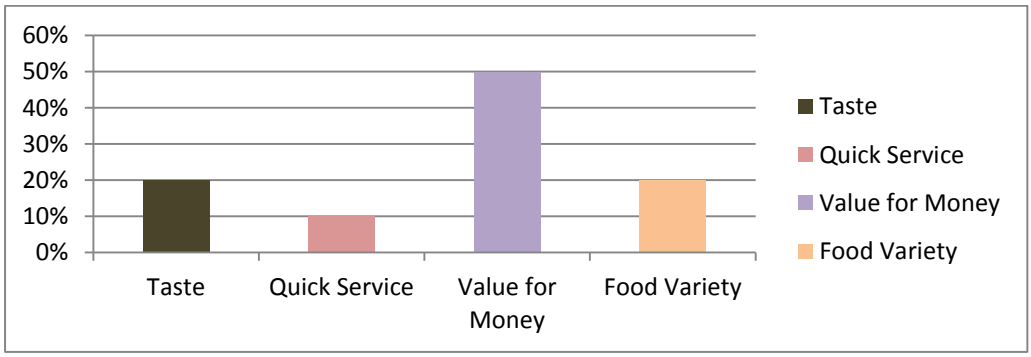

Interpretation : From the above graph it seems that value for money is the most important factor that drives people towards the Indian Coffee House. Then the second in the list is the taste and the food variety and last is the service.

Satisfaction with the taste of food

Very Satisfied	77%
Moderately Satisfied	20%
Slightly Satisfied	3%
Dissatisfied	Nil

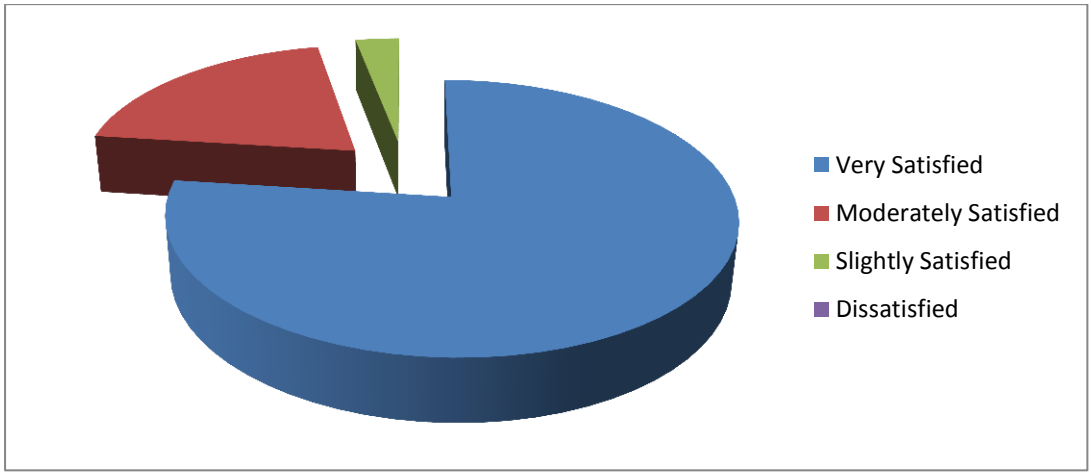

Interpretation :

From the above table it is clear that maximum number of customers are satisfied with the taste of the food at Indian Coffee House. Very few desire a change in the taste.

Rate Indian Coffee House

Excellent	45%
Above Average	35%
Average	20%
Below Average	Nil

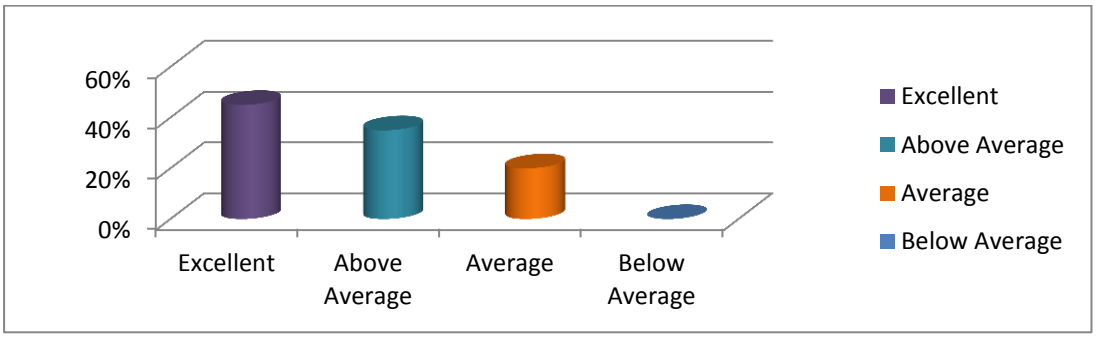

Interpretation :

From the above table it is clear that 45% of customers find Indian Coffee House excellent in comparison to other restaurant in the city. And rest 55% finds Indian Coffee House above average in comparison to other restaurants in their city.

Findings and Suggestions :

1) Customers visiting Indian Coffee House are completely satisfied with it. They have no problem with the taste and other factors. And always choose Indian Coffee House above other options available in their city for dine in.
2) Customers find the environment of Indian Coffee House very pleasant, friendly and welcoming. This is the sole reason for why Indian Coffee House customers visit Indian Coffee House again and again.
3) Indian Coffee House is excellent in terms of taste, quality, and hygiene and service is concerned and who so ever visit is satisfied in all aspects.
4) Maximum customers rate their relationship as good and excellent with Indian Coffee House. There are many who consider Indian Coffee House as their second home.
5) The menu has wide variety from why Indian Coffee House the customer can make a choice. At the beginning Indian Coffee House served only coffee and south Indian food but now you will find that almost all food items have been added in the menu.
6) During survey it was found that all the society believe in mouth publicity. And do not give attention to marketing and its importance.
7) Now a day no business can flourish without proper marketing strategy. Indian coffee house lacks in marketing strategy and this is the only reason for less share of Indian Coffee House in the food industry of India.
8) Maximum number of customer visiting Indian Coffee House feels that society should concentrate more on promotional activity to attract more and more customers.
9) Indian Coffee house has been able to meet the challenges by both the national players as well as the international players to some extent however a lot has to be done in marketing sector to make Indian Coffee House a global brand.
10) Brand management and aggressive marketing is required by the society to meet up the challenges.

References :

- Rules and regulation book Indian Coffee Worker Cooperative Society, Jabalpur
- Effective Executive" by IUP Publication, The ICFAI University Press, Vol. XV March 2012
- www.wirc.icai.org
- Wilipedia.org/wiki/Indian_Coffee_House
- www.indiancoffeehouse.com
- www.indiancoffeehousejabalpur.org
- Anuradha Shenoy researched on "Branded coffee houses a rage in India" on July, 2005 More than just coffee n snacks , "Metro plus Kochi. The Hindu 23 September 2002. Retrieved 13 May 2007
- Vibhor Mohan, "Storm in the Coffee Cup" in Nanded City, March 2012 conducted a study.
- M.A.Winter: research topic was "An Indian Sector on the Upswing: Coffee Shops" (13 Nov, 2007)
- The hindu paper sep23 2002 "more than just coffee 'n snacks".

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

ACHIVEMENTS OF CONGRESS IN TAMILNADU 1947-1967

R.VIJI KANNAN
Ph.D Research Scholar, PG & Research Department of History,
V.O.C. College, Thoothukudi – 628 008,
(This college Affiliated to Manonmaniam Sundaranar University Tirunelveli), Tamil Nadu,

Congress and Politics, 1946-1952 The second election in Madras was held after the end of Second World War in 1946. Gandhi's massive support for Rajaji could not be of any help to him. In an article in the Harijan of 10th February 1945 Gandhi paid a high tribute to Rajaji and sought to stigmatise anti-Rajaji elements in the Tamil Nadu Congress as a clique. Pained at this, K.Kamaraj resigned the Presidentship of the Provincial Congress Parliamentary Board and Rajaji was forced to retire from the political scene[1] Elections of 1946 In the general elections of 1946, the Congress swept the polls: winning 165 of the 205 seats in Madras. Its main political rival, the Justice

Elections of 1946

In the general elections of 1946, the Congress swept the polls: winning 165 of the 205 seats in Madras. Its main political rival, the Justice into the origin and the causes of disturbances and appointed the Collector of Ramnad to conduct an enquiry. In the course of enquiry, the Collector examined a number of witnesses among whom were persons belonging to the 'Black Shirt' organization and members of the public. He also examined some police officers. The facts elicited by the enquiry were that on the 10th , 11th and 12th May, batches of 'Black Shirts' entered the Sri Meenakshi Amman Temple their only object appeared to have been to obstruct the religious practices in the temples.[2]The 'Black Shirts' however did not stop with the Temple. On the morning of 12th May, batches of them stoned the Pillayar idol in the Vinayaka Temple and threw out idols. They indulged desecration at the Mariamman Temple. At the sami sannadi street, where they also burnt down a hoisted Congress flag, they came into with a crowd enraged by their conduct, and they were saved from violence of the crowd only by the timely arrival of the police who escorted the 'Black shirts' to the police station and detained them under police protection till midnight. In the meantime, crowds gathered on the riverbed where the Dravidian Federation Conference was being held and attacked the conference pandal, leading to serious disturbances.

The Government accepted the finding of the enquiry officer that the origin and cause of the disturbances was found in the entry of the 'Black Shirts' into the Meenakshi temple and their subsequent offensive conduct on the 10th, 11th and 12th of May. In the hope that the leaders of the Black Shirts would direct their activity along heal their and more orderly lines in future, the Government did not propose to take action against them in connection with these occurrences; but was determined to deal with such behavior seriously.[3] The Government took this opportunity of assuring full protection to worshippers at shrines against molestation and offensive conduct. The Communist Party had been taking the line that the Cabinet Mission was only 'a blind body' and had been holding meetings and issuing leaflets questioning the sincerity of the Mission. A meeting of the District and local committee members of Tamil Nadu was held and the future programme of the Party was discussed. In addition to attempting to discredit the Cabinet Mission, the Congress was condemned as a capitalist ridden organisation and it was decided that Communist organisations should strengthen their hold on the workers and should prevent the Congress from capturing labour by all means including violence. After the Congress took up office, they proposed to maintain a sustained

agitation over the grievances of kisans and labourers, if necessary by co-operating with other parties like the Radical Democratic Party, the Dravida Kazhagam, etc. In the districts, especially Guntur and Madurai, minor clashes between the Congress and Communists continued.[4]

After the election, the interim government was formed on 2nd September 1946. The very first step of propaganda proved to be effective and sowed the seeds of the movement for a 'Tamil State'. It created awareness among the educated and generated a good deal of enthusiasm and energy to the extent of resurrecting an early Tamil State.[5] They associated themselves with M.P.Sivagnanam and with their co-operation, he took efforts to celebrate, the 'Pongal festival' as 'Tamizhar Tirunal' on 14th January 1946. M.P. Sivagnanam was subsequently invited to speak on the occasion of the anniversary celebration of the Youth League at Vadiveeswaram, Nagercoil on 25th October 1946.[6] In the course of his speech, M. P. Sivagnanam supported the already started merger movement of the Tamilians of Travancore. In these circumstances, on 21st November 1946, M.P. Sivagnanam called for an informal meeting of city youths about seventy in number at Tamil Murasu office, Linghichetty Street, Madras. After a long discussion the majority of the gathering of seventy agreed to form a party named Tamil Arasu Kazhagam. M.P.Sivagnanam, the convener of the meeting was elected unanimously to become the founder president of Tamil Arasu Kazhagam. M.P.Sivagnanam was one of the leading spokesmen of the Rajaji group. 80 His political career depended upon the political fortune of Rajaji too. His support to Rajaji against K.Kamaraj earned him the pleasure of his mentor.[7] At the same time he incurred the displeasure of K.Kamaraj who emerged as a 'king maker' against all expectations and calculations of his opponents. Therefore, M.P.Sivagnanam's political career was affected in no smaller extent. While all leading freedom fighters indiscriminately enjoyed the fruit of independence, M.P.Sivagnanam was denied of it. The ever increasing political power arid popularity of K.Kamaraj further thwarted the very ambition of M.P.Sivagnanam under the banner of the Congress. 81 In April 1947, the Madras Legislature recommended the formation of linguistic states in particular of Tamil Nadu, Kerala, Karnataka and Andhra as separate provinces under the new constitution, and a provision for early appointment of a Boundary Commission or other machinery suitable for the delimitation of the provinces".[8] Tamil sub- nationalists under the leadership of M.P.Sivagnanam vociferously articulated the Tamil sentiments by establishing linguistic identity with Tamil through their movement for Tamil Arasu or Tamil State. Thus the delay in the formation of liguistic states undoubtedly provided a favorable political field in particular to Tamil Arasu Kazhagam to launch the movement for a Tamil State. Governor - General of Independent India When Lord Mountbatten, the first Governor General of Independent India completed his term in the office, Rajaji was chosen to take his place.

He accepted the high office because Pandit Nehru insisted it and became the first Indian to be Governor - General. 83 Lord Mountbatten nominated Chakravarthy Rajagopalachari to be his acting Governor - General of the Dominion of India during his absence in India from the forenoon of 10th November 1947 to 23rd November 1947. [9] The swearing in ceremony was held in the Durbar Hall of the Government House, New Delhi at 10.30 A.M. on Monday, the 21st June 1948.85 He assumed this office under a salute of 31guns. Admiral Lord Albert Victor Nicholas Louis Francis Mountbatten handed over charge of office of the Governor - General of the Dominion of India to Rajagopalachari on 21st June 1948 86at 10.30 A.M. who continued as Governor - General of the Dominion of India till the forenoon of 26th January 1950, when the Constitution of India came into force and Babu Rajendraprasad became the first President of the Republic of India.[10] The Constituent Assembly on 26th November 1949 passed the Constitution of the Indian Union. At 10.15 A.M. on Thursday, the 26th January 1950 in

the Durbar Hall of the Government House, Rajagopalachari, the Governor-General of India read the proclamation announcing the birth of the Republic of India.88 When the new Constitution was adopted and it was decided that Dr. Rajendra Prasad was to be the First President, Rajaji relinqished the office of Governor-General. Rajaji's function in the Congress in the later years was that of an elder statesman reconciling differences between groups.89 Hardly had Rajaji returned to Madras and settled down to a quiet life when Pandit Nehru felt that he should have him in the Central Government. Nehru and Sardar Patel both felt very soon that they required his presence in the Cabinet. Rajaji was a Minister without portfolio in the Government of India in December 1950 and Minister for Home Affairs in November 1951.

Notes and References

1. Jananayagam, February, 1938.
2. Zetland Papers, Vol.III, p.204.
3. Kudi Arasu, 3rd March, 1939.
4. G.O. No.16, Public (confdl.) Department, 5th January 1939, p.113.
5. F.R., 20th February 1946.
6. Madras Information, Vol.I, Madras, 1947, p.121.
7. Ibid.
8. F.R., 20th April 1946.
9. Sivagnanam, M.P., Tamilnadu in the Freedom struggle, Madras, 1989, p.374.
10. Natarajan, S., Silambu Selver Valkailae (Tamil), Madras, 1973, p.31.
11. Sivagnanam, M.P., Op.Cit., pp.706-707. 82 Ibid.
12. Menon, K.P.S., Rajaji, 1993 Souvenir, Rajaji's Anniversary Celebration, Neyveli, 1993, p.129.
13. Notification No.F.75/4/47 - Public (B) dated 10th November 1947, Home Department.
14. Kohli, A.B., Presidents of India, New Delhi, 1999, p.5.
15. Gazette of India (extraordinary), No.15./2/48, 21st June 1948.
16. Kohli, A.B., Op.Cit., p.5 88 Ibid., p.7.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

ORIGIN AND DEVELOPMENT OF SOUTHERN RAILWAY IN TAMIL NADU

M.RAJESWARI
Head & Associate Professor, Department of History
Kamaraj College, Thoothukudi-628003
***(This college Affiliated to Manonmaniam Sundaranar University Tirunelveli),* Tamilnadu**

Southern Railway has been occupying a place of pride in the inland transport of South India. From a humble beginning, Southern Railway has now become the back bone of the economy of South India. Southern Railway has been opening new doors to the distant places of South India without fear. Forty two different railways varying in mileage, finances, traffic, equipment and capacity were functioning in India at the time of Independence1. State owned and state managed, state owned and company managed, company owned and company managed along with lines run by Indian states directly or through companies were prevailing in India.

Southern Railway

Southern Railway was the first Railway Zone to be created in independent India. The capital of Tamil Nadu, Chennai serves as the headquarters of Southern Railway. In 2001 the Zone had been segregated into five divisions namely Chennai, Madurai, Palghat, Thiruvananthapuram and Thiruchiraplli. The Southern Railway encompasses the states of Tamil Nadu, Pondicherry, Kerala as well as little segments of Andhra Pradesh and Karnataka. Over 500 million passengers commute on the Southern Railway network annually.

Chennai (Madras) The headquarters of Southern Railway

Before 1850's transport in Madras was not in an organized system. The palanquin and horses were the standard means of transport. Around 1850, a carriage called 'nibs' came into use for long distance travel [1]. Within the city there were horse drawn vehicles like Jutkas for the use of short distances. Gradually Madras emerged as an important trading centre of South India and this led to the formation of Madras Chamber of Commerce in 1836. The roads on the Western side of Madras were unsafe and on the Eastern side the transportation of cotton from Coimbatore to Proto Nova was very expensive. It was one eighth of the cost of the crop. The roads of Tirunelveli were also unfit for trade and commerce[2]. Therefore the members of the Madras Chamber of Commerce frequently raised their voice against this pathetic condition of roads. With the exception of the districts of Salem, Madurai and Tanjore, the roads in several districts of Tamil Nadu were practically unfit for traffic during rainy season. There were many days in a year in which people could not travel at all and all perishable goods like sugar and grains were exposed to damage. Canals and rivers were also inadequate for transport [3]. At that time Deccan cotton was in great demand for the textile industry in Madras. The Madras Chamber of Commerce emphasized the need for quick transport of mail and cargoes[4].

The first proposal for railway lines in India emerged from the presidency of Madras in 1832, much before the similar proposals in Bombay and Bengal presidencies[5]. In 1836, an experimental line was laid near Chintatripet. This was followed by 3½ mile long rail line South West of Madras, connecting Red Hills and the stone quarries near the Little Mount in 1837[6]. This line was used for private purpose. The Madras Railway Company was formed in 1845. But the apathy of the British Government forced the promoters of Madras Railway Company to dissolve it in 1847. But the efforts of promoters, shareholders and the people of Madras brought the approval of the Court of Directors of the East India Company on 25 May 1852. Therefore a new company with the same title Madras Railway Company was registered in

London on 26 July 1852[7]. Even though it was in the name of Madras Railway Company no Indian was its member[8].

Dalhousie played an important role in connecting the presidency cities of Calcutta, Bombay and Madras for military, commercial and political purpose. He wrote extensively on the subject of railways. He gave importance to suitable gauge, territories where the line should pass and the agency to be employed. The terms of contract and its termination, acquisition of land and acquirement of lines by the government after the expiry of 25 years or 99 years were also considered. As he was an arch imperialist he showed much favour to private enterprises[9]. As per the views of Dalhousie the construction was made in the Madras presidency. When East India Company and Greater Indian Peninsula Railway Company prepared the plan and route, the Madras presidency did not lag behind. Dalhousie suggested two lines, one from Madras via Wallajah Road (Arcot), Vellore, Salem and onward to Western coast with a branch to Bangalore and to the foot of Nilgiris. Another one was from Madras through Cuddapah district to Bellary then to Bombay. His plan was implemented[10].

Chennai Central Station

The complexity of the Indian Railway operations and the range of facilities required for the hierarchic and heterogeneous nature of the passenger traffic forced colonial railway authorities to build railway stations that reflect their imperial power[11]. They also conceived railway station buildings that matched their civic and administrative grandeur. Madras Central was one such grand station built in the Romanesque revivalist style, with round arched arcading and windows capped by "vanegated coloured voussoirs". The four corner towers with an imposing central one and the roof ridges have a fine iron finish situated opposite to the main entrance to the General Hospital, it was originally built by the Old Madras Railway Company. The Central Station was opened for traffic on 7 April 1873. Initially, passenger train services to the north and southwest lines were handled at the station. However, increase in traffic demands forced the transfer of train services from Royapuram to Central in 1907. Minor improvements were made to the station and yard since 1907[12]. Remodelling of Madras Central commenced in the year 1932 to cope with the increased number of passengers as well as trains. Increase in length of platforms, provision of cover to the platforms and increase in the circulating area for passengers, construction of adequate waiting rooms, luggage rooms and booking offices and construction of retiring rooms with modern sanitary equipment were the salient features of the remodelling work. As on April 1951, 20 express/passenger trains were handled at Madras Central. The process of remodeling continued in order to meet the requirements of the day. The suburban terminal at the Moore Market Complex, adjacent to the Central station, was opened for traffic on 17 October 1981[13]. The Chennai Central, as it stands now, is a hub of hectic activity, where the passengers feel the modern ambience. It has acquired the unique distinction of being the first Railway junction in India to be placed on the cyber map. An Internet Browsing Centre with 27 computers with flat screen monitors besides scanner and printer facilities has been set up to link people with the outside world. Online display for announcing the arrival/departure of trains, modern digital display boards, spacious waiting halls, a modern concourse, AC dormitory, ATM centre and modern fast food joints are the highlights of the city's landmark which now receives and dispatches as many as 120 trains.

Chennai Egmore

The Madras Egmore Station is one of the noteworthy additions the Railways had made to the building and structural features of the city[14]. During the British period, the tradition of the 'Oriental's' style of architecture was still in vogue. The Mughal-style stations with minarets and domed open towers were a common feature in the North of India. Distinct in style and structure, the Madras Egmore Station, completed in 1908, was also in Mughal style - a rare phenomenon in the South India. It was an ornate structure in brick, rimmed with granite and sandstone. Several towers were capped by domes in the shape the

Mughals had brought with them from Persia and Central Asia. The walls have intricate stone-carving, particularly in the fantastic stone brackets, the drip stones and rich freezes. A great range of waiting rooms, offices, restaurants, baggage rooms and post office were constructed inside the station.

Headquarters Building

The need for promotion of efficiency in day-to-day working, reduction in inter-departmental correspondence and fiscal concerns led to the idea of concentration of the various administrative offices in a single building. The groundwork for construction of a massive building commenced during 1913. The foundation for the palatial headquarters building was laid on 8 February 1915 by Lord Pentland, the then Governor of Madras. Based on the Dravidian style of architecture of South India with a dexterous blend of modern office requirements, the colossal structure was designed by N.Grayson, the architect of erstwhile Madras and Southern Mahratta Railway. The foundation of the building consists of a reinforced concrete raft from 5 to 8 feet below the ground level set upon a stratum of pure sand, nearly 20 feet deep. It took nearly 7½ months to lay the foundation structure consisting of 500 tons of steel bars embedded on 10,000 tons of granite concrete. Built of stock brick with Porbundar stone, the central towers rise to a height of 125 feet 6 inches above the roadway. The corner towers house the water tanks with a total capacity of about 35,000 gallons. The palatial building, situated to the east of the other stately structure, the Central station, occupies the whole frontage from the Wall Tax Road to Mint street and adds to the architectural beauty of the city of Madras. Nine long years of intensive labour and a massive investment of Rs.30,76,400 led to the shaping of the historic structure unique in style and construction. The building was opened on 11 December 1922 by Lady Willington, the wife of the Governor of Madras.

Royapuram Railway Station

Royapuram Railway Station building is truly worthy of being called a heritage building, not merely because it is the second major railway station built in the country[16], but as it is the oldest railway station in the country that still survives, displaying the vestiges of its former splendour. Though India's first railway line opened from Bori Bunder, Bombay to Thane, neither Bori Bunder nor Thane stations survives today. The Royapuram Station building, that resembled a regency mansion, was declared open by the then Governor Lord Harris on 28 June 1856. In his speech he congratulated the Madras Railway Company, its Manager Major Jenkins and all who had worked on the railway, Lord Harris said that the project was worth the investment and looked forward to equally expeditious completion of additional miles of track up to the west coast. Two trains, each with coaches made by Simpson & Co., the leading coach builders of the day, inaugurated the service. One carried the Governor and 300 Europeans and another train, with the Indian invitees followed. These were widely covered by the Press. "The Illustrated London News" gave a graphic description of the inaugural train passing across the arid plain of the Carnatic, frightening the herdsmen and the cattle.

Predecessors of Southern Railway

The Southern Railway, which was formed in April 1951, had the predecessors of Madras Railway Company, The South Indian Railway Company, Great Southern of India Railway Company, Southern Mahratta Railway Company, East Coast Railway Company and Nilgiri Railway Company.

The Madras Railway Company

The Madras Railway company was formed in London on 8 July 1845. The European residents at Madras were not slower than the residents of Calcutta and Bombay in getting railway lines to their city of Madras. Their main object was the construction of a railway line from Madras to the commercial town called Wallajah Nagar and to connect military station at Arcot[17]. The town Wallajah Nagar was a centre of trade and it was very adjacent to the cavalry cantonment of Ranipettai. The Madras Railway Company held the first meeting of its share holders in February 1846. The company submitted an estimate for financial

judgement to Simms C.E, the first Director of Indian Railway Department.[18] Shortly afterwards the company was dissolved because it didn't get any monetary assistance from the Court of Directors, as it was granted to Bengal and Bombay. But after the establishment of the experimental lines in Bombay presidency, the Madras Railway Company was again revived. Simms proposed the construction of railway lines between Madras and Wallajah Nagar. Simms gave his report on 20 December 1845 to G.A Bushby, Secretary of the Government of India. He recommended that it could fetch more benefits to the Government because at that time trade in Madras had two directions, one from the Northern districts of Cuddapah and Bellary and other from Salem and Coimbatore. These lines intercepted at Wallajah Nagar. Therefore the project proposers fixed Wallajah Nagar as centre where future railway lines might start.

J.A. Arbuthnot[19] held two meetings in London in 1849 to discuss the subject of Railways in Madras presidency[20]. Madras Railway Company succeeded in obtaining the confidence of the Court of Directors but the Board of Control still opposed the scheme. This uncertainty continued till the appointment of Major Pears as the Railway Construction Engineer to the Government of Madras. His appointment was a turning point in the history of Madras Railway Company. He proposed two schemes. One from Madras to Malabar via Vaniyambadi, Salem and Palghat in the South West direction and the other from the West of Madras over the Eastern ghats to Poona and to Bombay in the Northwest direction. The Madras Government approved both the lines[21]. The project of Major Pears was submitted to the Court of Directors for approval[22]. Lord Dalhousie gave priority to the lines that would connect Madras to Bombay. After a lot of discussions Major Pears was urged by Dalhousie for rapid surveys of the line by Cuddapah through Bellary[23], a military base which also had cotton traffic and then a possible junction with a line from Bombay. Lord Dalhousie approved Major Pears' project for the main lines and the branch lines[24]. Finally the indent was made on 22 December 1852 between the East India Company and Madras Railway Company.[24] It was said that Madras Railway Company was established by the deed of 26 July 1852. For construction purpose, the railway company had to pay to the treasury of East India Company a sum of £ 500000[25]. The railway company could set up an office, keep at all time an authorized agent to whom the East India Company and the Government might communicate.[25]

Notes and Reference

1. S. Muthiah, *Madras its Yesterdays, Todays and Tomorrows*, Madras: Association of British Council of Scholars, South India, 1990, p:36.
2. Hilton Brown, *The Parrys of Madras; A Story of British Enterprise in India,* Madras: Published Privately by Parry, 1954, p:113.
3. W.W. Hunter, *The Imperial Gazetteer of India*, Vol. I, London, 1886, p:106.
4. R. Thirumala, *The Voice of an Enterprise - 150 Years of Madras Chamber of Commerce and Industry*, Madras: Mac Millan India Publication, 1986, p:57.
5. K.S. Ramaswami, *Transport in India,* Madras: Amutha Nilayam, 1957, pp:87-89.
6. C.D. Maclean, *Manual of the Administration of the Madras Presidency*, Vol. I, Part. II, Madras: Govt. Press, 1885, p:420.
7. E.Keys, *Manual of the Administration of the Madras Presidency*, Vol. I, Part. II, Madras,1885, p:425.
8. K.S. Ramaswamy, op.cit, p:89.
9. G.S. Chhabra, *Advanced Study in the History of Modern India*, 1813-1919, Delhi: S. Chand & Company, 1970, p:224.
10. G.S. Khosala, Op.cit, p:169.
11. William Thomas, *The Asylum Press Almanac Compendium of Intelligence*, Published for the benefit of Lowrence Asylum, Madras, 1873, p:681.

12. H.D. Sigh, 'Southern Railway - Its Role in the Economy of the South' The Indian Railway Engineer, Railway Magazine, April 1961, Tanjore, 1961, p:48.
13. Indian Express, daily, dated 18 December 1981.
14. E.A.S.Bell, *Illustrated Guide to the South Indian Railway,* Madras: Premier Press, 1926, p:12.
15. 25. Native News Paper Report (NNPR) 1913, Madras Standard, Madras, 18 September 1813, Tamil Nadu Archives, p:143.
16. Edward Davidson, *Railways of India with an Account of Rise, Progress and Constructions*, Jamfordstreet: W. Clowes and sons, 1868, p:343.
17. Ibid
18. E. Keys, Op.cit, p:424.
19. John Alves Arbuthnot was the Acting Chairman of Madras Railway Compay. 30. Charles Trevelyan, *History of the City of Madras 1859-60*, Madras, 1860, p:264.
20. Aruna Awasthi, *History and Development of Railways in India,* New Delhi: Deep & Deep Publication, 1994, p:24.
21. G.O. No. 780, dated 6 April 1853, Fort of St. George, Financial Department (Railway), April 1853, Vol. I, Tamil Nadu Archives, p:17.
22. G.O. No. 3, dated 14 March 1854, Fort of St. George Financial Department (Railway), Vol.5, Tamil Nadu Archives, p:145.
23. G.O. No. 3 dated 4 March 1856, Fort of St. George, Financial Department (Railway), Tamil Nadu Archives, p:12.
24. G.O. No. 22 dated 31 May 1853, Public Works Department, Bundle Number 61, Tamil Nadu Archives, p:13.
25. R. Gopala Krishnan, 'The Role of Railway Men', South Rail News, Srinivasan. K (ed), Madras Monthly, June 1959, p:39.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

Challenges in Sustainable development in Madhya Pradesh

Dr Archana Muthye
Assistant Professor, GS College of Commerce and Economics, Jabalpur

Sustainable development has been defined as development that meets the needs of the present without compromising the ability of future generations to meet their own needs. The concept of sustainable development can be interpreted in many different ways, but at its core is an approach to development that looks to balance different, and often competing, needs against an awareness of the environmental, social and economic limitations we face as a society.

For sustainable development to be achieved, it is crucial to harmonize three core elements: economic growth, social inclusion and environmental protection. These elements are interconnected and all are crucial for the well-being of individuals and societies.

The aim of sustainable development is to balance our economic, environmental and social needs, allowing prosperity for now and future generations. These include social progress and equality, environmental protection, conservation of natural resources and stable economic growth.

The main challenges to sustainable development which are global as well as local in character include poverty, unemployment, climate change, conflict and humanitarian aid, building peaceful societies, building strong institutions of governance, and supporting the rule of law.

Madhya Pradesh is one of the first States in the country to have prepared a State Action Plan on Climate Change (SAPCC). Madhya Pradesh with 31% of geographical area as forest land is rich in Floral and faunal diversity.

Challenges of Sustainable development :

The challenge of sustainable development is now recognized worldwide. Three dimensions are relevant: the interaction between culture, structure and technology. Despite the wealth of its resources and having tremendous potential Madhya Pradesh faces a number of challenges in reconciling the imperatives of environmental and development.

Uncertain climatic condition developmental challenges and with reduced adaptive capacities are making Madhya Pradesh highly vulnerable to the impacts of climate change, About 70% of the rural population of Madhya Pradesh is engaged in primary sector covering agriculture Horticulture animal husbandry fisheries and Dairy development. Health climatic change causes effect of increased incidents of urban Malaria dengue atrocities provide ideal breeding sites for these vectors sometimes in terms of a healthy sanitation in the urban slums accumulated sewage water are at times by providing micro environment through air conditioners and air coolers.

Transport number of registers vikalpa house and population of Madhya Pradesh is more than a national average Road Transport or public transport in Madhya Pradesh is highly fuel in efficient.

Distress migration, in view of repeated crop failures and lack of local options for alternative income generation activities, is a big concern which impedes the implementation of rural sustainability goals.

Conclusion :

Since Madhya Pradesh is richly blessed with sunshine, solar energy is one of the most convenient natural energy sources in India as well as Madhya Pradesh.

Economic progress is visible in most places. The cities are growing, transport systems are the middle class is growing rapidly. But there are still vast pockets of poverty in the villages in the countryside, and in the slums in the cities. The

villages and poorer parts of the state need investments in sanitation, like water closets. So there is an increasing need of general changes, remediation of land and water as well as investments in the energy sector.

The strategies to deal with these situations are typical in Madhya Pradesh and most of them could be addressed through capacity building and education and sustainability goals can be achieved.

References :

- http://mpenvis.nic.in
- http://www.moef.nic.in/sites/default/files/sapcc/Madhya-Pradesh.pdf
- *www.indiatogether.org/challenges-to-sustainable-development-government*

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

Impact of Demonetization on Common Man

Dr.Ravi Kumar
Assistant Professor of Commerce, Government Arts College
Dr.B.R Ambedkar Veedhi, Bengaluru-560001

Abstract : The term demonetization has become a household name since the government pulled the old Rs 500 and Rs 1,000 notes out of circulation. While as per dictionary demonetisation means "ending something (e.g. gold or silver) that is no longer the legal tender of a country", one needs to see if there is anything more to the word. It is very important to know how it has an impact on the common man. This paper gives a brief picture of Demonetization and its impact on a common Man.

KEY WORDS : Demonetisation, ATMs, Currency Change, E –wallets, Cash Crunch,

INTRODUCTION : India saw a late evening announcement on the 8th of November, 2016; by Prime Minister Mr. Narendra Modi, declaring 'five hundred rupee and thousand rupee currency notes presently in use will no longer be legal tender from midnight tonight, that is 8th November 2016.'

India is world's 3rd biggest economy and Asia's second biggest, in purchasing power (2015) at $7.98 trillion; whereas in nominal GDP, it is the 7th largest, at $2.07 trillion. To support this GDP, India's Central Bank, The RBI has a bank note cash circulation of roughly $245 billion, out of which around86% was in the highest two bank note denominations, that is Rs. five hundred ($7.5)and Rs. one thousand currencies ($15, excluding the new Rs. 2000, March 2016 figure).

This announcement of the government surely took most Indian citizens by surprise, although allegations of such a move being selectively leaked out also appear in India's media and political malarkey. Indian elections have always been more about notes and caste, and key Indian states, including biggest Indian state by population, Uttar Pradesh, is due to go through assembly election in the initial months of 2017; therefore many in the media and the political circle see the move as a political move.

India's cash-intensityin the economy – as measured by the ratio of currency to the nominal GDP, at12% is significantly higher than Brazil (4.1%), Russia (11.9%) or Mexico (5.7%). This is natural, at around $1600 per capita income (nominal, 2015) – India has much lower per capita income, less than one-fifth of the second lowest in the peer basket of Brazil ($8538). India is at a much lower socio-economic development cycle compared to the other three peers.

A 2012 study showed cash transactions in India to be 86.6% of total transactions, reducing from 90.6% in 2007.Estimates presently vary from 68%to even 90%(my bias would be closer to the latter).

What is Demonetisation?

When a currency note of a particular denomination ceases to be a legal tender it is termed as demonetisation. But since our government is replacing the old Rs 500 notes with newer ones and doing away with the Rs 1,000 notes, it would be more appropriate to call the move as `scrapping' or `phasing out' of certain currency notes.

OBJECTIVE :

The objective of the study is

- To understand concept of demonetization and

- To know the impact demonetization on Common man in India

METHODOLOGY :

The study was based on the secondary data and the study mainly focused on the common man. The study concentrated on the problems faced by the common man due to demonetization.

CHALLENGES FACED BY THE COMMON MAN DUE TO DEMONETISATION:

1. Lack of Money in ATMs :

Many people depend on ATM service as it's easy to withdraw money and it also saves a lot of time and hassle. Due to demone, there are long queues and inspite of people patiently waiting for hours; they are unable to get cash. Also many don't have the time to go stand in queues due to several issues like old age or bad health etc.

2. Currency Change not Available :

Many people who are getting Rs 2000 note from banks or ATM are not able to get the change as none of the shopkeeper is ready to give change of Rs 1800 on purchase of Rs 200 so change is a big worry now a days to common person.

3. Usage of E Wallets :

Usage of E Wallets is one of the best solution but challenge is that many people who are of old generation don't use smart phone and if they use then also big ratio among them is of people who don't feel secure on transferring the money through E Wallets

4. Banks unable to feed their Customers :

You can still find long queues of people waiting outside banks for their number and some of the times it happens that after long hours of waiting they come to know that cash is finished and now they have to come again after some hours or need to be in queues tomorrow again. It all shows that banks are not prepared enough to feed their customers.

5. Old and poor people losing lives :

It's been in several news channels that some of the people who are not well or are very weak have lost their lives due to standing in queues for long hours. But sad part is no one is ready to take responsibility of such activities.

We are sure that you guys are also facing a lot of similar challenges but as hopeful Indian citizens we have full trust and faith in our government and this move will surely change our lives for good. Fingers crossed for a better India !

6.Cash crunch :

The 500 and 1,000 rupee notes were the largest denomination of money, which made up for 14 lakh crores in circulation. Demonetization has a direct impact on sectors dealing with cash—vendors, auto rickshawwallahs, taxi drivers, daily wage earners and small traders. The Indian system mainly functions on cash, and so, less cash means disruption in the flow. Even sectors like real estate, which deal with illegal cash transactions, will go through a rough patch leading to fall in profits.

Practical difficulties that people faced :

- The owners of the consumer perishable stock like vegetable vendors, local grocers, milk and fruit sellers is facing huge trouble. Do they let their stocks rot and refuse to accept the Rs 500 note?
- Medical care is also likely to suffer. As per the scheme, government hospitals would accept these notes. However, many of these government hospitals ask you to buy medicines from outside. How are those transactions to be settled? Also, over 80 percent of healthcare is through private hospitals and nursing homes. How do they provide for critical care and surgeries?

- How do tourists handle their transactions? Do tourists need to queue up outside banks, changing Rs 4,000 at a time whenever the banks get new currency stocks and open again?
- Not more than 10 percent of Indian population know 'how to operate an ATM'. Thus,there will be huge queues in the banks and people(including daily wage workers) is having to apply leave to stand in those long queues.
- In the case of businesses following mercantile basis of accounting as well, there are some practical difficulties. For example, instances where credit sales have been made and debtors are due for payment in these two days. The payments will get delayed and will add to the liquidity crunch.
- There are some genuine cases like the father withdrawing huge amount (say 10 lakh) of money for his daughter's wedding in next one to two days.
- Mental and physical stress - Standing in queues outside ATMs and Banks for long hours.
- Even after standing for long, going back homes empty handed as new currency gets over pretty fast.
- This execution exercise is pretty exhausting for people especially to old age.
- Common man's time is getting wasted making multiple rounds to banks and ATMs as well as due to standing in long queues. His work is getting affected and is being put to unproductive use. But he has no choice.
- Supply of various goods and services has been affected due to this. Hence shortage of products in the market.
- Even demand has been affected. People are postponing few consumption items as not everyone has new currency till now and everyone want to save 100 rupee currency.
- Many shops have been closed. Many businesses have been affected badly like transport. That is because they were mostly using cash as the medium of exchange.
- Many ATMs are still not supplied with money especially in smaller cities and rural areas. Whenever and wherever they are filled, they get empty real quick too.

CONCLUSION :

Demonetization is a generations' memorable experience and is going to be one of the economic events of our time. Its impact is felt by every Indian citizen. Demonetisation, in our opinion, had adverse impact on people of India as well as the Indian economy. Sudden withdrawal of higher value currency has lead common men like daily labours and small business very hard to meet their daily bread. Many time many people fainted by standing in such a long queues and even a count of 50 have been reported dead. Demonetisation is a good move but proper precaution would taken to overcome this challenges.

BIBILIOGRAPHY :

1. www.etmarkets.com **by Joel Rebello and GayathriNayak,**
2. www.indianeconomy.net **; impacts of Demonetisation on Indian Economy,**
3. www.dnaindia.com
4. www.quoro.com
5. www.indiabix.com
6. www.storytap.com

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

बुंदेली साहित्यिक इतिहास में लोकदर्शन का महत्व

डॉ. नीलेश शर्मा
रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर

आचार्य रामचन्द्रशुक्ल का कथन हैं, ''भारतीय हृदय का सामान्य स्वरूप पहचानने के लिये पुराने प्रचलित ग्राम गीतों की और ध्यान देने की आवश्यकता है। केवल पण्डितों द्वारा प्रवर्तित काव्य परम्परा का अनुशीलन ही नही''[2] नर्मदेश्वर उपाध्याय कहते हैं' ''भारतीय जनमानस का समस्त मनो विज्ञान यदि कही संग्रहित है तो वह लोक गीतों में है। इन लोक गीतों के उद्देश्य केवल मन बदलान व मनोरंजन ही नही है ये गीत शिक्षा या उपदेश देन के साथ कई बार ऐसी दार्शनिक सीख दे जाते हैं व जीवन सत्य को अपने गीतों के माध्यम से बड़ी आसानी से कह जाते हैं''।[3]

लोक काव्य का दर्शन लोकदर्शन होता है। जिसमें लोक चिन्तन के अन्तर्गत सामान्य विचार आते हैं जिन्हे वहाँ का लोक महसूस करता है। ऐसे विचारो में जीवन की क्षणभंगुरता, आत्मा की अमरता, देह की नश्वरता व नैतिकता की बात जीव ईश्वर का अंश आदि बड़ी आसानी से कह दी जाती हैं। बुन्देली समाज की दार्शनिक विचारधारा इतनी स्पष्ट और सरल है कि उसमें सभी दर्शनों का पुट प्रतीत होता है। लोक समाज में प्रचलित लोकोक्तियों, कहावतों व गीतों में दार्शनिक अभिव्यक्ति सहज ही हो जाती है। इन गीतों के कुछ उदाहरणों द्वारा यहॉ के समाज की दार्शनिकता का अध्ययन करेगें। यहाँ के लोक कवि ईसुरी की एक फाग देखें जिसमें केह की नश्वरता को बताया गया है–

बखरी रइयत है भारे की, दई पिया प्यारे की।

कच्ची भींत उठी माटीकी, छई फूस चारे की।

बेबन्देज डरी बेबाड़ा, जेई में रस द्वारे की

नई किबार किबरियाँ एकऊँ, बिना कुची तारे की।

'ईसुर'चाय निकारो जिदना, हमें कौन उवारे की।।

बखरी के रूपक को लेकर इसमें नश्वर देह का वर्णन किया गया है। जो बिलकुल ग्रामीण है। लोक कवि ने गांव में कई बेबन्देज बिना किबरियों की बखरी को देखकर उसके बिम्ब को फाग में जड़ दिया है। वस्तुतः देह की नश्वरता का वर्णन बहुत पुराना है एक और फाग देखें जिसमें देह की नश्वरता का वर्णन किया गया है।

तनक भरोसा नइयों ई तन को, तनक भरोसानाइयाँ लाल।

खा लेव पी लेव और बिलस लेव, संग कछु न जैहे लाल।

जब जमराजा के छूटे सिपाही, घालन लगे मुगरियाँ लाल।

जब जमराजा चढ़े छाती पै, बोलन लगी चिरैया लाल।

कोठन–कोठन ठुकत प्रान जे, कोऊ– काऊ को नईयाँ लाल।

देह जरै जैसे कर्कट कूरा, केस घास को पूरा लाल।

मानस चाम काम नई आबै, पसु की बनत पनइयाँ लाल।।

इस गीत में मनुष्य को पशु से भी अनुपयोगी प्राणी बताया है पशु की खाल से तो पैरो के जूते बन जाते हैं। परन्तु मनुष्य वैसे ही जल कर हो जाता है जैसे कूरा कर्कट घास फूस खत्म हो जाता है। भारतीय दर्शनों में यह सर्वमान्य तथ्य है कि मनुष्य शरीर नश्वर है अतः मनुष्य को इसका घमंड़ नही करना चाहिये। अतः इस हेतु भी एक गीत देखें–

कोई मत करो रे गुमान नइ देही को, मत करो रे गुमान।

जो नर देही पै घास जमेगी, गौएँ चरेंगी अमान।

जा नर देही पै बखर चलेगी, खेती करें किसान।

जा नर देही पै कुवला खुदेगी, खुद के हो जा निमान।

नर देही को कोई मत करो गुमान, मत करो रे गुमान।

शरीर की नश्वरता के अनेक गीत कथायें कहावतें आदि बुन्देली समाज में भरी पड़ी हैं जैसे लोक साहित्य में प्रभूत है –

वहि देह वही नाम है, वही ग्राम वही ठाम।
दुलहन कहिबो मिट गयो, भयो डुकरिया नाम''।
या
इक लख पूत सवा लख नाती।
सो रावन घर दिया न बाती।

लोक विश्वास है कि मनुष्य का जीवन क्षणभगुंर है इसीलिये जीवन में सभी सुखों को भोग लेना चाहिये इस राई (लोक नृत्य) गीत के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है –

हंसा कर ले किलोल, जाने कबै रे उड़ जानें।

जिसमें हंस जीव का प्रतीक है और उसका उड़ जाना क्षणभंगुरता का प्रतीक है। जीव के लिये यह कहा भी गया है कि संसार में रहकर आनन्द भरी क्रीड़ाएँ कर लेना चाहिये क्योंकि उसका जीवन अनिश्चित और नश्वर है। लोकगीतों मे भी कुछ इस प्रकार भोग प्रधान लोक दर्शन के विचारों तथा लौकिक सुखों के भोग के पक्ष में तर्क प्रस्तुत किया गया है। व यहाँ के लोक जीवन में माया मोह के चक्करों में न पड़ने की भी अनेक गीतों में सलाह दी गई है। माया मोह के सन्दर्भ में भी यहाँ अनेकों उपदेश दिये गये हैं –

मुट्ठी बाँधि के आया हंसा क्या लेकर तू जाइगा।

माटी ओढ़ना माटी बिछोना, मिटटी में मिल जायेगा।

चुनि–चुनि कलियाँ महल बनाया, लोग कहें घर मेरा है।

ना घर मेरा ना घर तेरा, चार दिना का मेला है।

इस रसिया गीत में जीवन को हंस कर, खेल कर काटने की बात कही है–

हँस खेल बखत कटि जाये बारे रसिया,

को कहँ को रमि जाय बारे रसिया,

जैसे रंग पतंग रे रसिया, पवन चलै उड़ जाय

जैसे मोती ओस को रसिया, धाम परै ढरिजाय

हसँ खेल बखत कटि जाये बारे रसिया।

उक्त पंक्तियों में पतंग के पवन में उड़ जाने और ओस के धूप में ढुलक जाने से जीवन का नाशवान होना सिद्ध किया गया है। और हँस हँस कर खेल कर अपना समय बिताने की सीख इस गीत में दी गई है व इस गीत में मनुष्य को समय का सदुपयोग करने की शिक्षा दी है

अरे अरे मनुआं, ओ रे, सबसे करले चिनारे।

काल कला पछी रम जे हैं, तेरे ऊपर जम है नई घास।

खाले पीलै, दे लै लै., और कर लै भोग विलास।

सबसै। हिललै मिललै, और कर लै तीरथ पिराग।

मटिया कुमरा न लैहे, तेरी पूछ है न काऊ बात।

प्राण शरीर में अलग हो जाता है तो शरीर की मिट्टी कुम्हार के भी काम नही आती है इसी प्रकार इस गीत में मनुष्य को समय रहते अच्छे कर्म को करने की शिक्षा दी गई है समय खोने का मतलब स्वयं को धोख़ा देने से है–

खबर नहिं जा जुग में पल की

सुकरम कर ले राम सुमरले को जाने कल की

काल करत ते आजई कर लो को जाने पल की

भाई बन्द कुटम कबीला दुनिया मतलब की

लोक कवि ईसुरी की फागों में श्रृंगार व भक्ति ही नही बल्कि नैतिक मूल्यों की अभिव्यक्ति भी है जिसमें मनुष्य को नैतिकता व अच्छे कर्म व धर्म को करने की सलाह दी है–

दीपक दया–धरम को जारौ, सदा रात उजयारौ।

धरम करें बिन करम खुलेना, बिन कूची ज्यों तारौ।

मानस होत बड़ी करनी सें, रजऊ से कइये तीसैं।

नेफी बन्दी पुन्न परमारथ, भक्ति भजन होय जी सें।

अपने जान गुमान, नकरिये, लरिया नहीं किसी सें।

वे ऊँचे हो जात कहत हैं। नीचे न नबे सभी सें।

इसी प्रकार लोक कवि ईसुरी ने मानव के तन में सब कुछ बता दिया है–

तन के समु लच्छन सब जाके, दया करन है ताके।

जनबाई जड़ पड़ें धीरता, साखा सीलन छाके।

अरथ धरमओं काम मोक्ष फल पुन्न पुरातन पाके।

इस वृक्ष रूपी देह में चतुरता की जड़ धीरता का तना, शील की शाखाएँ और अर्थ–धर्म काम–मोक्ष के फूल होते हैं, शर्त यह कि उसके कर्म अच्छे हों, इसके लिये लोक में कहावत प्रचलित है –

मानुस बड़ो होत करनी से व इस शरीर की उपयोगिता तभी है जब उसकें तन का पर उपकार के लिये उपयोग हो–

'जो तन पर स्वारथ के लाने'

यहाँ महिलायें शादी ब्याह वे अवसरों पर गायी जाने वाली गारियों में भी व्यंग्यों के बीच नीति की बातें करती हैं –

चचंल चतुर सुधर नर भौरां, पर घर गमन न करियों बे।

के हाँ–हाँ बे, कै हूँ हूँ बे.....।

जिन घर ऊधो हीरा उपजे, उन घर कभऊँ न जइयों बे। कै हाँ हाँ.....

जिन बागन दो कलियाँ भोरी, उन बागन जइयों बे। कै हाँ हाँ.....

जग में जो गुन औगुन करही, अगन खम्भ में बँदहो बे। कै हाँ हाँ.....

धन दौलत को गरब न करियो, उरिया की छइयाँ पलट जै है।

हसँ बोलो जस रै जेहे।। के हाँ हाँ.....

इसी प्रकार इस गीत में माया मोह छोड़ने के लिये कहा गया है। माया पर रीझने वाले कई व्यक्ति फकीर हो गये हैं, जो साधना करने में ही अपनी सफलता समझने लगे हैं –

कहूँ धूनी रमाव, कायेखों परे मायाजाल में।

रूपवती के रूप में, कईयक भये फकीर।

कोऊ परबत पै तप करें, कोउ गंगा के तीर,।

कँहू धूनी रमवि।

इसी प्रकार सते जूडीराम के निगुर्ण पद यहॉ गाये जाते हैं विनय प्रधान पदों में वे भवसागर के कठिन आवर्तों और इसकी प्रबल धारा की ओर संकेत करते हैं।

'जो भोसागर भगम भरो है, दुविधा धार खरेरी'।

अर्थात , यह भवसागर द्विविधा से भरा हुआ है– जिसका प्रवाह तेज है, प्रकार

पावत पार नहीं सागर को कर्म कुलाहत भार भरोरे।

कुमत खटेर भोर माया की फिर फिर गोटा खात फिरोरे।

अर्थात नाम का जप किये बगैर यह शरीर इस भवसागर में बहता जा रहा है और इस भवसागर का पार नही पाया जा सकता है। यह कर्म के कोलाहल के भार से परिपूर्ण हो रहा है

तन बहो जात हर नाम बिना।
नहि सतसंग कियो साधुन को हर चर्चा नहि एक दिना।
मन पाखंड दंभ नहिं छोड़ भूल रहो झूठी रचना।
जो दिन खबर समारो काल अचानक गहे तिदना।
जूड़ी राम बिन चीन्हें जो जीवन तू है सपना।

प्रभु के नाम के स्मरण बिना यह शरीर बहता जा रहा है । तूने न तो सत्संग किया और न ही एक दिन के लिए भी प्रभु की चर्चा की है, तेरा मन दम्भ और पाखण्ड नहीं छोड़ पा रहा है इस झूठी सांसारिक रचना में तू भूला–भूला फिर रहा है जब सावधान होने की स्थिति आयेगी, अचानक उसी दिन मृत्यु तुझे ग्रस्त कर लेगी। जूड़ीराम कहते है कि राम की पहचान किये बगैर यह समस्त जीवन एक सपना बन जायेगा। बुन्देली लोक गीतों में इस तरह की लोक चेतना बिखरी पड़ी है। जिसमें यहाँ का समाज स्वयं को व अपने आस–पास के लोगों को समय समय पर जीवन दर्शन व यहाँ के लोग प्राचीन मनीषियों को ज्ञान को संग्रहित ज्ञान भण्डार नही रहने दिया वरन उस ज्ञान विज्ञान से आम जन को लाभान्वित करने हेतु अनेक गूढ़ से गूढ़ दर्शन को अपने गीतों में पिरोकर लोक जीवन है तक पहुँचाया है लोक गीतों लोकोक्तियों के माध्यम से भारतीय दार्शनिक ज्ञान को समाज तक पहुँचाने का कार्य लोक परम्पराओं के माध्यम से भी किया गया है यहाँ मनाये जाने वाले तीज त्योहार, मेले, खाना पान की परम्परों व बोली जाने वाली कहावतें व लोकोक्तियाँ आदि सभी किसी न किसी रूप से वैज्ञानिक है।और यह

कहना ही युक्ति संगत होगा कि यहाँ की नीति परक आध्यात्मिक चेतना से कारण आज भी बुन्देली समाज भारतीय शाश्वत मूल्यों का व भारत की चिरंतर संस्कृति का पोषण करते आ रहा है। यहाँ का मानवतावादी लोक दर्शन इसी कारण ऊँचे स्तर का है जिसमें बिना किसी भेदभाव के जाति, वर्ण, सम्प्रदाय और धर्म की कट्टरता से दूर एक व्यापक लोक हित सदैव रहता है।

सन्दर्भ ग्रंथ –

1. हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास षोडस् भाग पृ.–15

2. रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ – 724

3. सम्मेलन पत्रिका – लोक संस्कृति विशेषांक पृ. 161

4. बुन्देली लोक साहित्य, परम्परा और इतिहास, प्रो. नर्मदा प्रसाद गुप्त, 2001 प्रथम संस्कृत पृ. स. 285

5. बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति का इतिहास, नर्मदा प्रसाद गुप्त, राधा कृष्ण प्रकाशन (1995)

6. बुन्देलखण्ड की संस्कृति और साहित्य, रामचरण हयारण मित्र

7 नामबिन चीन्हें , डॉ. श्याम सुन्दर दुबे, आदिवासी लोककला एवं बोली अकादमी म.प्र.भोपाल

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

नगरीय मध्यम परिवारों में बालिकाओं की स्थिति

डॉ. संगीता बगवैया
भोपाल

सामाजिक शोध के परिणामों से ज्ञात होता है, कि मध्यमवर्गीय परिवारों में आज भी बालिकाओं की मानसिक योग्यता की उपेक्षा की जाती है, इसलिये उच्च शिक्षित होने के बावजूद भी वे मात्र एक गृहणी बनकर रह जाती है। सांस्कृतिक रीति–रिवाज और गलत मान्यताओं के कारण उसकी तकलीफें और भी बढ़ जाती हैं। समाज में महिलाओं की स्थिति का अंदाजा बालिकाओं की स्थिति से लगाया जा सकता है। बालिकाओं को कम देखभाल और ध्यान का हकदार माना जाता है। परिवार के सदस्य यह समझते हैं, कि बालिका की देखभाल यानि एक ऐसे पौधे को पानी देने के समान है, जो किसी और के बगीचे में लगा हुआ है। अपनी मुख्य जरूरतों को पूरा करने के लिए उसे बहुत कम प्राथमिकता होती है। माता–पिता भी पुत्र को पुत्री से अधिक महत्व समाज के चलन के कारण देते हैं। भारत में बालिका के साथ भेदभाव का स्तर विभिन्न राज्यों से भिन्न–भिन्न है।

अध्ययन के उद्देश्य :–

- यह ज्ञात करना कि नगरीय मध्यवर्गीय परिवारों में बालिका के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन आया है या नहीं ?
- यह ज्ञात करना कि माता–पिता की बालिका के प्रति कैसी अभिवृत्तियां है ?
- स्वयं बालिका का अपनी स्थिति के बारे में क्या विचार है ?
- बालिका के साथ किन–किन बातों में भेदभाव किया जाता है?

प्रस्तुत शोध हेतु उपकल्पनायें निम्नानुसार है :–

- परिवार का आकार जितना छोटा होगा, बालिका की स्थिति उतनी अच्छी होगी।
- जिस परिवार का प्रकार एकल होगा उस परिवार में बालिका की स्थिति अच्छी होगी।
- जैसे–जैसे माता की आयु बढ़ती जायेगी, बालिका की स्थिति अच्छी होगी।
- उच्च शिक्षित माता की बालिका का स्तर अच्छा होगा।

न्यादर्श का आकार

पांचों शालाओं में परीक्षण के दिन उपस्थित नवीं कक्षा की सभी छात्राओं को आयवर्ग अनुसूचि (मापनी) वितरित की गई तथा दूसरे दिन घर से भरकर लाने के लिए कहा गया। दूसरे दिन 726 में 596 छात्राओं ने भरी हुई मापनी लौटाई जिसके आधार पर कुछ 98 बालिकायें मध्यमवर्गीय परिवारों की थी। वे अध्ययन में सहयोग करने के लिए भी सहमत थी। इन्हीं 98 बालिकाओं के 98 पिता एवं 98 माताओं से न्यादर्श परिपूर्ण हुआ। बालिकाओं के माता–पिता से उनके घरों में सम्पर्क करके स्थिति मापनी भरवायी गयी। समग्र के 16 प्रतिशत से न्यादर्श की रचना हुई। जो कि एक अच्छा प्रतिनिधि प्रतिशत है।

उपकरण

1. आर्थिक स्तर मापनी (आयवर्ग मापनी) – इसके द्वारा मध्यम आय वर्ग की बालिकाओं को चिन्हित किया गया।
2. स्थिति मापनी – बालिका की पारिवारिक एवं सामाजिक स्थिति ज्ञात करने हेतु विशेष रूप से निर्मित मापनी को स्थिति मापनी नाम दिया गया। आगे अध्ययन में बालिका की स्थिति मापनी को इसी नाम से जाना जायेगा। इसका प्रयोग बालिका और उसके माता–पिता के व्यवहार एवं दृष्टिकोण को ज्ञात करने के लिए किया गया।

स्थिति मापनी का निर्माण

एक और परिवार के सदस्य विशेषकर माता और पिता की सोच व्यवहार एवं दृष्टिकोण बालिका के सामाजिक स्थिति की परिचायक है, तो दूसरी ओर बालिका स्वयं अपनी स्थिति का आकलन किस प्रकार से करती है, यह भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।

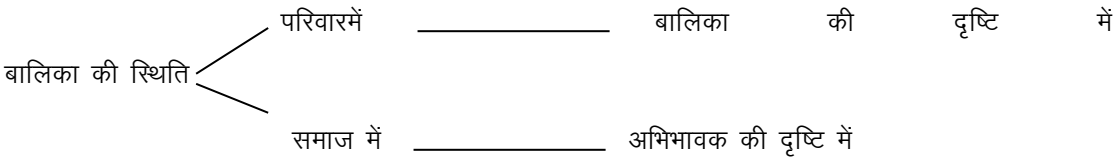

स्थिति मापनी का बिन्दुवार विवरण

1. मूलभूत आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति प्राथमिकताओं में लिंगभेद
   – भोजन /वस्त्र /आवास /स्वास्थ्य
2. विकासात्मक आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति प्राथमिकताओं में लिंगभेद
   – शिक्षा / मनोरंजन/अभिरूचि /आत्मनिर्भरता
3. सामाजिक आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति प्राथमिकताओं में लिंगभेद
   – धर्म/संस्कृति/सामाजिक पारिवारिक आयोजन/पारिवारिक सामाजिक दायित्व
4. वैधानिक आवश्यकताओं की प्रतिपूर्ति प्राथमिकताओं में लिंगभेद
   – सम्पत्ति अधिकार/विवाह/गोद लेना/तलाक

स्थिति मापनी में प्राप्तांकों के आधार पर बालिकाओं की स्थिति स्तर

स्थिति मापनी के प्राप्तांकों के आधार पर बालिकाओं की स्थिति के तीन स्तर है। जिसकी गणना के लिए 98 बालिकाओं के कुल प्राप्तांक 8281 के द्वारा मध्यमान एवं मानक विचलन ज्ञात किया गया जो कि तालिका क्रमांक 7.1 में दर्शाये गये हैं :–

तालिका क्रमांक–7.1 बालिका की स्थिति के स्तर

क्रमांक	बालिका की स्थिति के स्तर	कुल प्राप्तांक सीमा
1	उच्च स्तर	Mean + SD = Upper limit 84.50+12.72 = 97.22 (97 या उससे अधिक प्राप्तांक)
2	सामान्य स्तर	Between upper & lower limit (96 से 73 के मध्य प्राप्तांक)
3	निम्न स्तर	Mean - SD = Lower limit 84.50 - 12.72 तक = 71.78 (72 या उससे कम प्राप्तांक)

- To test the hypothesis formulated for the study t test was applied .05 level and 2 tailed distribution was selected. The calculated values of t test was tested with table value of t and significant difference was noted.
- It is observed that in all the four hypothesis the calculated value was less than table value and the t was not significant. Also null hypothesis was accepted in all four hypothesis & given below :

1. Condition of girl is not better in small family
2. Condition of girl is not better in nuclear family
3. Condition of girl is not better with growing age of the mother.
4. Condition of girl is not better when parents are highly educated.

बालिका की स्थिति पर मुक्त विचार

- शिक्षा से बालिका वैचारिक और आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होगी। बालिका की शिक्षा से पूरा परिवार शिक्षित हो जाएगा ऐसा विचार 31.6 प्रतिशत बालिकाओं, 34.6 प्रतिशत मातादों तथा 33.6 प्रतिशत पिताओं का रहा। शिक्षित बालिका को योग्य वर मिलेगा ऐसी सोच एक भी बालिका की नहीं रही जबकि लगभग 5 प्रतिशत अभिभावक योग्य वर के लिए बालिका को शिक्षित करना आवश्यक समझते हैं। एक भी माता–पिता ने नहीं माना कि शिक्षा से बालिका घर का प्रबन्ध सही तरीके से कर पाएगी।
- आज मध्यमवर्गीय परिवार की 82.7 प्रतिशत बालिकाओं के अनुसार उनके साथ घर में कोई भेदभाव नहीं किया जाता और यही उसके अभिभावकों का भी कहना है।
- अधिकांश बालिकाओं (77.5 प्रतिशत) तथा पिताओं (74.4 प्रतिशत) ने कहा कि बस दो ही बच्चे घर में हो चाहे लड़के हो या लड़की। ऐसा मानने वाली माताओं का (69.3 प्रतिशत) कुछ कम रहा। 24.4 प्रतिशत माताओं के अनुसार घर में एक लड़का एक लड़की होना चाहिये। दो लड़के हो या दो लड़कियां हो ऐसा कहने वाली माताओं को प्रतिशत 4 रहा। पढ़े लिखे परिवारों में यह मानने वाले कि केवल परिवार में लड़कें ही हो इनका प्रतिशत बहुत ही नगण्य होने से जागरूकता का प्रमाण मिलता है।
- 47.9 प्रतिशत बालिकाओं का कहना है, कि बेटी को पहले के समान ही महत्व मिलेगा तथा 53.0 प्रतिशत तथा 60.2 प्रतिशत पिताओं का भी यही विचार है।
- मध्यमवर्गीय परिवारों में बालिकाओं की स्थिति (मुक्त विचार) संरक्षित प्रश्नों में परिवार और समाज में बालिका की स्थिति के बारे में लगभग 57.1 प्रतिशत बालिकाओं, 48.9 प्रतिशत माताओं और 55.1 प्रतिशत पिताओं ने उत्तर दिए जबकि अन्य ने प्रश्न को अनुत्तरित छोड़ दिया। बालिका, माता एवं पिता के मुक्त विचारों में कुछ बिन्दु ऐसे है, जो बालिका की स्थिति के पक्ष एवं विपक्ष में आम धारणाओं को उजागर करते हैं।

नगरीय मध्यमवर्गीय परिवारों में बालिकाओं की स्थिति ज्ञात करने हेतु किये गये अध्ययन के संबंध में सुझाव एवं अनुशंसायें बिन्दुवार प्रस्तुत है।

- बालिकाओं में पूरी तरह स्वप्रत्यय की भावना विकसित हो।
- बालकों और बालिकाओं में परस्पर आपसी सहयोग की अभिवृत्ति पैदा हो।
- बालिकाओं को बालक के समकक्ष शिक्षा प्राप्त हो, जिससे आत्मनिर्भरता एवं स्वावलंबन का विकास हो।
- बालिकाओं में स्वयं के प्रति सकारात्मक रूख हो।
- बालिकाओं में निर्णय लेने की क्षमता का विकास हो।
- बालिकाओं में नेतृत्व की भावना पैदा की जाय।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि सम्पूर्ण समाज की भागीदारी से ही सामाजिक सोच में बदलाव आएगा माता, पिता, परिवार के अन्य सदस्य, शाला तथा शिक्षक और सम्पूर्ण पुरूष वर्ग जो किसी ना किसी तरह से बालिका से जुड़े हैं – इन सबको बदलना होगा। बालिका की स्थिति के उन्नयन के लिए जारी कार्यक्रमों में समाज के सभी घटकों को शामिल किया जाए तभी एक भेदभाव रहित वातावरण तैयार होगा।

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

EVOLUTION OF *ARTHANAREESWARAR TEMPLE* IN *TIRUCHENGODU*

K.KUMARESAN
Ph.D Research Scholar (Part-Time)
Department of History Manonmaniam Sundaranar University
Abishekapatti, Tirunelveli, Tamil Nadu 627012

Tiruchengodu is a city and municipality located in *Namakkal* District in *Tamil Nadu*.[1] The famous *Ardhanareeswarar* is situated in *Tiruchengode*.[2] This ancient temple is mentioned in the sangam literature *Silapathikaram* as *Neduvelkunru*.[3] It is also famous for *Chenkottu Velavar* Temple, which is situated in the same hill. According to the census report of 2011, the town had a population of 95,335.[4] In ancient days, *Tiruchengodu* was known as *Thirukodimaadachenkundrur* – one of the historical places in *Tamil Nadu*. It was also known as *Thiruchengottankudi Nageswaram*.[5] It enshrines the *Ardhanareeswarar* (man-woman) manifestation of Lord *Siva*, representing the unity of Lord *Siva* and *Parvati*, is enshrined in this revered hill temple of great significance, accessible by a motorable road; this is an ancient temple mentioned in the *Tamil* work, *Silappadikaram* as *Neduvelkunru.* The red color of the hill is the reason that it was called *Chengode*. This temple is regarded as the 4th of the 7 *Tevara Stalams* in the *Kongu* Region of *Tamil Nadu*. It is believed that *Kannagi* (*Silappathikaram*), after demolishing the city of *Madurai* by fire is called to *Sorgam* (*Heaven*) by her husband *Kovalan* and is in a wreath at the peak of the *Tiruchengode* hill.

Location of the Temple

Tiruchengode is in approximately 20 km from the City of Erode, 46 km from *Salem,* and 120 km from *Coimbatore*. It is a part of *Kongu Nadu* region of *Tamil Nadu*.[5] *Kongu Nadu* includes in it 24 villages, out of which *Poondhurai,* a suburb of *Erode* city is one of the important pilgrimage centre. West of *Cauvery* is *Melakarai Pundhurai* and east of *Cauvery* is *Kilakarai Pundhurai. Kilakarai Pundhurai* is famously known as *Thiruchengodu.* The word *"Thiruchengodu"* means beautiful, steeped hill in *Tamil* Language. *Tiruchengodu* is famous for its hill and the temple on the top. Ancient and historical *Thiruchengodu* is crowned with three primary God's named *Arthanareeswar, Chenkottu Velan* and *Athikesava Perumal.*

\Legend *Arthanareeswarar* Temple in *Tiruchengodu*

There is a popular Tamil legend relating to the emergence of the *Arthanareeswarar.* Once, the Gods and the *Rishis* (sages) gathered at Siva's abode and paid their respects to Siva and *Parvati*. However, one particular *Rishi, Bhringi,* had vowed to worship only Siva as the supreme deity. He therefore ignored *Parvati* and continued his worship of Siva, offering circumambulations to him. A furious *Parvati* cursed *Bhringi* that he would lose all his flesh and blood, and thereby reduced him to a mere skeleton. *Bhringi* could not stand erect in this form, and so the compassionate Siva blessed him with a third leg for support. Deeply hurt, *Parvati* decided to punish herself by undertaking severe austerities, which pleased Siva. He granted her the boon of uniting with him forever, thereby compelling *Bhringi* to worship her as well as himself in the form of *Arthanareeswarar.*[6] However, the sage assumed the form of a beetle, circumambulating only the male half, drilling a hole in the naval area of the deity, which separated the male half from the female half. Though not entirely leased, *Parvati* was amazed by his devotion to her Lord, reconciled with *Bhringi* and blessed him.

Story of *Tiruchengodu* Hills

As per mythology, *Adisheshan* (the serpent on whom Sri *Mahavishnu* rests) and Vayu

(lord of the winds) fought among themselves frequently to test their superiority. During one such struggle, against Vayu's severe wind,[7] *Adhiseshan* failed to hold on to the Mount Meru. Three portions of *Meru Malai* came down to earth with Adisheshan's blood strain. One such piece is this hill. Since it was believed to be red in colour due to Adisheshan's blood strain, it is also called as sencode. An interesting fact is that this hill itself is considered as the Lingam.

The Story of Nagagri Hills

Long ago *Adiseshan* and *Vayudevan* fought very often among themselves to prove their powers. Because of their fight many disasters took place. Sages gave an idea to both to show their powerfulness. [8] Accordingly Adisesha has to press and cover Mount Meru with his hood and Vayu has to release the pressure by his valour. But Vayu couldn't do so. In anger instead of blowing the air, he ceased the air. All the living beings fainted for want of air. Sages and Celestials requested Adisesha to release his hold. Vayu forcefully, that the top of the mountain with the head of Adisesha were thrown into earth on three places with flesh and blood. One is *Tiruchengodu,* the next Srilanka and the other is *Nagamalai* in *Tiruchengodu*. In front of this hill, on the west side is the statue of a large *Nandhi* – seven feet in length and four feet in height.[9]

Upanisad's Views in *Tiruchengodu*

Tiruchengodu is one of the most sacred temples of *Tamil Nadu*. It is considered superior to all the other eminent temples.[10] While *Tiru Arur* confers salvation or *mukti* to one who is born there, *Tiruchengodu* confers salvation to one who merely thinks of it. No wonder this temple is the most important, as it points out the easiest way to salvation. The tradition of *Tiruchengodu* is that the Supreme Power appeared there is long time ago to remove the ignorance and ego of *Brahma* and *Vishnu*, the two great divine powers when they quarreled among themselves as to who was superior.[11] This troy has its origin in the Kenoupanishad where we find it in another form. Keno Upanisad is the second of the ten principal Upanisad commented upon by *Sankara* power and show its distinction from the created world latterly they remove their ignorance and ego.

The concept of *Arthanareesawara in Tiruchengodu*

Arthanareeswarar is a composite androgynous form of Siva and his consort God's *Parvati*. This form is shown as a fusion of half-male and half-female forms, split down in the centre. The right half is depicted as Siva, while the left half shows the female form of God's *Parvati*. The very name *Arthanareeswarar* implies 'the Lord who is half-woman'. [12]This form of Siva is also referred to as *Ardhanarinateshwara, Gaureeshwara, Naranaari, Parangada* and *Ammiappan.* Since *Arthanareeswarar* represents the perfect synthesis of male and female forms, it also embodies the *Prakriti* and the *Purusha*, the feminine and masculine energies of the cosmos and also illustrates how *Sakti,* the Sacred Feminine, is inseparable from Siva, the male principle of God. This form also symbolizes the all-pervasive, all-enduring nature of Lord Siva.

The Spiritual Concept

The concept of *Arthanareeswarar* indicates that 'totality lies beyond duality' and the essentially equal nature of both the masculine and feminine energies. It talks of both being part of the Supreme Being, being two equal parts, making the whole. Siva's half part holding a rosary indicates asceticism, while *Parvati*'s half holding the mirror is an embodiment of the highly material and illusory world.[13] The fusing of these two opposites indicates that both the material and spiritual spheres have to coexist in one's life, for it to be complete. *Siva* and *Sakti* are inseparable and interdependent. This indicates that both these opposing forces are one and the same and cannot be regarded as two individual identities.

Historical Significance of the Temple

In *Silapathikaram, Ilango Adigal* referred *Tiruchengode* as "*Chengodu"* and that "it has numerous holy ponds and enjoys popularity and

prosperity". *Kannagi* after burning *Madurai* finally reached *Tiruchengodu* hill and she was taken by *pushpak viman* and went to heaven and *kannagi vizhla* is celebrated with pomp and glory every year. *Sambandar* composed the *Tiruneelakandapatikam* here, to help rid fellow travelers of an affliction. *Muthuswamy Dikshitar* has sung of this shrine in *Ardhanareeswaram* in *Kumudakriya.*[18] The *Tiruchengottuvelavar* shrine to Lord *Subramanyar* attracts a number of pilgrims. There is a big sanctum for Lord *Vishnu* with *Sree Devi* and *Bhoodevi. Saptha mathurs* are also installed in the temple. *Navagraha* are also installed in the temple.[14] While we enter to the left side *Ganapathi* is installed in the open, facing east, with *Nagaraja* and *Nagayakshi* on either side.

Sengodu Velavar Sannathi

Acclaimed as *'Kodimada Chenkunrur'* in the *Thevaram* verses, T*hirucchengodu* is one of the foremost places of worship of Lord *Siva*. The temple at *Thirucchengodu* faces west and is atop a hillock. The name *Sengodu* comes from the fact that the hill appears red in colour.[15] The temple is at a height of about 1900 feet above sea level. One can reach the top on foot by climbing 1250 steps or by road transport through the paved roads. There are several *mantapams* or resting spots for devotees en route to the top.

Adi Keshava Perumaal

Maha Vishnu as *Adi Keshava Perum*aal has an exclusive temple here. During the auspicious days of *Brahmotsavam, Adikeshava Perumal* is venerated with an extravagant 10-day festival, that commences with flag-hoisting and culminates in *Kalyana Vaibhavam* and the car festival, *Ther*. On the night of *Shivaratri*, four iterations of *pooja* at different times of the day (popularly known as *nalu-kala pooja*) are offered, which is of special significance. On the 11th day of the lunar cycle (*Ekadashi*), *Adikeshava Perumal* blesses his devotees with *Garuda Sevai.*

Lord *Ardhanareeshwarar* is considered to be the Lord of the birth star, *Sadhayam.* The fortunes of those born under *Sadhaya Nakshatram* are said to be in his hands and hence, special *pooja* is offered on these days. Devotees can offer their prayers to the Lord on this day to overcome any misfortune.[16]

Navagraha

The *Graha* (Sanskrit: *Graha* "seizing, laying hold of, and holding"or *Navagraha* (Sanskrit, "nine houses") are deities in Hinduism and Hindu astrology. There are nine *Graha*. They include the Sun, the Moon, Mars, Mercury, Jupiter, Venus, and Saturn, and the ascending and descending lunar nodes, respectively known as *Rahu* and *Ketu.*[17]

The *Navagraha* are:

1. *Surya* (a.k.a. Ravi), the Sun
2. *Chandra* (a.k.a. Soma), the Moon
3. *Mangala*, Mars
4. *Budha,* Mercury
5. *Guru* Jupiter
6. *Shukra*, Venus
7. *Shani* Saturn
8. *Rahu*
9. *Ketu*

Temples that incorporate or are dedicated to one or all nine of the *Navagraha* are found in different parts of India, such as in *Tamil Nadu.*[18]

Saptha Kannimar Padal

The *Saptha Kannimar Padal* is one of the sub-sections of *Arul Nool* which was the secondary scripture of *Ayyavazhi.* The author of the content is unknown. This contains the event's background and reason for the birth of the seven virgins in the world. Below are the names of *Saptha Kannimar:*[19]

1. *Brameshwari*
2. *Gowmari*
3. *Varaghi*
4. *Vaishnavi*
5. *Saamundi*
6. *Maheshwari*
7. *Indhirani*

Pali Peedam

Pali Peedam - Pali means sacrificing. Temples have *peetam* between *Rajagopuram* and *Dwajastambam,* where cooked rice with water is

offered by priests to the guarding deities (*Kshetrabalakas*), after the *naivedyam* and *Aradhanam* to the *Pradhana Devatha.* Bhakthas entering the temples shall give away the six animal qualities, by prostrating before this *Pali Peetam*, thereby approach the God with open mind. *Giri* offers *Pali peetam* made of black stone made with precision as per agama standards for installing in new temples. This blog is collection of Hill Temples from all ages from different religions and countries. I always wonder why temples were built on top of mountains. My strong belief is that benefits of meditation and *pranayama* are obtained as such when we climb high mountains.[20]

Kodimaram **(Flagstaff)**

Hindu Agama Shastras compare a Temple to the human body. Just as an individual soul is enveloped by five *kosas* or sheaths - (*Annamova, Pranamaya, Manomaya*, *Vynanamaya* and *Anandamaya*) - the Deity installed in the Temple (representing the Supreme Spirit) is also veloped by five *prakaras* Just as our gross body has five sections - head, neck, chest, legs and feet - a Temple also has five corresponding sections.[21] The *Garbhagriham* or sanctum Santorum represents the head; the Sanctum is the Soul or the *Jiva* of the body; the *Vimana* over the anctum represents the tip of the nose. *Ardhamandap* in front of the Sanctum represents the neck; Maha *Mandapam,* the chest; *Prakaras* around the Sanctum represents our five senses: the *palibida* where *nivedana* is offered to the deity represents the naval; the *Kodimaram* represents the *Jeevadhara;* and the *Gopura,* the main gateway of the temple, represents the feet.[22]

The main parts of a temple are:

1. *Garbhagraha* (Sanctum Sanctorum) containing the image of God.

2. The *Vimana* over the Sanctum.

3. *Ardhamandap* in front of the Sanctum.

4. *Prakaras* around the Sanctum.

5. The *Gopura,* the main gateway of the temple.

Indian temple is only a reflection of the physical form of the human body. According to the *Tirumular* "our body is a temple". According to the *Kathopanishad* "This body of ours is a temple of the Divine."

Sacred Tree (*Illupai Maram*)

In ancient times, when the Holy Ocean of milk was churned, it caused tremors in the earth and some of the milk scattered onto the earth's surface. These drops fell on the earth as exotic and sacred seeds from which divine trees and plants grew. These were used as medication to cure incurable diseases. One such sacred tree for this temple is the Olive tree, close to where the shrine is situated. The *punnai* tree, close to the *Perumal* shrine, is also one such sacred tree. The first step of the mountain pathway starts at the place where *Gajamukha Pillayar* is in south and *Aarumuga swamy* in the north. This place is called the base of the mountain (*malai adivaaram*). Passing through the stairway, we arrive at the *Sengundhar Mandapam*, and then at the *Kaalathisuvaamigal mandapam, Thirumudiyar Mandapam*, and finally arrive at the *Thaili mandapam*. To the west of *Thaili mandapam*, there is a *Nandhi,* 7 feet wide and 4feet high, facing the *Gopuram* tower. The part called as *pasuvan kovil* , place which is behind this is known as *Naagamalai.*

Nine Navagraha **Temple**

Navagraha Temples in *Tiruchengodu* are the 9 temples dedicated to *Navagraha*-the nine celestial planets of Hindu astronomy. These Nine *Navagraha* temples are located near *Thiruchengodu* in *Namakkal* district. Each of these *Navagraha* shrines is situated in a different village and is dedicated to one of the 9 *Navagrahas*. That is the first temple *Sooriyanar Kovil* is dedicated to lord *Surya* while the second temple *Thingaloor Chandra Navagrahastalam* is dedicated to lord *Chanda* likewise. However, an interesting aspect is that majority of the temples of the enshrine lord *Siva* as the primary deity. Among the 9 temples, *Suryanar* temple, dedicated lord *Surya*, is the only temple where Lord *Surya* is worshipped as the principal deity. This temple is dedicated to the sun

god and all the remaining 8 *Grahas-Chandra* (moon), *Chevvai* or *Mangal* (mars), *Budhan* (Mercury) , *Guru* or *Brihaspati* (Jupiter), *Shukra* (Venus), *Shani* (Saturn), *Rahu* and *Kethu.* Below is the list 9 temples dedicated *Navagraha* temple. [23]

Notes and References

1. *Tiruchengodu Manmiyam,*p.p.14-16.
2. Rangacharya. V., A Topographical list of inscriptions of the Madras Presidency (Collected till 1915 A.D.),Vol. II, Madras, 1905..p.112.
3. Ibid,p.126.
4. Robert Sewel, List of Inscriptions and Sketch of the dynasties of Southern India, Archaeological Survey of Southern India, Vol II, Madras, 1971, p.124.
5. Sakalathikara of Sage Agastya, Tanjore, 1985, p.134.
6. South Indian Inscriptions, Vols VI, XIV, XIX and XXIII, Oriental Manuscripts Series, Madras, 1932, pp.145-146.
7. South Indian Temple Inscriptions, Madras, 1957, p.123.
8. Srithar,T. Sri., (ed.), Alagar Koil Kalvettugal, Tamil Nadu Archaeological Department.Chennai, 2010,p.134.
9. Srithathuvanithi, Part I & II, Tanjore, 1978,p.134.
10. Subramaniam,T.N. (ed.), South Indian Temple Inscriptions, Vol III, part II, Goverment Oriental manuscripts Library, Madras, 1957,p.235.
11. Taylor, Oriental Historical Manuscripts, Vol.II, Madras, 1835.p.223.
12. Ten Pandya Copper Plates
13. Thirty Pallava Copper Plates
14. Thirukkoil Thalavaralaru, Kodumudi, 2008.
15. Velvikudi Copper Plates
16. Maclean, C.D., Manual of Administration of Madras Presidency, Vol.I. Madras: Government of Madras, 1885,p.156.
17. Baliga, B.S. Studies in Madras Administration, Madras: India Press, 1960,p.252 .
18. Dayalan, D. Early Temples of Tamil Nadu: Their Role in Socio-Economic Life, New Delhi: Harman Publishing House, 1992.p.124.
19. Devakunjari, D., Maduri Through the ages (from the earliest times to 1801 AD) Society for Archaeology, Historical and Epigraphical Research. Madras, 1979.,pp.145-146.
20. Dikshitar V.R. Ramachandra, Selected South Indian Inscriptions' Tamil, Telegu, Malayalam and Kannada, University of Madras, 1952,p.345.
21. Robert Sewell, Historical Inscriptions of Southern India, University of Madras, Madras, 1932,p.321.
22. Saran, Prem. Yoga, Bhoga, and Ardhanarisvara: Individuality, Wellbeing and Gender in Tantra. London: Routledge, 2008,p.147.
23. Taylor, Vllliam, Oriental Historical Manuscripts, Madras, 1835.

ISSN : 2394-3580 Swadeshi Research Foundation Vol. – 5, No. - 6 April 2018
A Monthly Journal of Multidisciplinary Research (UGC APPROVED Multidisciplinary Journal Sl.No-108, Journal No-62711)
International Peer Refereed, Review, Indexing & Impact factor-3.9 Research Journal

YOGA FOR WORKERS

Dr. Anchal Agrawal
Yoga therapist ,CHC Wadhwan, Dist surendranagar, Ministry of AYUSH

Yoga is an important part of ancient Indian culture and philosophical system and also invaluable heritage that originated in India over 5000 years ago. It plays an important role in prevention, preservation and promotion of Health. However as a person practices yoga there are several changes in normal physiology, and as a result there are therapeutic benefits as well as benefits in rehabilitation.

Lord Krishna holds that the performing of action skilfully is called yoga. The great sage Patanjali evolved eight stages of yoga. These were presented as aphorisms or sutras, in Sanskrit.

All the sectors of business; (e.g.) private, public, corporate etc. have been emphasizing the role of good personalities for selection of their human resources in order to achieve and maintain their targets of day to day business. Good holistic personality play an important role in marketing, business needs, administrative set-up of executives, political leadership, teaching professionals at schools, college and university level etc.

ABSTRACT : Obesity is a global epidemic . There are rising rates of obesity and its associate disorder. Obesity, defined as Body Mass Index = Weight in kg / Height in meter(kg/m^2), it is associated with a myriad of disorders such as cardiovascular disease, diabetes, hypertension stroke, sleep apnoea, depression, reduced quality of life and several cancers. obese employees have been reported to have the most short-term disability, days, cost and least productivity compared with those with lower BMI categories. The work environment has also shown to contribute to the obesity epidemic, such “obseogenic” work environment includes shift work, job stress and long hours.

Material and methods:-This study was conducted to assess the effect of Yogic package on Obesity. Fifteen male subject were selected by purposive sampling from community health centre. The age of the subject ranged from 30 to 45 years. Practice time of the yogic package was one hours morning at 7.00 to 8.00 am, daily for 4 months. The pre-post test experiment group design has been used in present study. Data was analysed by t-test.

Result :- We observed a statistically significant decrease BMI after 3 months of yoga practice, also we observed a decrease in total cholesterol, VLDL triglycerides and an increase in HDL cholesterol. which is not statistically significant pre mean 29.004 and post mean 26.326, N=15 and t-test value is 3.077.

Conclusion:-The training of yogic package revealed that there is a significant improvement in obesity BMI. The aim of this study was to determine the rate and factors of overweight and obesity among.

YOGA ANATOMY

While Western medical anatomy deals with the concept of only one physical body , yoga Chikitsa involves a study and consideration, if only conceptual, of the Pancha Kosha, five Bodies of man. Yoga Chikitsa must be deeply concerned with the study and knowledge of the psychic chakras, Prana Nadis and Bindus ,as well as an application of yoga Chikitsa that takes in the consideration of many concept not found in western terminology. The study of yoga anatomy would borrow heavily from terms and concept used in Ayurveda, Samkhya and Yoga.

YOGA PHYSIOLOGY

In yoga chikitsa, a wider knowledge of the physiology or function of the five bodies would be

a necessary study and application of the working of the various Koshas in harmony or symbiosis. Knowledge of the Trigunic nature, Vasanas, and Doshas, would be a necessity and most important.Yoga anatomy and physiology should be a compulsory study for anyone practising yoga chikitsa professionally.

YOGA PHILOSOPHY

Yoga has a wholistic, universal concept of life and a very positive outlook on the spiritual evolution of man. Many consider yoga Darshana to be more than a Philosophy, rather an insight into the true nature of man and his relationship with the universe. This relationship is important as the basic concept for yoga chikitsa. Real healing is likely to take place on a permanent basic only if the patient has a yogic view.

INTRODUCTION OF THERAPY

Yoga chikitsa is a remedial medical science as old as the concept of yoga itself. there is only one disease duality. Its cure is a return to universal oneness.All the resources (means or techniques) of Yoga , Yamas & Niyamas, Satkarmas, Asanas, Pranayamas, Mudras & Bandhas, Meditation, Dietary means used to transform (treat / cure) the diseased state to healthy state of human body, then that collective use of yogic practices constitute Yogic Therapy. Thus, Yoga therapy is defined as the process in which all the resources of Yogaare being used to transform (treat / cure) the diseased state to healthy state of human body.Presently, the need of the hour is to define the generalized principles of Yogictherapy in the context of traditional claims of Hatha yogic practices, Ayurveda based principles and latest scientific terminology of medical research to provideholistic and scientific firm footings to the field of yogic therapy in modern times.Thus, the present research study will define the principles of prescribing a particular life style modifications (Behavioural and dietary norms) as well as selection of a specific Yogic practices; viz. Shatkarma, Asana, Pranayama, Mudras, Bandhas and Meditation etc.

- In spite the latest trend of research and investigations of Yoga therapy, all the principles of yoga therapy as laid by Swami Kuvalyananda and Dr. Vinekar (1994) in their book titled “Yogic Therapy- Its Basic Principles and Methods” have not been observed. Moreover, the investigators have not been explaining the principles of prescribing:
- Yoga based behavioural norms.
- Specific Shatkarmas, Asanas, Pranayamas, Mudras & Bandhas and Meditation.
- Specific yoga based dietetics of indicated & contraindicated food articles with their principles and rules of their intake.

Role of yogic practices

Shatkarmas:-One should have learnt the various practical shatkarmas to maintain the proper pranic flow at physical, mental, emotional and intellectual levels. On should undergo the overhauling practice of Varisar Dhauti for two times a year to maintain the balance of the physical doshas with respect to seasonal change. The shatkarmic practice will also help internal purification of bodily organs for proper functioning of mental, emotional & intellectual faculties of personality.

Asanas:-Physical expressions of a person is a important aspect of holistic personality. This can be developed and maintained by the practice of Surya Namskar, practice of balanced schedule of asnas involving holistic aspect of body with standard norms & methodology. This will help in overcoming conflicts at physical, physiological & psychological levels and thereby providing physical & mental stability.

PRANAYAMA:-The mental, emotional and intellectual faculties of a person can be developed & maintained by the proper practice of Pranayama. The nerve channels can be purified by Anuloma-Viloma/Nadi Shodhan Pranayama as well as by the proper practice of Bhastrika Pranayama. The beautification of skin can be improved by the practice of Shitali/Shitkari Pranayama. The overall mental and emotional stability can be improved by

the practice of pranayamas. The negative effects of stress & strain can also be counteracted by pranayamic practices.

One should be having attitude of reverent devotion & continued efforts for long term duration for getting success. Moreover, one should be one-pointed towards the goal of the task.

EPIDEMIOLOGY & HEALTH ASSOCIATED RISKS

Current estimates suggest that the global prevalence of obesity has increased by two fold from 1980 to 2014. A major proportion of Diabetes, Heart Disease, hypertension, stroke, Osteoarthritis, and cancer burden may be attributed to Overweight and obesity.

CAUSES &RISKS FACTORS FOR OVERWEIGHT/OBESITY

- Increased intake of energy-dense food that are high in fat, carbohydrates
- Overeating and Irregular food habits
- Lack of physical activities due to sedentary life style
- Genetics , Medical reasons or psychiatric illness
- Day – time sleeping

ASSESSING OVERWEIGHT/OBESITY

- According to the National Institute for Health and Clinical Excellence(NICE), Overweight and obesity are assessed using Body Mass Index(BMI). It is defined as a person's weight in Kilograms divided by the square of his / her height in meters(kg/m^2).

Body Mass Index(BMI)=Body weight (in Kilograms)
Height (in meters)^2

It is used because, for most people , BMI correlates with their proportion of body fat, as a person having BMI of 25 to 29.9kg/m is considered 'Overweight' and 'Obesity' as a BMI of 30kg/m or more. This classification accords with that recommended by the World Health Organization(WHO)

Classification of overweight and obesity among adults

Classification	BMI(kg/m2)	Risk of co-morbidities
Underweight	Less than 18.5	Low (but risk of other clinical problems increased)
Healthy Weight	18.5-24.9	Average
Overweight (or pre-obese)	25-29.9	Increased
Obesity, Class I	30.34.9	Moderate
Obesity, Class II	35.39.9	Severe
Obesity, class III (severely obese)	40 or more	Very severe

Risk factors and Their Prevention

Behavioral Risk Factors	Physiological Risk Factors	Diseases Outcomes
Unhealthy Diet	BMI(Obesity)	Heart Diseases
Physical Inactivity	Blood Pressure	Stroke
Tobacco use	Blood Glucose	Diabetes
Alcohol Use	Cholesterol	Cancer
Stress	Weight loss	
Primary Prevention	Secondary Prevention	Tertiary Prevention

Do's

- Take low-fat and low-calorie food items.
- Take more proteins to stay longer without food.
- Use warm water for drinking.
- Steamed, boiled and baked vegetables rather than fried.
- Include lemon in diet and drinks.
- Brisk morning walk of 30 minutes.
- Yoga and meditation to manage stress and fatigue.

Don'ts

- Watching TV while having food.
- High carbohydrate vegetables like – potato, rice etc.
- More sugary or sweet products, more dairy products, fried and oily foods, fast food, excess salt.
- Sedentary habits.
- Excessive sleep.
- Alcohol and Smoking.
- Salty foods or excessive salt in meals.

Treatment Package

Sl. No.	Name of yoga practice	Duration
1	Start : Om chanting, Prathana mantra (universal pryer)	2 min
2	Standing postures: 1 . Tadasana 2. Katichakrasana 3. Trikonasana 4. Konasana 6. Padahastasana	1 min 1 min 1 min 1 min 1 min
3	Supine postures: 1. Pavanmuktasana	1 min
4	Kriya: 1. Kunjal 2. Kapalbhati	5 min 5 min

5	Pranayama series: Nadishodhana 2. Suryabhedi 3. Bhastrika	6 min 3 min 3 min
6	Relaxation technique: 1. Savasana 2. Dhyana	

Research methodology

Research design- in the present research the single group pre- post test design.

Sample size-15.

Independent variables- yogic practice.

Dependent variables- obesity.

Table

	Mean	N	SD	SEM	T- Value
Pre	**29.004**	**15**	**2.25**	**0.58**	
Post	**26.326**	**15**	**2.50**	**0.64**	**3.077**

Summary :

- Yoga poses improve overall wellbeing cardiorespiratory endurance, muscle strength, and flexibility. They can even influence hormones and neurotransmitters.
- Yoga has an important role to play in the prevention of diseases. While this is especially important in the elderly, it is also important in all important vulnerable people like highly stressed persons whose immune function may be compromised, or those whose lifestyle (I.e., diet , exercise, and relaxation) is unhealthy.
- Yoga has important therapeutic benefits.this has been revealed in certain –life style related disorders (e.g. bronchial asthma, types 2 diabetes mellitus, rheumatoid arthritis, coronary artery disease, obesity), life threartening and degenerative disorder(e.g. cancer, HIV, psychiatric disorders),occupation-related disorders, and those related to development and aging.
- Yoga practice has several applications in rehabilitation, some of which are scientifically proven, for example in mentally challenged children, physically challenged persons, the addicts, the elderly, post-traumatic stress disorders, and impaired vision.

Conclusion :

To sum up, are linked to common risk factors, such as use of tobacco, alcohol, unhealthy diet, and physical inactivity. Development of these diseases and risk factors associated with these can be preventive measures for these diseases.

Reference :

1.Word Health Organization. Obesity and Overweight-fact sheetN°311; 2014. Available from: http:www.who.int/mwdiacentre/factsheets/fs311/en/

2.World health organization. 10 fact o obesity. 2013. Available from: http:www.who.int/mwdiacentre/factsheets/obesity/en/

3. Healthy weight, Healthy Lives: A toolkit for developing local strategies
4.http://www.who.int/mediacentre/factsheets/fs311/en/obesity and overweight updated January 2015
5.National Institute for health and clinical Excellence, 2006
6. Research Publications/Patanjali Research Foundation Patanjali Yogpeeth, Haridwar, India(Sep 2007- Jun2015)